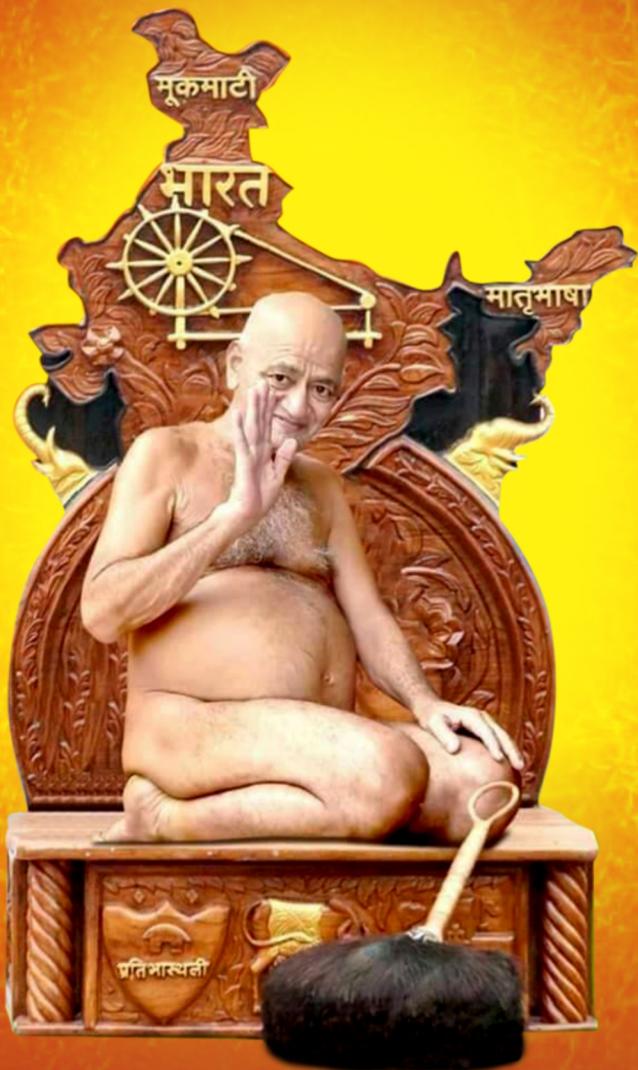


त्रिज पूजा



मूलनायक 1008 श्री पार्श्वनाथ भगवान
बिजौलिया, भीलवाड़ा (राज.)

कुन्दकुन्द परम्परा के उन्नायक,
दिगम्बर जैन सरोवर के राजहँस, रत्नत्रय तीर्थ परम पूज्य



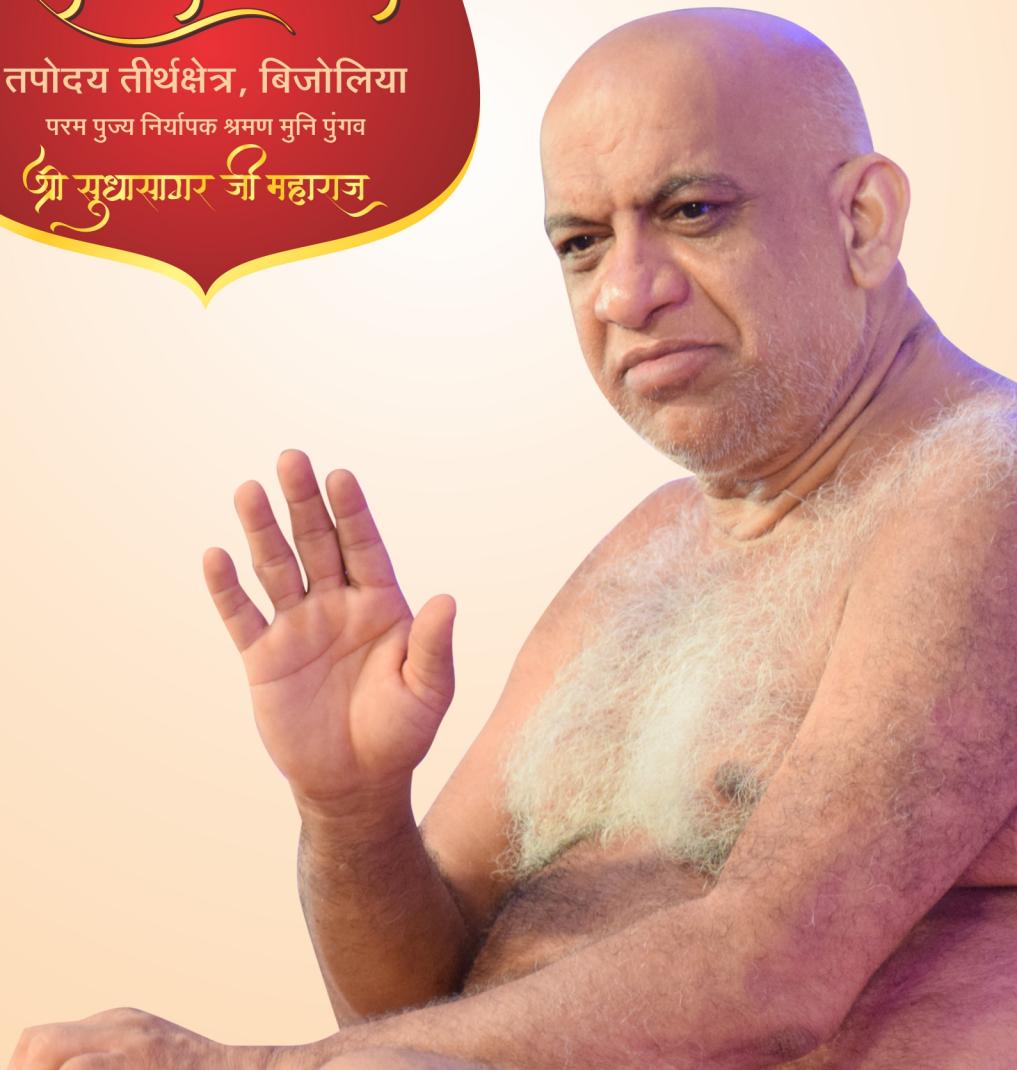
श्री 108
विद्यासागर जी महाराज

28 गुँथावक गुंगाकार शिविर

तपोदय तीर्थक्षेत्र, बिजोलिया

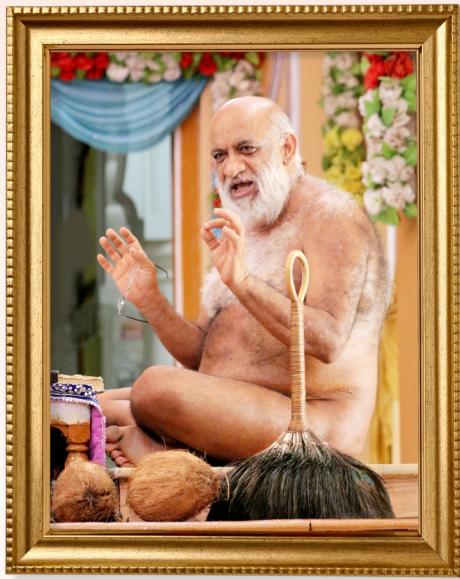
परम पुज्य निर्यापक श्रमण मुनि पुंगव

श्री गुद्धायागर जी महागज



श्रावक संस्कार शिविर के जनक

श्री गुद्धायागर जी महागज गंगा



प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धारक, वास्तुविद, पुरातत्त्व - सरंक्षी,
नव तीर्थ - प्रणेता, साक्षात् तीर्थ-स्वरूप, ज्ञान रथ के
सारथी, विद्या गौ के सुदोग्धा, श्रमण संस्कृति - सूर्य,
मिथ्यात्व भज्जक, शान्ति-धारातिशय निर्दर्शक, श्रावक
संस्कार शिविर जनक, जिज्ञासा - समाधान - प्रतिपादक,
विद्वत्कल्पतरु, विद्यार्थि-पितृकल्प, आगम के यथार्थ
उपदेष्टा, वर्तमान काल के समनतभद्र, समयसार -
शिक्षक, भक्त-वत्सल, महोपकारी, महान्तपोमार्तण्ड,
रिद्धि - सिद्धि भक्तामर मंत्रो के निर्दर्शक,
ज्ञानध्यान तपोरक्त, प्रखर चिन्तक, तर्क - वाचस्पति,
विपथ - गामि-चक्षुरुन्मीलक, वाग्भी, मनोज्ज, ऋषिराज,

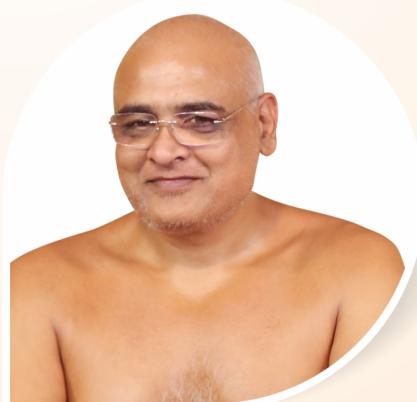
निर्यापक श्रमण, जगत्पूज्य मुनि पुंगव
108 श्री सुधासागर जी महाराज



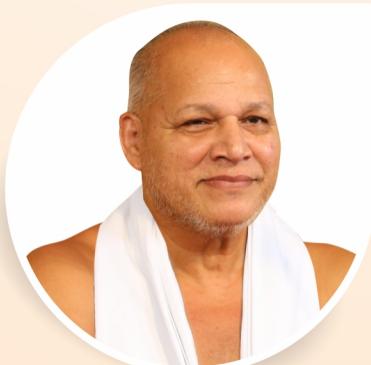
निर्यापक श्रमण, जगत्पूज्य मुनि पुंगव 108 श्री सुधासागर जी महाराज



पूज्य मुनि श्री 108 निष्कम्प सागर जी महाराज



पूज्य मुनि श्री 108 महासागर जी महाराज



पूज्य क्षुल्क श्री 105 धैर्यसागर जी महाराज



पूज्य क्षुल्क श्री 105 गम्भीरसागर जी महाराज

विषय सूची

स्तुतियाँ			
णमोकार-मन्त्रः	1	अनंतब्रतपूजा	46
सुप्रभात-स्तोत्रम्	1	प्रत्येक टौंक के अर्घ्य	48
दर्शनपाठः (दर्शनं देव)	2	नंदीश्वरपूजा	51
प्रातःकालीन स्तुति	3	सोलहकारण पूजा	53
दर्शन पच्चीसी (तुम निरखत)	4	पंचमेरु पूजा	55
दर्शनस्तुति (सकलज्ञेय)	5	दशलक्षण पूजा	56
दर्शन स्तुति (अतिपुण्य)	6	रत्नत्रयपूजा	60
दर्शन स्तुति (प्रभुपतित)	7	सम्यगदर्शन पूजा	61
देव स्तुति (अहो जगतगुरु)	7	सम्यगज्ञान पूजा	62
नित्य पूजाएँ		सम्यक्चारित्र पूजा	63
मङ्गलाष्टकम्	8	क्षमावाणी पूजा	65
माघनन्दिकृत-अभिषेक-पाठः	9	श्री चौबीसी पूजा	67
जलाभिषेक पाठ (जय जय)	11	श्री आदिनाथ पूजा	69
बृहत्-शान्तिधारा	13	श्री चन्द्रप्रभ पूजा	71
विनय पाठ	15	श्री शीतलनाथ पूजा	74
नित्यपूजा-पीठिका	16	श्री शांतिनाथ पूजा	77
परमर्षि-स्वस्ति-मङ्गलपाठ	18	श्री नेमिनाथ पूजा	79
देव-शास्त्र-गुरु पूजा (प्रथमदेव)	18	श्री पार्श्वनाथ पूजा	81
देवशास्त्रगुरु पूजा (केवलरवि)	21	श्री वर्धमान पूजा	84
समुच्चय पूजा (देव-शास्त्र-गुरु)	24	अर्घ्यावली	86
नवदेवता (अरिहंत सिद्धाचार्य)	26	शांतिपाठ	91
नवदेवता (अरि चार-घाति)	29	स्तुतिपाठ	92
लघु-चैत्यभक्तिः	31	तत्त्वार्थ सूत्र	94
सिद्धपूजा (संस्कृत)		श्री भक्तामर स्तोत्र पूजा	102
१. द्रव्याष्टकम्	32	भक्तामर माहात्म्य	110
२. भावाष्टकम्	34	पंचबालयति तीर्थकर पूजा	111
सिद्धपूजा (हीराचंद)	35	सप्तर्षि पूजा	114
सिद्धपूजा (भाषा)	37	आचार्यश्री विद्यासागर पूजा	116
पञ्च परमेष्ठी पूजा	39	श्री सुधासागर पूजा	118
दीपावली पूजन विधि	41	जिनसहस्रनाम-स्तोत्रम्	121
गौतम गणधर पूजा	43	भक्तामर-स्तोत्रम्	131

महावीराष्ट्रक-स्तोत्रम्	136	श्री विमलनाथ भगवान	185
छहढाला	137	श्री अनंतनाथ भगवान	185
भक्तामर स्तोत्र (भाषा)	145	श्री धर्मनाथ भगवान	186
स्वयंभूस्तोत्र (भाषा)	150	श्री शांतिनाथ भगवान	186
निर्वाणकाण्ड (भाषा)	151	श्री कुंथुनाथ भगवान	186
बैराग्यभावना	153	श्री अरहनाथ भगवान	187
बारहभावना (राजा राणा)	155	श्री मल्लिनाथ भगवान	187
बारहभावना (मंगतराय)	155	श्री मुनिसुत्रतनाथ भगवान	187
सामायिकपाठ (प्रेमभाव हो)	159	श्री नमिनाथ भगवान	188
भावना बत्तीसी (मेरा आत्म)	161	श्री नेमिनाथ भगवान	188
मेरी भावना	164	श्री पाश्वनाथ भगवान	188
समाधिमरण (छोटा)	165	श्री महावीर भगवान	189
समाधिमरण (बड़ा)	167	श्री भरत भगवान	189
समाधिभावना	172	श्री बाहुबली भगवान	189
आत्मकीर्तन	172	श्री अरहंत भगवान	190
भावनागीत	173	श्री पाश्वनाथ भगवान	190
तुमसे लागी लगन	173	श्री महावीर भगवान	190
आलोचना पाठ	174	श्री शांतिसागर महाराज जी	191
श्रावक प्रतिक्रमण	176	श्री विद्यासागर महाराज जी	191
आचार्य वंदना	179	श्री सुधासागर महाराज जी	192
आरती		श्री बीस तीर्थकर पूजा	192
पंच परमेष्ठी भगवान	181		
श्री आदिनाथ भगवान	181		
श्री अजितनाथ भगवान	181		
श्री संभवनाथ भगवान	182		
श्री अभिनंदननाथ भगवान	182		
श्री सुमतिनाथ भगवान	182		
श्री पद्मप्रभ भगवान	183		
श्री सुपाश्वनाथ भगवान	183		
श्री चंद्रप्रभ भगवान	183		
श्री पुष्पदंत भगवान	184		
श्री शीतलनाथ भगवान	184		
श्री श्रेयांसनाथ भगवान	184		
श्री वासुपूज्य भगवान	185		

णमोकार महामन्त्र

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्ञायाणं, णमो लोए सब्ब साहूणं ॥

चत्तारि मंगलं अरहंत मंगलं सिद्ध मंगलं साहु मंगलं
केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ।

चत्तारि लोगुत्तमा अरहंत लोगुत्तमा सिद्ध लोगुत्तमा
साहु लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरहंत सरणं पव्वज्जामि
सिद्ध सरणं पव्वज्जामि साहु सरणं पव्वज्जामि
केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ।

एसो पंच णमोयारो, सब्बपावपणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥



सुप्रभात-स्तोत्रम्

शार्दूलविक्रीडितम्

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे,
यद्विक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे ।
यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः, पूजाद्भुतं तद्भवैः,
सङ्गीतस्तुतिमङ्ग्लैः प्रसरतां, मे सुप्रभातोत्सवः ॥१॥

वसन्ततिलकाछन्दः

श्रीमन्-नतामर-किरीट-मणिप्रभाभि-
रालीढपाद-युग ! दुर्ब्धर-कर्मदूर ।
श्रीनाभिनन्दन ! जिनाजित ! शम्भवाख्य !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥२॥

छत्रत्रय-प्रचल-चामर-वीज्यमान !
देवाभिनन्दनमुने ! सुमते ! जिनेन्द्र !
पद्मप्रभारुणमणि-द्युति-भासुराङ्ग !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥३॥

अर्हन् ! सुपाश्व ! कदली-दलवर्ण-गात्र,
प्रालेय-तारगिरि-मौक्तिक-वर्णगौर !
चन्द्रप्रभ ! स्फटिक-पाण्डुर-पुष्पदन्त !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥४॥

संतप्त-काञ्चनरुचे ! जिनशीतलाख्य !
श्रेयन् ! विनष्ट-दुरिताष्ट-कलङ्क-पङ्क !
बन्धूक-बन्धुररुचे ! जिनवासुपूज्य !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥५॥

उद्धण्ड-दर्पक-रिपो ! विमलामलाङ्ग !,
स्थेमन्ननन्तजिदनन्त-सुखाम्बुराशे ! ।
दुष्कर्म-कल्मष-विवर्जित-धर्मनाथ !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥६॥

देवामरी-कुसुम-सन्निभ-शान्तिनाथ !
 कुन्थो ! दयागुण-विभूषण-भूषिताङ्ग ! ।
 देवाधिदेव ! भगवन्नर-तीर्थनाथ !
 त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥७॥
 यन्मोह-मल्ल-मद-भज्जन-मल्लिनाथ !
 क्षेमङ्गरावितथ-शासन-सुव्रताख्य !
 सत्-सम्पदा प्रशमितो नमिनामधेय !
 त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥८॥
 तापिच्छुगुच्छ-रुचिरोज्ज्वल-नेमिनाथ !
 घोरोपसर्गविजयिन् ! जिनपाश्वनाथ !
 स्याद्वाद-सूक्ति-मणि-दर्पण ! वर्द्धमान !
 त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥९॥
 प्रालेय-नील-हरितारुण-पीत-भासं,
 यन्मूर्तिमव्यय-सुखावसर्थं मुनीन्द्राः ।
 ध्यायन्ति सप्तति-शतं जिनवल्लभानां,
 त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥१०॥

अनुष्टुप्छन्दः

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, माङ्गल्यं परिकीर्तितम् ।
 चतुर्विंशतितीर्थनां, सुप्रभातं दिने दिने ॥११॥
 सुप्रभातं सुनक्षत्रं, श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम् ।
 देवता ऋषयः सिद्धाः, सुप्रभातं दिने दिने ॥१२॥
 सुप्रभातं तवैकस्य, वृषभस्य महात्मनः ।
 येन प्रवर्तितं तीर्थं, भव्यसत्त्वसुखावहम् ॥१३॥
 सुप्रभातं जिनेन्द्राणां, ज्ञानोन्मीलितचक्षुषाम् ।
 अज्ञानतिमिरान्धानां नित्यमस्तमितो रविः ॥१४॥
 सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य, वीरः कमललोचनः ।
 येन कर्माटवी दग्धा, शुक्लध्यानोग्रवहिना ॥१५॥
 सुप्रभातं सुनक्षत्रं, सुकल्याणं सुमङ्गलम् ।
 त्रैलोक्यहितकर्तृणां, जिनानामेव शासनम् ॥१६॥

दर्शन-पाठ

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम् ।
 दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम् ॥१॥
 दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वन्दनेन च ।
 न चिरं तिष्ठति पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥२॥
 वीतराग-मुखं दृष्ट्वा, पद्म-राग-समप्रभम् ।
 जन्म-जन्म-कृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ॥३॥
 दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसारध्वान्त-नाशनम् ।
 बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थ-प्रकाशनम् ॥४॥
 दर्शनं जिनचन्द्रस्य, सद्धर्मामृत-वर्षणम् ।
 जन्मदाह - विनाशाय, वर्धनं सुखवारिधेः ॥५॥

जीवादितत्वप्रतिपादकाय, सम्यक्त्वमुख्याष्ट-गुणार्णवाय ।
प्रशान्तरूपाय दिग्म्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥६॥

चिदानन्दैकरूपाय, जिनाय परमात्मने ।
परमात्म-प्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥७॥

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ! ॥८॥

न हि त्राता न हि त्राता, न हि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात् परो देवो, न भूतो न भविष्यति ॥९॥

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥१०॥

जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवेच्-चक्रवर्त्यपि ।
स्याच्चेतोऽपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानुवासितः ॥११॥

जन्म-जन्मकृतं पापं, जन्मकोटिमुपार्जितम् ।
जन्म-मृत्यु-जरा-रोगो, हन्यते जिनदर्शनात् ॥१२॥

अद्याभवत् सफलता नयन-द्वयस्य,
देव ! त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोक-तिलक ! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधिरयं चुलुक-प्रमाणम् (णः) ॥१३॥

प्रातःकालीन स्तुति

वीतराग सर्वज्ञ हितङ्कर, भविजन की अब पूरो आश ।
ज्ञानभानु का उदय करो मम, मिथ्यात्म का होय विनाश ॥

जीवों की हम करुणा पालें, झूठ वचन नहिं कहें कदा ।
परधन कबहूँ न हरहूँ स्वामी, ब्रह्मचर्य व्रत रखें सदा ॥

तृष्णा लोभ बढ़े न हमारा, तोष सुधा नित पिया करें ।
श्रीजिन धर्म हमारा प्यारा, तिसकी सेवा किया करें ॥

दूर भगावें बुरी रीतियाँ, सुखद रीति का करें प्रचार ।
मैल मिलाप बढ़ावें हम सब, धर्मोन्नति का करें प्रसार ॥

सुख-दुःख में हम समता धारें, रहें अचल जिमि सदा अटल ।
न्यायमार्ग को लेश न त्यागें, वृद्धि करें निज आत्मबल ॥

आष्ट कर्म जो दुःख हेतु हैं, तिनके क्षय का करें उपाय ।
नाम आपका जपें निरन्तर, विघ्न शोक सब ही टल जाय ॥

आत्म शुद्ध हमारा होवे, पाप मैल नहिं चढ़े कदा ।
शिक्षा की उन्नति हममें, धर्म ज्ञान हूँ बढ़े सदा ॥

हाथ जोड़कर शीश नवावें, तुमको भविजन खड़े खड़े ।
यह सब पूरो आश हमारी, चरण शरण में आन पड़े ॥

दर्शन पच्चीसी

दोहा

तुम निरखत मोकों मिली, मेरी सम्पति आज ।
कहाँ चक्रवति-संपदा कहाँ स्वर्ग-साम्राज ॥१॥

तुम वन्दत जिनदेव जी, नित नव मंगल होय ।
विज्ञ कोटि तत्छिन टरैं, लहहि सुजस सब लोय ॥२॥

तुम जाने बिन नाथ जी, एक स्वास के माँहि ।
जन्म-मरण अठदस किये, साता पाई नाहि ॥३॥

आप बिना पूजत लहे, दुःख नरक के बीच ।
भूख प्यास पशुगति सही, कर्यो निरादर नीच ॥४॥

नाम उचारत सुख लहै, दर्शनिसों अघ जाय ।
पूजत पावै देव पद, ऐसे हैं जिनराय ॥५॥

वंदत हूँ जिनराज मैं, धर उर समताभाव ।
तन-धन-जन जगजाल तैं धर विरागता भाव ॥६॥

सुनो अरज हे नाथ जी, त्रिभुवन के आधार ।
दुष्ट कर्म का नाश कर, वेगि करो उछार ॥७॥

जाचत हूँ मैं आपसों, मेरे जियके माँहिं ।
रागद्वेष की कल्पना, कबहूँ उपजै नाहिं ॥८॥

अति अद्भुत प्रभुता लखी, वीतरागता माँहिं ।
विमुख होहिं ते दुःख लहैं, सन्मुख सुखी लखाहिं ॥९॥

कलमल कोटिक नहि रहैं, निरखत ही जिनदेव ।
ज्यों रवि ऊगत जगत मैं, हरै तिमिर स्वयमेव ॥१०॥

परमाणु पुद्गलतणी, परमात्म संजोग ।
भई पूज्य सब लोक मैं, हरे जन्म का रोग ॥११॥

कोटि जन्म मैं कर्म जो, बाँधे हुते अनन्त ।
ते तुम छबी विलोकते, छिन मैं हो हैं अन्त ॥१२॥

आन नृपति किरपा करै, तब कछु दे धन धान ।
तुम प्रभु अपने भक्त को, करल्यो आप समान ॥१३॥

यन्त्र मन्त्र मणि औषधी, विषहर राखत प्रान ।
त्यों जिनछबि सब भ्रम हरै, करै सर्व परधान ॥१४॥

त्रिभुवनपति हो ताहि तैं, छत्र विराजैं तीन ।
सुरपति नाग नरेशपद, रहैं चरन आधीन ॥१५॥

भवि निरखत भव आपने, तुव भामण्डल बीच ।
भ्रम मेटै समता गहै, नाहिं सहै गति नीच ॥१६॥

दोई ओर ढोरत अमर, चौंसठ चमर सफेद ।
निरखत भविजन का हरैं, भव अनेक का खेद ॥१७॥

तरु अशोक तुव हरत है, भवि-जीवन का शोक ।
आकुलता कुल मेटि कें, करैं निराकुल लोक ॥१८॥

अन्तर बाहिर परिगहन, त्यागा सकल समाज ।
सिंहासन पर रहत हैं, अन्तरीक्ष जिनराज ॥१९॥

जीत भई रिपु मोहतैं, यश सूचत है तास ।
 देव दुन्दुभिन के सदा, बाजे बजैं अकाश ॥२०॥
 बिन अक्षर इच्छा रहित, रुचिर दिव्यध्वनि होय ।
 सुर नर पशु समझैं सबै, संशय रहै न कोय ॥२१॥
 बरसत सुरतरु के कुसुम, गुंजत अलि चहुँ ओर ।
 फैलत सुजस सुवासना, हरषत भवि सब ठौर ॥२२॥
 समुद बाघ अरु रोग अहि, अर्गल बंध संग्राम ।
 विघ्न विषम सबही टरैं, सुमरत ही जिननाम ॥२३॥
 सिरीपाल, चंडाल पुनि, अून भीलकुमार ।
 हाथी हरि अरि सब तरे, आज हमारी बार ॥२४॥
 ‘बुधजन’ यह विनती करै, हाथ जोड़ शिर नाय ।
 जबलौं शिव नहिं होय तुव-भक्ति हृदय अधिकाय ॥२५॥

~~~~~

## दर्शन-स्तुति

कविवर दौलतराम

दोहा

सकल-ज्ञेय-ज्ञायक तदपि, निजानन्द-रस-लीन ।  
 सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि-रज-रहस-विहीन ॥

पद्धरि

जय वीतराग-विज्ञान पूर, जय मोह-तिमिर को हरन सूर ।  
 जय ज्ञान अनन्तानन्त धार, दृग-सुख-वीरज-मण्डित अपार ॥  
 जय परम शान्त मुद्रा समेत, भविजन को निज अनुभूति हेत ।  
 भवि-भागन वच-जोगे वशाय, तुम धुनि हैं सुनि विभ्रम नशाय ॥  
 तुम गुण चिन्तत निज-पर-विवेक, प्रगटै, विघटैं आपद अनेक ।  
 तुम जगभूषण दूषणवियुक्त, सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥  
 अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप ।  
 शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन, स्वाभाविक परिणतिमय अछीन ॥  
 अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्व-चतुष्टयमय राजत गम्भीर ।  
 मुनि-गणधरादि सेवत महन्त, नव-केवल-लब्धि-रमा धरन्त ॥  
 तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाँहिं जैहैं सदीव ।  
 भव-सागर में दुख क्षार वारि, तारन को और न आप टारि ॥  
 यह लखि निज दुख-गद हरण काज, तुम ही निमित्त कारण इलाज ।  
 जाने तातैं मैं शरण आय, उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥  
 मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधिफल पुण्यपाप ।  
 निज को पर को करता पिछान, पर में अनिष्टता-इष्ट ठान ॥  
 आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृग-तृष्णा जानि वारि ।  
 तन-परिणति में आपो चितार, कबहुँ न अनुभवो स्वपद सार ॥  
 तुमको बिन जाने जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश ।  
 पशु-नारक-नर-सुर-गति-मङ्गार, भव धर-धर मर्यो अनन्त बार ॥  
 अब काल-लब्धि-बल तैं दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ।  
 मन शान्त भयो मिटि सकल द्वन्द, चाख्यो स्वातम-रस दुखनिकन्द ॥

तातैं अब ऐसी करहु नाथ, बिछुरै न कभी तुम चरण साथ ।  
 तुम गुणगण को नहिं छेव देव, जग तारन को तुम विरद एव ॥  
 आत्म के अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय ।  
 मैं रहूँ आप में आप लीन, सो करो होउँ ज्यों निजाधीन ॥  
 मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रय-निधि दीजै मुनीश ।  
 मुझ कारज के कारन सु आप, शिव करहु, हरहु मम मोह-ताप ॥  
 शशि शान्तिकरन तप हरन हेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ।  
 पीवत पियूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभव तैं भव नशाय ॥  
 त्रिभुवन तिहुँ काल मङ्घार कोय, नहि तुम बिन निज सुखदाय होय ।  
 मो उर यह निश्चय भयो आज, दुख-जलधि उतारन तुम जहाज ॥

दोहा

तुम गुण-गण-मणि गणपती, गणत न पावहिं पार ।  
 ‘दौल’ स्वत्पमति किम कहै, नमहुँ त्रियोग सम्हार ॥

~~~~~

दर्शन-स्तुति

सखी

अति पुण्य उदय मम आया, प्रभु तुमरा दर्शन पाया ।
 अब तक तुमको बिन जाने, दुख पाये निज गुण हाने ॥

हरिगीतिका

पाये अनन्ते दुःख अब तक, जगत को निज जानकर ।
 सर्वज्ञ भाषित जगत हितकर, धर्म नहिं पहिचान कर ॥
 भव बंधकारक सुख प्रहारक, विषय में सुख मानकर ।
 निज पर विवेचक ज्ञानमय, सुखनिधि सुधा नहिं पानकर ॥१॥

सखी-हरिगीतिका

तव पद मम उर में आये, लखि कुमति विमोह पलाये ।
 निज ज्ञान कला उर जागी, रुचि पूर्ण स्वहित में लागी ॥
 रुचि लगी हित में आत्म के, सतसंग में अब मन लगा ।
 मन में हुई अब भावना, तव भक्ति में जाऊँ रँगा ॥
 प्रिय वचन की हो टेव, गुणि-गुण-गान में ही चित पगै ।
 शुभ शास्त्र का नित हो मनन, मन दोषवादन तैं भगै ॥२॥

कब समता उर में लाकर, द्वादश अनुप्रेक्षा भाकर ।
 ममतामय भूत भगाकर, मुनिव्रत धारूँ वन जाकर ॥

धरकर दिग्म्बर रूप कब, अठ-बीस गुण पालन करूँ ।
 दो-बीस परिषह सह सदा, शुभ धर्म दस धारन करूँ ॥
 तप तपूँ द्वादश विधि सुखद नित, बंध आस्त्रव परिहरूँ ।
 अरु रोकि नूतन कर्म संचित, कर्म रिपु को निर्जरूँ ॥३॥

कब धन्य सुअवसर पाऊँ, जब निज में ही रम जाऊँ ।
 कर्तादिक भेद मिटाऊँ, रागादिक दूर भगाऊँ ॥

कर दूर रागादिक निरन्तर, आत्म को निर्मल करूँ ।
 बल-ज्ञान-दर्शन-सुख अतुल लहि, चरित क्षायिक आचरूँ ॥
 आनन्दकन्द जिनेन्द्र बन, उपदेश को नित उच्चरूँ ।
 आवै ‘अमर’ कब सुखद दिन, जब दुखद भवसागर तरूँ ॥४॥

~~~~~

## दर्शन-स्तुति

कविवर बुधजन

प्रभु पतित-पावन मैं अपावन चरन आयो सरन जी,  
 यों विरद आप निहार स्वामी मेंट जामन मरन जी ।  
 तुम ना पिछान्यो आन मान्यो देव विविध प्रकार जी,  
 या बुद्धि सेती निज न जान्यो भ्रम गिन्यो हितकार जी ॥१॥  
 भव-विकट-वन में करम वैरी ज्ञान-धन मेरो हर्यो,  
 तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय अनिष्ट-गति धरतो फिर्यो ।  
 धन घड़ी यों धन दिवस यों ही धन जनम मेरो भयो,  
 अब भाग मेरो उदय आयो दरस प्रभु जी को लख लयो ॥२॥  
 छबि वीतरागी नगन मुद्रा दृष्टि नासा पै धरैं,  
 वसु प्रातिहार्य अनन्त गुणजुत कोटि रवि-छबि को हरैं ।  
 मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो उदय रवि आतम भयो,  
 मो उर हरष ऐसो भयो मनु रंक चिन्तामणि लयो ॥३॥  
 मैं हाथ जोड़ नवाऊँ मस्तक वीनऊँ तुम चरन जी,  
 सर्वोत्कृष्ट त्रिलोक-पति जिन सुनहुँ तारन-तरन जी ।  
 जाचूँ नहीं सुर-वास पुनि नर-राज परिजन साथ जी,  
 ‘बुध’ जाचहुँ तुव भक्ति भव-भव दीजिए शिवनाथ ! जी ॥४॥

## देव-स्तुति

कविवर भूधरदास

ढाल परमादी

अहो जगत-गुरु ! देव ! सुनिए अरज हमारी ।  
 तुम प्रभु दीनदयाल, मैं दुखिया संसारी ॥१॥  
 इस भव-वन में वादि, काल अनादि गमायो ।  
 भ्रम्यो चहूँ गति माँहिं, सुख नहिं दुख बहु पायो ॥२॥  
 कर्म-महारिपु जोर, एक न कान करैं जी ।  
 मनमाने दुख देहिं, काहू सौं नाहिं डरैं जी ॥३॥  
 कबहूँ इतर निगोद, कबहूँ नरक दिखावैं ।  
 सुर-नर-पशु-गति माँहिं, बहुविध नाच नचावैं ॥४॥  
 प्रभु ! इनको परसंग, भव-भव माँहिं बुरो जी ।  
 जे दुख देखे देव ! तुमसौं नाहिं दुरो जी ॥५॥  
 एक जनम की बात, कहि न सकों सब स्वामी ! ।  
 तुम अनन्त परजाय, जानत अन्तरजामी ॥६॥  
 मैं तो एक अनाथ, ये मिल दुष्ट घनेरे ।  
 कियो बहुत बेहाल, सुनियो साहिब मेरे ॥७॥  
 ज्ञान महानिधि लूटि, रंक निबलकरि डार्यो ।  
 इनहीं तुम मुझ माँहिं, हे जिन ! अन्तर पार्यो ॥८॥  
 पाप-पुन्य मिलि दोय, पायनि बेड़ी डारी ।  
 तन-कारागृह माँहिं, मोहि दियो दुख भारी ॥९॥  
 इनको नेक बिगार, मैं कछु नाहिं कियो जी ।  
 बिन कारन जगवन्द्य, बहुविध बैर लियो जी ॥१०॥  
 अब आयौ तुम पास, सुन जिन सुजस तिहारो ।  
 नीति-निपुन जगराय, कीजै न्याय हमारो ॥११॥  
 दुष्टन देहु निकार, साधुन कौं रखि लीजै ।  
 विनवै ‘भूधरदास’ हे प्रभु ! ढील न कीजै ॥१२॥

## मङ्गलाष्टकम्

श्रीमन्नप्र - सुरासुरेर्द्र - मुकुट - प्रद्योत - रत्नप्रभा-  
 भास्वत्पाद-नखेन्दवः प्रवचनाभोधीन्दवः स्थायिनः ।  
 ये सर्वे जिन - सिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,  
 स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥  
 सम्यग्दर्शन - बोध - वृत्तममलं, रत्नत्रयं पावनं,  
 मुक्तिश्रीनगराधिनाथ - जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः ।  
 धर्मः सूक्ति-सुधा च चैत्यमखिलं, चैत्यालयं श्यालयं,  
 प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥२॥  
 नाभेयादि - जिनाधिपास्त्रिभुवन - ख्याताश्चतुर्विंशतिः,  
 श्रीमन्तो भरतेश्वर - प्रभृतयो, ये चक्रिणो द्वादश ।  
 ये विष्णु - प्रतिविष्णु - लाङ्गलधराः, सप्तोत्तरा विंशतिः,  
 त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्ठिपुरुषाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥३॥  
 ये सर्वोषधि-ऋद्धयः सुतपसां वृद्धिं गताः पञ्च ये,  
 ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकुशला येऽष्टौ विधाश्चारणाः ।  
 पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो, ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,  
 सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥४॥  
 कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमही, वीरस्य पावापुरे,  
 चम्पायां वसुपूज्यतुग्जिनपतेः, सम्मेदशैलेऽर्हताम् ।  
 शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे, नेमीश्वरस्यार्हतो,  
 निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥५॥  
 ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः  
 जम्बू-शाल्मलि-चैत्य-शाखिषु तथा, वक्षार-रूप्याद्रिषु ।  
 इष्वाकार-गिरौ च कुण्डल-नगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे,  
 शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥६॥  
 सर्पो हारलता भवत्यसिलता सत्पुष्पदामायते,  
 सम्पद्येत रसायनं विषमपि प्रीतिं विधत्ते रिपुः ।  
 देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः किं वा बहु ब्रूमहे,  
 धमदिव नभोऽपि वर्षति नगैः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥७॥  
 यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां, जन्माभिषेकोत्सवो,  
 यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो, यः केवलज्ञानभाक् ।  
 यः कैवल्यपुर-प्रवेश-महिमा, सम्पादितः स्वर्गिभिः  
 कल्याणानि च तानि पञ्च सततं, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥८॥  
 इत्थं श्रीजिन-मङ्गलाष्टकमिदं, सौभाग्य-सम्पत्प्रदं,  
 कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्गराणामुषः ।  
 ये शृणवन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मर्थ-कामान्विता,  
 लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय-रहिता, निर्वाण-लक्ष्मीरपि ॥९॥



## माघनन्दिमुनिकृताभिषेक-पाठ

श्रीमन्नतामरशिरस्तट-रत्न-दीप्ति-तोयावभासि-चरणाम्बुज-युग्ममीशम् ।  
अर्हन्तमुन्नत-पद-प्रदमाभिनम्य, तन्मूर्तिषूद्यदभिषेक-विधिं करिष्ये ॥१॥

अथ पौर्वाह्लिकदेव-वन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा-  
वन्दनास्तव-समेतं श्रीपञ्चगुरुभक्ति-पुरस्सरं कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यह पढ़कर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें )

याः कृत्रिमास्तदितराः प्रतिमा जिनस्य, संस्नापयन्ति पुरुहूत-मुखादयस्ताः ।  
सद्भाव-लब्धि-समयादि-निमित्तयोगात्, तत्रैवमुज्ज्वलधिया कुसुमं क्षिपामि ॥२॥

(यह पढ़कर थाली में पुष्पाजलि छोड़कर अभिषेक की प्रतिज्ञा करें )

श्रीपीठक्लृप्ते विशदाक्षतौदैः, श्रीप्रस्तरे पूर्णशशाङ्क-कल्पे ।  
श्रीवर्तके चन्द्रमसीति वार्ता, सत्यापयन्तीं श्रियमालिखामि ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकारलेखनं करोमि ।

कनकाद्रि-निभं कप्रं पावनं पुण्यकारणम् ।  
स्थापयामि परं पीठं जिनस्नपनाय भक्तिः ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीपीठस्थापनं करोमि ।

(यह पढ़कर अभिषेक की थाली में सिंहासन स्थापित करें )

भृङ्गार-चामर-सुदर्पण-पीठ-कुम्भ-ताल-ध्वजातप-निवारक-भूषिताग्रे ।  
वर्धस्व-नन्द-जय-पाठपदावलीभिः, सिंहासने जिन ! भवन्तमहं श्रयामि ॥५॥

वृषभादि-सुवीरान्तान् जन्माप्तौ जिष्णुचर्चितान् ।  
स्थापयाम्यभिषेकाय भक्त्या पीठे महोत्सवम् ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मतीर्थाधिनाथ ! भगवन्निः पाण्डुक-शिलापीठे सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ ।

(यह पढ़कर प्रतिमाजी स्थापित करना)

श्रीतीर्थकृत्स्नपन-वर्य-विधौ सुरेन्द्रः क्षीराब्धि-वारिभि-रपूरय-दुद्ध-कुम्भान् ।  
तांस्तादृशानिव विभाव्य यथार्हणीयान्, संस्थापये कुसुम-चन्दन-भूषिताग्रान् ॥७॥

शातकुम्भीय-कुम्भैघान् क्षीराब्धेस्तोय-पूरितान् ।  
स्थापयामि जिनस्नान-चन्दनादि-सुचर्चितान् ॥८॥

ॐ ह्रीं चतुःकोणेषु चतुःकलशस्थापनं करोमि ।

(यह पढ़कर चार कोनों में चार कलश स्थापित करें )

आनन्द-निर्भर-सुर-प्रमदादि-गानैर्वादित्र-पूर-जय-शब्द-कलप्रशस्तैः ।  
उद्गीयमान-जगतीपति-कीर्तिमेनां, पीठस्थलीं वसु-विधार्चनयोल्लसामि ॥९॥

ॐ ह्रीं स्नपनपीठस्थिताय जिनायार्थं निर्वपापीति स्वाहा ।  
कर्म-प्रबन्ध-निगडैरपि हीनताप्तं, ज्ञात्वापि भक्तिवशतः परमादि-देवम् ।  
त्वां स्वीयकल्पणोन्मथनाय देव ! शुद्धोदैरभिनयामि महाभिषेकम् ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीं कर्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं  
तं पं पं झं झं इवीं इवीं क्षीरीं क्षीरीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽहंते  
भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामीति स्वाहा ।

तीर्थोत्तम-भवैर्नीरैः, क्षीर-वारिधि-रूपकैः ।

स्नपयामि सुजन्माप्तान्, जिनान् सर्वार्थसिद्धिदान् ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामीति स्वाहा ।

(यह पढ़ते हुये कलश से धारा प्रतिमाजी पर छोड़ें)

सकलभुवननाथं तं जिनेन्द्रं सुरेन्द्रै-  
रभिषवविधिमाप्तं स्नातकं स्नापयामः ।  
यदभिषवन-वारां बिन्दुरेकोऽपि नृणां,  
प्रभवति हि विधातुं भुक्तिसन्मुक्तिलक्ष्मीम् ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं कर्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं  
तं तं पं पं झं झं इवीं इवीं क्षीं क्षीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं झं क्षीं क्षीं हं सः  
झं वं हुः यः सः क्षां क्षीं क्षुं क्षें क्षों क्षौं क्षं क्षः क्षीं हां ह्रीं हुं हें हैं  
ह्रों हैं हुं हुः द्रां द्रीं नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः इति बृहच्छान्ति-  
मन्त्रेणाभिषेकं करोमि ।

(यह पढ़कर चारों कोनों में रखे हुए चार कलशों से अभिषेक करें)  
पानीय-चन्दन-सदक्षत-पुष्प-पुञ्ज-नैवेद्य-दीपक-सुधूप-फलव्रजेन ।  
कर्माष्टक-क्रथन-वीरमनन्त-शक्तिं, सम्पूजयामि महसा महसां निधानम् ॥१३॥

ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते वृषभादिवीरान्ते योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

हे तीर्थपा निज-यशो-ध्वली-कृताशाः,  
सिद्धौषधाश्च भव-दुःखमहागदानाम् ।  
सद्भव्य-हृज्जनित - पङ्क - कबन्ध - कल्पाः,  
यूयं जिनाः सतत-शान्तिकरा भवन्तु ॥१४॥

(यह पढ़कर शान्ति के लिये पुष्पांश्लि छोड़ें)

नत्वा मुहुर्निज-करैरमृतोपमेयैः,  
स्वच्छैर्जिनेन्द्र ! तव चन्द्र-करावदातैः ।  
शुद्धांशुकेन विमलेन नितान्तरम्ये,  
देहे स्थितान् जलकणान् परिमार्जयामि ॥१५॥

ॐ ह्रीं अमलांशुकेन जिनविष्वपरिमार्जनं करोमि ।

(यह पढ़कर शुद्ध और स्वच्छ वस्त्र से प्रतिमा जी को पोछें )

स्नानं विधाय भवतोऽष्टसहस्रनाम्ना-  
मुच्चारणेन मनसो वचसो विशुद्धिम् ।  
जिघृक्षुरिष्टिमिन तेऽष्ट-तर्यां विधातुं,  
सिंहासने विधिवदत्र निवेशयामि ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीसिंहासनपीठे जिनविष्वं स्थापयामि ।

जलगन्धकतैः पुष्पैश्चरुदीपसुधूपकैः ।

फलैरर्धैर्जिनमर्चेज्जन्म-दुःखापहानये ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीपीठस्थितजिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

नत्वा परीत्य निजनेत्रललाटयोश्च,  
व्यातुक्षणेन हरतादघ-सञ्चयं मे ।  
शुद्धोदकं जिनपते ! तव पादयोगाद्,  
भूयाद् भवातपहरं धृतमादरेण ॥१८॥

मुक्ति-श्री-वनिताकरोदकमिदं पुण्याङ्गुरोत्पादकं,  
नागेन्द्र - त्रिदशेन्द्र - चक्रपदवी - राज्याभिषेकोदकम् ।

सम्यग्ज्ञान - चरित्र - दर्शनलता - संवृद्धि - सम्पादकं,

कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन ! स्नानस्य गन्धोदकम् ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनगन्धोदकं स्वललाटे धारयामि ।

इमे नेत्रे जाते सुकृतजलसिक्ते सफलिते  
 ममेदं मानुष्यं कृतिजनगणादेयमभवत् ।  
 मदीयाद् भल्लाटादशुभतर-कर्माटनमभूत्  
 सदेदृक् पुण्यार्हन् मम भवतु ते पूजनविधौ ॥२०॥

(यह पढ़कर पुण्याङ्गिं छोड़ें )



## जलाभिषेक-पाठ

पं. जसहरराय कृत

दोहा

जय जय भगवंते सदा, मंगल मूल महान् ।  
 वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमौं जोरि जुगपान ॥

अडिल्ल

श्रीजिन जग में ऐसो को बुधवंत जू ।  
 जो तुम गुण वरननि करि पावै अंत जू ॥  
 इंद्रादिक सुर, चार ज्ञानधारी मुनी ।  
 कहि न सकै तुम गुणगण हे त्रिभुवनधनी ॥

गीता

अनुपम अमित तुम गुणनि-वारिधि, ज्यों अलोकाकाश है ।  
 किमि धरें हम उर कोष में सो अकथ-गुण-मणि-राश है ॥  
 पै निज प्रयोजन सिद्धि की तुम नाम में ही शक्ति है ।  
 यह चित्त में सरधान यातैं नाम ही में भक्ति है ॥१॥

ज्ञानावरणी दर्शन-आवरणी भने ।  
 कर्म मोहनी अंतराय चारों हने ॥  
 लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञान में ।  
 इंद्रादिक के मुकुट नये सुरथान में ॥

तब इन्द्र जान्यो अवधितैं, उठि सुरन-युत वंदत भयौ ।  
 तुम पुन्य को प्रेरयो हरी है मुदित धनपति सौं कह्यौ ॥  
 अब वेगि जाय रचौ समवसृति सफल सुरपद को करौ ।  
 साक्षात् श्री अरहंत के दर्शन करौ कल्पष हरौ ॥२॥

ऐसे वचन सुने सुरपति के धनपती ।  
 चल आयो तत्काल मोद धारै अती ॥  
 वीतराग छवि देखि शब्द जय जय चयौ ।  
 दे प्रदच्छिना बार-बार वंदत भयौ ॥

अति भक्ति-भीनो नग्र-चित है समवशरण रच्यौ सही ।  
 ताकी अनूपम शुभ गती को, कहन समरथ कोउ नहीं ॥  
 प्राकार तोरण सभामंडप कनक मणिमय छाजहीं ।  
 नग-जड़ित गंधकुटी मनोहर मध्यभाग विराजहीं ॥३॥

सिंहासन तामध्य बन्यौ अद्भुत दिपै ।  
 तापर वारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै ॥  
 तीन छत्र सिर शोभित चौंसठ चमर जी ।  
 महा भक्तिजुत ढोरत हैं तहां अमर जी ॥  
 प्रभु तरन-तारन कमल ऊपर, अन्तरीक्ष विराजिया ।  
 यह वीतराग दशा प्रतच्छ विलोकि भविजन सुख लिया ॥

मुनि आदि द्वादश सभा के भवि जीव मस्तक नायकै ।  
बहुभाँति बारंबार पूजैं, नर्मै गुण-गण गायकै ॥४॥

परमौदारिक दिव्य देह पावन सही ।  
क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नहीं ॥  
जन्म जरा मृति अरति शोक विस्मय नसे ।  
राग रोष निक्रा मद मोह सबै खसे ॥  
श्रम बिना श्रमजलरहित पावन अमल ज्योति-स्वरूप जी ।  
शरणागतनिकी अशुचिता हर, करत विमल अनूप जी ॥  
ऐसे प्रभु की शान्तमुद्रा कौ न्हवन जलतैं करैं ।  
'जस' भक्तिवश मन उक्ति तैं हम भानु छिं दीपक धरैं ॥५॥

तुम तौ सहज पवित्र यही निश्चय भयो ।  
तुम पवित्रता हेत नहीं मज्जन ठयो ॥  
मैं मलीन रागादिक मलतैं है रह्यो ।  
महा मलिन तन में वसुविधि-वश दुख सह्यो ॥  
बीत्यो अनंतो काल यह मेरी अशुचिता ना गई ।  
तिस अशुचिता-हर एक तुम ही, भरहु वांछा चित ठई ॥  
अब अष्टकर्म विनाश सब मल रोष-रागादिक हरौ ।  
तनरूप कारागेह-तैं उद्धार शिव वासा करौ ॥६॥

मैं जानत तुम अष्टकर्म हरि शिव गये ।  
आवागमन विमुक्त राग-वर्जित भये ॥  
पर तथापि मेरौ मनोरथ पूरत सही ।  
नय-प्रमान तैं जानि महा साता लही ॥  
पापाचरण तजि न्हवन करता चित्त में ऐसे धरू ।  
साक्षात श्री अरहंत का मानों न्हवन परसन करू ॥  
ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबंध तैं ।  
विधि अशुभ नसि शुभबंध तैं है शर्म सब विधि तास तैं ॥७॥

पावन मेरे नयन, भये तुम दरस तैं ।  
पावन पानि भये तुम चरननि परस तैं ॥  
पावन मन है गयो तिहारे ध्यान तैं ।  
पावन रसना मानी, तुम गुण गान तैं ॥  
पावन भई परजाय मेरी, भयौ मैं पूरण-धनी ।  
मैं शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी, पूर्णभक्ति नहीं बनी ॥  
धनि धन्य ते बड़भागि भवि तिन नींव शिव-घर की धरी ।  
वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुंभ भर भक्ती करी ॥८॥

विघ्न - सघन - वन - दाहन - दहन - प्रचंड हो ।  
मोह-महा-तम-दलन प्रबल मारतण्ड हो ॥  
ब्रह्मा विष्णु महेश, आदि संज्ञा धरो ।  
जग-विजयी जमराज नाश ताको करो ॥  
आनन्द कारण दुख-निवारण, परम मंगल-मय सही ।  
मोसों पतित नहिं और तुमसों, पतित-तार सुन्यौ नहीं ॥  
चिंतामणी पारस कल्पतरु, एक भव सुखकार ही ।  
तुम भक्ति-नवका जे चढ़े, ते भये भवदधि पार ही ॥९॥

दोहा

तुम भवदधितैं तरि गये, भये निकल अविकार ।  
तारतम्य इस भक्ति को, हमैं उतारो पार ॥१०॥

~~~~~

शान्तिधारा

ॐ ह्रीं श्रीं कलीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं इवीं इवीं क्वीं क्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽहंते भगवते श्रीमते । ॐ ह्रीं क्रौं मम पापं खण्डय खण्डय जहि जहि दह दह पच पच पाचय पाचय । ॐ नमो अर्हं झं इवीं क्वीं हं सं झं वं हः यः सः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षौं क्षौं क्षं क्षः क्वीं हां हीं हूं हें हैं हौं हौं हं हः द्रां द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽहंते भगवते श्रीमते ठः ठः अस्माकं श्रीरस्तु वृद्धिरस्तु तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु शान्तिरस्तु कान्तिरस्तु कल्याणमस्तु स्वाहा । एवमस्माकं कार्यसिद्ध्यर्थं सर्वविघ्ननिवारणार्थं श्रीमद्भगवदर्हत्सर्वजपरमेष्ठिपरमपवित्राय नमो नमः । अस्माकं श्रीशान्तिभट्टाकपादपद्मप्रसादात् सद्बर्मश्रीबलायु-रारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु सद्बर्मस्वशिष्य-परशिष्यवर्गः प्रसीदन्तु नः ।

ॐ वृषभादयः श्रीवर्ढमानपर्यन्ताश्तुर्विशत्यर्हन्तो भगवन्तः सर्वज्ञाः परममङ्गलनामधेया अस्माकं इहामुत्र च सिद्धिं तन्वन्तु सद्बर्मकार्येषु इहामुत्र च सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ।

ॐ नमोऽहंते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्थतीर्थङ्कराय श्रीमद्रत्नत्रय-रूपाय दिव्यतेजोमूर्तये प्रभामण्डलमण्डिताय द्वादशगणसहिताय अनन्त-चतुष्यसहिताय समवसरणकेवलज्ञानलक्ष्मीशोभिताय अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशदगुणसंयुक्ताय परमेष्ठिपवित्राय सम्यग्ज्ञानाय स्वयंभुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्यमहिताय अनन्तसंसार-चक्र-प्रमदनाय अनन्तज्ञानदर्शनवीर्यसुखास्पदाय त्रैलोक्य-वशङ्कराय सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे बृहत्फणा-मण्डल-मण्डिताय ऋष्यार्थिका-श्रावक-श्राविका-प्रमुख-चतुःसंघोपसर्ग-विनाशनाय धातिकर्मक्षयङ्कराय अजराय अभवाय अस्माकं (अमुकराशि-नामधेयानां) व्याधिं घन्तु । श्रीजिनाभिषेकपूजन-प्रसादात् अस्माकं सेवकानां सर्वदोषरोगशोकभयपीडाविनाशनं भवतु ।

ॐ नमोऽहंते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्पषाय दिव्यतेजोमूर्तये, नमः श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्न-प्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वारिष्ट-शान्तिकराय । ॐ ह्रीं ह्रीं हूं हौं हः अ सि आ उ सा नमः मम सर्वविघ्नशान्तिं कुरु कुरु मम सर्वतुष्टिं कुरु कुरु मम सर्वपुष्टिं कुरु कुरु स्वाहा । मम कामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । रतिकामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । बलिकामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । क्रोधं पापं वैरं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । अग्निवायुभयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वशत्रुविघ्नं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वविघ्नं छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वराज्यभयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वसर्पवृश्चिक-सिंहादिभयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वग्रहभयं

छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वदोषं व्याधिं डामरं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वपरमन्त्रं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वात्मघातं परघातं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वशूलरोगं कुक्षिरोगं अक्षिरोगं शिरोरोगं ज्वररोगं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वनरमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वगजाथ-गोमहिषाजमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वसस्यधान्य-वृक्षलतागुल्मपत्रपुष्पफलमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वराष्ट्रमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वक्रूरवेताल-शाकिनीडाकिनीभयानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्ववेदनीयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वमोहनीयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वापस्मारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । अस्माकं अशुभकर्मजनित-दुःखानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । दुष्टजनकृतान् मन्त्रतन्त्रदृष्टि-मुष्टि-छल-छिद्र-दोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वदुष्ट-देव-दानव-वीरनर-नाहर-सिंह-योगिनी-कृतदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वाष्टकुली-नागजनितविषभयानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । परशत्रुकृतमारणोच्चाटन-विद्वेषणमोहनवशीकरणादिकृतदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्व-स्थावर-जङ्गम-वृश्चिकसर्पादिकृतदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । परशत्रुकृतमारणोच्चाटन-विद्वेषणमोहनवशीकरणादिकृतदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । ॐ ह्रीं अस्मभ्यं चक्रविक्रमसत्त्वतेजोबलशौर्य-वीर्यशान्तीः पूरय पूरय । सर्व-जीवानन्दनं जनानन्दनं भव्यानन्दनं गोकुलानन्दनं च कुरु कुरु । सर्वराजानन्दनं कुरु कुरु । सर्वग्राम-नगर-खेट-कर्वट-मटम्ब-पत्तन-द्रोणमुख-संवाहानन्दनं कुरु कुरु स्वाहा ।

अनुष्टुप्छन्दः

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु व्याधिव्यसनवर्जितम् ।
अभयं क्षेममारोग्यं स्वस्तिरस्तु विधीयते ॥

श्रीशान्तिरस्तु । शिवमस्तु । जयोऽस्तु । नित्यमारोग्यमस्तु । ॐ अस्माकं तुष्टिरस्तु । पुष्टिरस्तु । समृद्धिरस्तु । कल्याणमस्तु । सुखमस्तु । अभिवृद्धिरस्तु । दीर्घायुरस्तु कुलगोत्रधनानि सदा सन्तु । सद्धर्मश्री-बलायुरारोग्यैश्यर्याभिवृद्धिरस्तु ।

ॐ ह्रीं श्रीं कलीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

स्नग्धराष्ट्राण्डः

आयुर्वल्लीविलासं सकलसुखफलै-द्राघियित्वाश्वनल्पं,
धीरं वीरं शरीरं निरुपम-मुपनयत्वातनोत्वच्छकीर्तिम् ।
सिद्धिं वृद्धिं समृद्धिं प्रथयतु तरणिः स्फूर्यदुच्चैः प्रतापं,
कान्तिं शान्तिं समाधिं वितरतु जगतामुत्तमा शान्तिधारा ॥

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवज्जिनेन्द्रः ॥

इति बृहच्छान्तिधारा

१. अस्माकं का अर्थ हम सब का होता है । यदि चाहें तो अस्माकं के स्थान पर अपना नामोच्चारण कर सकते हैं ।



विनय पाठ

(दोहा)

इह विधि ठाड़े होय के, प्रथम पढ़े जो पाठ ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ ॥१॥

अनंत चतुष्पद्य के धनी, तुम ही हो सिरताज ।
मुक्ति-वधू के कंत तुम, तीन भुवन के राज ॥२॥

तिहुँ जग की पीड़ा हरन, भवदधि - शोषणहार ।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार ॥३॥

हरता अघ अँधियार के, करता धर्म - प्रकाश ।
थिरता - पद दातार हो धरता निज गुण रास ॥४॥

धर्मामृत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप ।
तुमरे चरण-सरोज को, नावत तिहुँ जग भूप ॥५॥

मैं वन्दैं जिनदेव को, करि अति निरमल भाव ।
कर्म - बन्ध के छेदने, और न कछू उपाव ॥६॥

भविजन को भव - कूप तैं, तुम ही काढ़नहार ।
दीन-दयाल अनाथ-पति, आतम गुण भंडार ॥७॥

चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्म-रज मैल ।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिवगैल ॥८॥

तुम पद-पंकज पूजतैं, विघ्न-रोग टर जाय ।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय ॥९॥

चक्री खगधर इन्द्र पद, मिलैं आपतैं आप ।
अनुक्रम करि शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप ॥१०॥

तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन ।
जन्म-जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥११॥

पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव ।
अंजन से तारे कुधी, जय जय जय जिनदेव ॥१२॥

थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेव ।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव ॥१३॥

राग सहित जग में रुल्यौ, मिले सरागी देव ।
वीतराग भेट्यो अबै, मेटो राग कुटेव ॥१४॥

कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यञ्च अज्ञान ।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान ॥१५॥

तुमको पूजैं सुरपति, अहिपति नरपति देव ।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव ॥१६॥

अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार ।
मैं डूबत भव-सिन्धु में, खेव लगाओ पार ॥१७॥

इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान ।
अपनो विरद निहारिकैं, कीजे आप समान ॥१८॥

तुमरी नेक सुदृष्टितैं, जग उत्तरत है पार ।
हा हा डूब्यो जात हों, नेक निहार निकार ॥१९॥

जो मैं कहहूँ और-सों, तो न मिटै उरझार ।
 मेरी तो तोसों बनी, यातें करौं पुकार ॥२०॥
 वंदो पाँचों परमगुरु, सुरगुरु वंदत जास ।
 विघ्नहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश ॥२१॥
 चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय ।
 शिवमग साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय ॥२२॥
 मंगल मूर्ति परम पद, पंच धरों नित ध्यान ।
 हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान ॥२३॥
 मंगल जिनवर पद नमों, मंगल अर्हत देव ।
 मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दों स्वयमेव ॥२४॥
 मंगल आचारज मुनि, मंगल गुरु उवज्ञाय ।
 सर्व साधु मंगल करो, वन्दों मन-वच-काय ॥२५॥
 मंगल सरस्वती मात का, मंगल जिनवर धर्म ।
 मंगलमय मंगल करो, हरो असाता कर्म ॥२६॥
 या विधि मंगल से सदा जग में मंगल होत ।
 मंगल “नाथूराम” यह भव-सागर दृढ़-पोत ॥२७॥



नित्य पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, नमोऽस्तु ।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्ञायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः (पुष्पाज्जलिं क्षिपामि)

चत्तारि मंगलं अरहंत मंगलं सिद्ध मंगलं साहु मंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा अरहंत लोगुत्तमा सिद्ध लोगुत्तमा साहु लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरहंत सरणं पव्वज्जामि सिद्ध सरणं पव्वज्जामि साहु सरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा (पुष्पाज्जलिं क्षिपामि)

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पञ्च-नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥

अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥२॥

अपराजितमन्त्रोऽयं, सर्व-विघ्नविनाशनः ।
मङ्गलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मङ्गलं मतः ॥३॥

एसो पञ्च-णमोयारो, सव्वपावप्पणासणो ।
मङ्गलाणं च सव्वेसिं, पठमं होइ मङ्गलं ॥४॥

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म-वाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥५॥

कर्माष्टक - विनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनीभूतपन्नगाः ।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥७॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

पंचकल्याणक का अर्ध

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगान-रवाकुले, जिनगृहे कल्याणमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं भगवतो गर्भजन्मतपोऽनानिर्वाणकल्याणकेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचपरमेष्ठी का अर्ध

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगान-रवाकुले, जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं श्रीअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनसहस्रनाम का अर्ध

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगान-रवाकुले, जिनगृहे जिननाम यजामहे ॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनाष्टोत्तरसहस्रनामभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनवाणी का अर्ध

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगान-रवाकुले, जिनगृहे जिनसूत्रमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः इत्यादितत्त्वार्थसूत्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य	जगत्त्रयेशं,	स्याद्वादनायकमनंतचतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूलसङ्घसुदृशां	सुकृतैकहेतुर्,	जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥१॥
स्वस्ति त्रिलोकगुरवे	जिनपुङ्गवाय,	स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्जितदृङ्गयाय,	स्वस्ति प्रसन्नलिताद् भुत-वैभवाय ॥२॥	
स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय,	स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय ।	
स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय,	स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय ॥३॥	
द्रवस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं,	भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।	
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्लन्,	भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥४॥	
अर्हन् पुराणपुरुषोत्तम पावनानि,	वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।	
अस्मिज्ज्वलद्विमल - केवलबोधवहौ,	पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥५॥	

ॐ विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

स्वस्ति मंगलपाठ

श्रीवृषभो नः स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीअजितः	।
श्रीसंभवः स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीअभिनन्दनः	।
श्रीसुमतिः स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीपद्मप्रभः	।
श्रीसुपाश्वरः स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीचन्द्रप्रभः	।
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीशीतलः	।
श्रीश्रेयान् स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीवासुपूज्यः	।

श्रीविमलः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीअनन्तः	
श्रीधर्मः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीशान्तिः	
श्रीकुन्थुः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीअरनाथः	
श्रीमल्लिः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीमुनिसुव्रतः	
श्रीनमिः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीनेमिनाथः	
श्रीपार्श्वः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीवर्द्धमानः	

पुष्पाञ्जलि क्षिपायि



परमर्षि स्वस्ति मंगल पाठ

(प्रत्येक श्लोक के बाद पुष्प क्षेपण करें)

(उपजातिच्छन्दः)

नित्याप्रकम्पादभुतकेवलौधाः, स्फुरन्मनःपर्यशुद्धबोधाः ।
 दिव्यावधि-ज्ञानबलप्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥१॥
 कोष्ठस्थ-धान्योपम-पेकबीजं, संभिन्न-संश्रोतृपदानुसारि ।
 चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥२॥
 संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादन-ग्राण-विलोकनानि ।
 दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥३॥
 प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येक-बुद्धाः दशसर्वपूर्वैः ।
 प्रवादिनोऽष्टाङ्गनिमित्तविज्ञाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥४॥
 जड्डानलश्रेणि - फलाम्बु-तन्तु - प्रसून - बीजाङ्कुर - चारणाह्नाः ।
 नभोऽङ्गस्वैरविहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥५॥
 अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि, लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्ण।
 मनो-वपु-र्वग्निलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥६॥
 सकामरुपित्ववशित्वमैश्यं, प्राकाम्यमन्तर्भिमथाप्तिमाप्ताः ।
 तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥७॥
 दीप्तं च तप्तं च महत्तथोग्रं, घोरं तपो घोर-पराक्रमस्थाः ।
 ब्रह्मापरं घोरगुणं चरन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥८॥
 आमर्ष-सर्वोषधयस्तथाशीर्विषाविषा दृष्टिविषाविषाश्च ।
 सखेल-विड्जल्लमलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥९॥
 क्षीरं स्रवन्तोऽत्र धृतं स्रवन्तो, मधुस्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः ।
 अक्षीणसंवासमहानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥१०॥

इति परमर्षिस्वस्तिमङ्गलविधानं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

देव-शास्त्र-गुरु पूजन

पं. व्यानतराय

अडिल्ल

प्रथम देव अरहंत सुश्रुत सिद्धान्त जू,
 गुरु निर्ग्रथ महंत मुकतिपुर-पंथ जू ।
 तीन रतन जगमाँहि सु ये भवि ध्याइये,
 तिनकी भक्ति प्रसाद परम पद पाइये ॥

दोहा

पूजों पद अरहंत के, पूजों गुरुपद सार ।
पूजों देवी सरस्वती, नित प्रति अष्ट प्रकार ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

हरिगीतिका छन्द

सुरपति उरग नरनाथ तिन-करि, वन्दनीक सुपदप्रभा,
अति शोभनीक सुवरण उज्ज्वल, देख छवि मोहित सभा ।
वर नीर क्षीर-समुद्र घट भरि, अग्र तसु बहु विधि नचूँ,
अरहंत श्रुत सिद्धान्त गुरु निर्गन्थ नित पूजा रचूँ ॥

दोहा

मलिन वस्तु हर लेत सब जल स्वभाव मल छीन ।
जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जे त्रिजग - उदर मङ्गार प्रानी, तपत अति दुद्धर खरे,
तिन अहित-हरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे ।
तसु भ्रमर-लोभित घ्राण पावन, सरस चन्दन घसि सचूँ,
अरहंत श्रुत सिद्धान्त गुरु निर्गन्थ नित पूजा रचूँ ॥

चंदन शीतलता करै तपत वस्तु परवीन ।

जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह भव-समुद्र अपार तारण, के निमित्त सुविधि ठई ।
अति-दृढ़ परम-पावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥
उज्ज्वल अखंडित सालि तंदुल, पुंज धरि त्रयगुण जचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्गन्थ नित पूजा रचूँ ॥

तन्दुल सालि सुगंध अति, परम अखंडित बीन ।

जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

जे विनयवंत सुभव्य-उर-अंबुज प्रकाशन भान हैं ।
जे एक मुख चारित्र भाषत, त्रिजग माँहिं प्रधान हैं ॥
लहि कुन्द-कमलादिक पहुप, भव-भव कुवेदन सों बचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्गन्थ नित पूजा रचूँ ॥

विविधभाँति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।

जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्टाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

अति सबल मद - कंदर्प जाको, क्षुधा - उरग अमान हैं ।
दुस्सह भयानक तासु नाशन को सुगरुड समान हैं ॥
उत्तम छहों रस-युक्त नित, नैवेद्य करि घृत में पचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्गन्थ नित पूजा रचूँ ॥

नानाविधि संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन ।

जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जे त्रिजग-उद्यम नाश कीने, मोह-तिमिर महाबली ।
 तिहि कर्मधाती ज्ञानदीप-प्रकाशजोति प्रभावली ॥
 इह भाँति दीप प्रजाल कंचन, के सुभाजन में खचूँ ।
 अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्गन्थ नित पूजा रचूँ ॥
 स्वपरप्रकाशक ज्योति अति, दीपक तमकरि हीन ।
 जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
 ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जो कर्म-ईधन दहन अग्नि-समूह सम उद्घत लसै ।
 वर धूप तासु सुगंधिताकरि, सकल परिमलता हँसै ॥
 इह भाँति धूप चढ़ाय नित भव-ज्वलन माँहिं नहीं पचूँ ।
 अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्गन्थ नित पूजा रचूँ ॥
 अग्निमाँहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन ।
 जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
 ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 लोचन सुरसना द्वाण उर, उत्साह के करतार हैं ।
 मोऐ न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुणसार हैं ॥
 सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, परम अमृतरस सचूँ ।
 अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्गन्थ नित पूजा रचूँ ॥
 जे प्रधान फलफल-विषें, पंचकरण रस-लीन ।
 जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
 ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जल परम उज्ज्वल गन्ध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूँ ।
 वर धूप निर्मल फल विविध बहु जनम के पातक हरूँ ॥
 इह भाँति अर्ध चढ़ाय नित भवि करत शिवपंकति मचूँ ।
 अरहंत श्रुत - सिद्धान्त गुरु - निर्गन्थ नित पूजा रचूँ ॥
 (आठों दुखदानी, आठ निशानी, तुम छिं आनी निवारन हो,
 दीनन निस्तारन अधम उधारन 'द्यानत' तारन कारन हो ।
 प्रभु अन्तरजामी, त्रिभुवननामी, सब के स्वामी दोष हरो,
 यह अरज सुनीजै ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया करो ॥)

वसुविधि अर्ध संजोय कै, अति उछाह मन कीन ।
 जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
 ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

देव-शास्त्र-गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार ।
 भिन्न भिन्न कहुँ आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥

पञ्चरि

देव का स्वरूप

चउ-कर्म कि त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश दोषराशि ।
 जे परम सुगुण हैं अनंतधीर, कहवत के छ्यालिस गुणगंभीर ॥१॥
 शुभ समवसरण शोभा अपार, शत-इन्द्र नमत कर सीस धार ।
 देवाधिदेव अरहन्त देव, वन्दों मन-वच-तन कर सु-सेव ॥२॥

शास्त्र का स्वरूप

जिनकी धुनि है ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा अनूप ।
 दशअष्ट महाभाषा समेत, लघु भाषा सात शतक सुचेत ॥३॥
 सो स्याद्वादमय सप्तभंग, गणधर गृथे बारह सुअंग ।
 रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमो बहु प्रीति त्व्याय ॥४॥

गुरु का स्वरूप

गुरु आचारज उवज्ञाय साध, तन नगन रत्नत्रयनिधि अगाध ।
 संसार देह वैराग्य-धार, निरवांछि तपैं शिव-पद निहार ॥५॥
 गुण छत्तिस पच्चिस आठबीस, भव तारनतरन जिहाज ईश ।
 गुरु की महिमा वरनी न जाय, गुरुनाम जपो मन-वचन-काय ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरथा

कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै ।
 ‘द्यानत’ सरधावान, अजर-अमरपद भोगवै ॥७॥

इत्याशीर्वादः

(मिथ्यात्व दलन सिद्धान्त साधक मुक्ति मारग जानिये ।
 करनी अकरनी सुगति दुर्गति, पुण्य पाप बखानिये ॥
 संसार सागर तरन तारन, गुरु जहाज विशेखिये ।
 जग मांहि गुरुसम कह ‘बनारसि’ और कोउ न देखिए ॥)

दोहा

(श्रीजिनके परसाद तैं सुखी रहैं सब जीव ।
 यातैं तन मन वचन तैं सेवो भव्य सदीव ॥)

चउकर्म की ६३ प्रकृति नाशि का खुलासा—१. जीवविपाकी-ज्ञानावरण ५ + दर्शनावरण ९ + मोहनीय २८ + अंतराय ५ + गति २ (नरकगति और तिर्यगति) + एकेन्द्रिय आदि चार जातियाँ + सूक्ष्म-स्थावर । पुद्गलविपाकी—आतप, उद्योत, साधारण । क्षेत्रविपाकी—नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यगत्यानुपूर्वी । भवविपाकी—नरकायु, तिर्यचायु और देवायु । पाठान्तर-कर्मन की २. चार घातिया कर्म व ६३ प्रकृतियाँ ।



श्रीदेवशास्त्रगुरु पूजा

केवल रवि किरणों से जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर,
 उस श्री जिनवाणी में होता, तत्त्वों का सुन्दरतम दर्शन ।
 सद्वर्णन-बोध-चरण पथ पर, अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण,
 उन देव परम आगम गुरु को, शत-शत वंदन शत-शत वंदन ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सञ्चिहितो भव भव वषट् ।

जोगीरासा

झन्द्रिय के भोग मधुर विष सम, लावण्यमयी कंचन काया ।
 यह सब कुछ जड़ की क्रीड़ा है, मैं अब तक जान नहीं पाया ॥
 मैं भूल स्वयं निज वैभव को, पर ममता मैं अटकाया हूँ ।
 अब निर्मल सम्यक् नीर लिये, मिथ्या मल धोने आया हूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जड़ चेतन की सब परिणति प्रभु! अपने-अपने में होती है।
अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें, यह झूठी मन की वृत्ति है॥
प्रतिकूल संयोगों में क्रोधित, होकर संसार बढ़ाया है।
संतप्त हृदय प्रभु! चन्दन सम, शीतलता पाने आया है॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
उज्ज्वल हूँ कुन्द ध्वल हूँ प्रभु! पर से न लगा हूँ किंचित् भी ।
फिर भी अनुकूल लगें उन पर, करता अभिमान निरन्तर ही॥
जड़ पर झुक झुक जाता चेतन, की मार्दव की खण्डित काया ।
निज शाश्वत अक्षयनिधि पाने, अब दास चरणरज में आया॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तयेऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन में माया कुछ शेष नहीं ।
निज अन्तर का प्रभु भेद कहूँ, उसमें ऋजुता का लेश नहीं॥
चिंतन कुछ फिर संभाषण कुछ, वृत्ति कुछ की कुछ होती है ।
स्थिरता निज में प्रभु पाऊँ जो, अन्तर का कालुष धोती है॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
अब तक अगणित जड़ द्रव्यों से, प्रभु! भूख न मेरी शान्त हुई ।
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही॥
युग युग से इच्छा सागर में, प्रभु! गेते खाता आया हूँ ।
पंचेन्द्रिय मन के षट्क्रस तज, अनुपम रस पीने आया हूँ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
जग के जड़ दीपक को अब तक समझा था मैंने उजियारा ।
झंझा के एक झकोरे में जो बनता घोर तिमिर कारा॥
अतएव प्रभो! यह नश्वर दीप, समर्पण करने आया हूँ ।
तेरी अन्तर लौ से निज अन्तर दीप जलाने आया हूँ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
जड़ कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी ।
मैं राग-द्वेष किया करता, जब परिणति होती जड़ केरी॥
यों भाव-करम या भाव-मरण, सदियों से करता आया हूँ ।
निज अनुपम गंध अनल से प्रभु, पर गंध जलाने आया हूँ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
जग में जिसको निज कहता मैं, वह छोड़ मुझे चल देता है ।
मैं आकुल व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है॥
मैं शान्त निराकुल चेतन हूँ, है मुक्ति रमा सहचर मेरी ।
यह मोह तड़ककर टूट पड़े प्रभु! सार्थक फल पूजा तेरी॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
क्षणभर निज रस को पी चेतन, मिथ्या मल को धो देता है ।
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द अमृत पीता है॥
अनुपम सुख तब विलसित होता, केवल रवि जगमग करता है ।
दर्शन बल पूर्ण प्रकट होता, यह ही अर्हन्त अवस्था है॥

यह अर्ध समर्पण करके प्रभु! निज गुण का अर्ध बनाऊँगा ।
औ निश्चित तेरे सदृश प्रभो! अहन्त अवस्था पाऊँगा ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये ॥१०॥ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला (बारह भावना)

भव-वन में जी भर धूम चुका, कण-कण को जी भर भर देखा ।
मृग-सम मृग-तृष्णा के पीछे, मुझको न मिली सुख की रेखा ॥१॥
झूठे जग के सपने सारे, झूठी मन की सब आशायें ।
तन जीवन यौवन अस्थिर है, क्षणभंगुर पल में मुरझायें ॥२॥
सप्तरात् महा-बल सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या ।
अशरण मृत काया में हर्षित, निज जीवन डाल सकेगा क्या ॥३॥
संसार महा दुख सागर के, प्रभु दुखमय सुख आभासों में ।
मुझको न मिला सुख क्षण भर भी, कंचन-कामिनि-प्रासादों में ॥४॥
मैं एकाकी एकत्व लिये, एकत्व लिये सब ही आते ।
तन धन को साथी समझा था, पर वे भी छोड़ चले जाते ॥५॥
मेरे न हुये ये, मैं इनसे, अति भिन्न अखण्ड निराला हूँ ।
निज में पर से अन्यत्व लिये, निज सम रस पीने वाला हूँ ॥६॥
जिसके शूङ्गारों में मेरा, यह मँहगा जीवन घुल जाता ।
अत्यन्त अशुचि जड़ काया से, इस चेतन का कैसा नाता ॥७॥
दिन-रात शुभाशुभ भावों से, मेरा व्यापार चला करता ।
मानस वाणी अर काया से, आस्रव का द्वार खुला रहता ॥८॥
शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तस्थल ।
शीतल समकित किरणें फूटें, संवर से जागे अन्तर्बल ॥९॥
फिर तप की शोधक वहि जगे, कर्मों की कड़ियाँ ढूट पड़ें ।
सर्वाङ्ग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के निर्झर फूट पड़ें ॥१०॥
हम छोड़ चले यह लोक तभी, लोकांत विराजें क्षण में जा ।
निज लोक हमारा वासा हो, फिर भव बन्धन से हमको क्या ॥११॥
जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो! दुर्न्यतम सत्वर टल जावे ।
बस ज्ञाता-द्रष्टा रह जाऊँ, मद-मत्सर मोह विनश जावे ॥१२॥
चिर रक्षक धर्म हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी ।
जग में न हमारा कोई था, हम भी न रहें जग के साथी ॥१३॥

देव स्तवन

चरणों में आया हूँ प्रभुवर, शीतलता मुझको मिल जावे ।
मुरझाई ज्ञान लता मेरी, निज अन्तर्बल से खिल जावे ॥१४॥
सोचा करता हूँ भोगों से, बुझ जावेगी इच्छा ज्वाला ।
परिणाम निकलता है लेकिन, मानों पावक में धी डाला ॥१५॥
तेरे चरणों की पूजा से, इन्द्रिय सुख की ही अभिलाषा ।
अब तक न समझ ही पाया प्रभु! सच्चे सुख की भी परिभाषा ॥१६॥
तुम तो अविकारी हो प्रभुवर! जग में रहते जग से न्यारे ।
अतएव झुके तव चरणों में, जग के माणिक मोती सारे ॥१७॥

शास्त्रस्तवन

स्याद्वादमयी तेरी वाणी, शुभ नय के झारने झारते हैं ।
उस पावन नौका पर लाखों, प्राणी भव वारिधि तिरते हैं ॥१८॥

गुरुस्तवन

हे गुरुवर ! शाश्वत सुख दर्शक, यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है ।
जग की नश्वरता का सच्चा, दिग्दर्शन करने वाला है ॥१९॥
जब जग विषयों में रच-पचकर, गाफिल निद्रा में सोता हो ।
अथवा वह शिव के निष्कंटक, पथ में विष-कंटक बोता हो ॥२०॥
हो अर्द्ध निशा का सन्नाटा, वन में वनचारी चरते हों ।
तब शान्त निराकुल मानस तुम, तत्त्वों का चिंतन करते हो ॥२१॥
करते तप शैल नदी तट पर, तरुतल वर्षा की झड़ियों में ।
समता रस पान किया करते, सुख-दुख दोनों की घड़ियों में ॥२२॥
अन्तर ज्वाला हरती वाणी, मानों झड़ती हों फुलझड़ियाँ ।
भव बध्न तड़-तड़ दूट पड़ें, खिल जावें अन्तर की कलियाँ ॥२३॥
तुम सा दानी क्या कोई हो, जग को दे दीं जग की निधियाँ ।
दिन रात लुटाया करते हो, सम-शम की अविनश्वर मणियाँ ॥२४॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्थपदप्राप्तये महार्थं निर्वपामीति स्वाहा ।

हे निर्मल देव ! तुम्हें प्रणाम, हे ज्ञान दीप आगम ! प्रणाम ।
हे शान्ति त्याग के मूर्तिमान, शिव-पथ-पंथी गुरुवर ! प्रणाम ॥२५॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्

समुच्चय पूजा

देवशास्त्र गुरु नमन करि, बीस तीर्थकर ध्याय ।

सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूँ चित्त हुलसाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतिरीर्थङ्करानन्तानन्तसिद्धपरमेष्ठिसमूह !

अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतिरीर्थङ्करानन्तानन्तसिद्धपरमेष्ठिसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतिरीर्थङ्करानन्तानन्तसिद्धपरमेष्ठिसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

(जोगीरासा)

अनादिकाल से जग में स्वामिन्, जल से शुचिता को माना ।

शुद्ध निजातम सम्यक् रत्नत्रय-निधि को नहीं पहचाना ।

अब निर्मल रत्नत्रय जल ले, श्री देवशास्त्रगुरु को ध्याऊँ ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतिरीर्थङ्करानन्तानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्यो

जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

भव आताप मिटावन की, निज में ही क्षमता समता है ।

अनजाने अब तक मैंने, पर में की झूठी ममता है ॥

चन्दन सम शीतलता पाने, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतिरीर्थङ्करानन्तानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्यो भवातापविनाशनाय

चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षय पद बिन फिरा, जगत की लख चौरासी योनी में ।

अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिग लाया मैं ॥

अक्षय निधि निज की पाने अब, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०
ॐ हीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतितीर्थङ्करानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये
अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है ।
मन्मथ बाणों से बिंध करके, चहुँगति दुःख उपजाया है ॥

स्थिरता निज में पाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०
ॐ हीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतितीर्थङ्करानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय
पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

षट्रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शान्त हुई ।

आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई ॥

भूख सर्वथा मेटन को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ ॥

ॐ हीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतितीर्थङ्करानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय
नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जड़ दीप विनश्वर को अब तक, समझा था मैंने उजियारा ।

निज गुण दरशायक ज्ञान दीप से, मिटा मोह का अंधियारा ॥

ये दीप समर्पित करके मैं, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०

ॐ हीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतितीर्थङ्करानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्यो

मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी ।

निज में निज की शक्ति ज्वाला, जो राग-द्वेष नशायेगी ॥

उस शक्ति दहन प्रगटाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०

ॐ हीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतितीर्थङ्करानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं
निर्वपामीति स्वाहा ।

पिस्ता बादाम श्रीफल लवंग, चरणन तुम ढिग मैं ले आया ।

आतम रस भीने निज गुण फल, मम मन अब उनमें ललचाया ॥

अब मोक्ष महाफल पाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०

ॐ हीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतितीर्थङ्करानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये
फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये ।

सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निज गुण प्रकट किये ॥

यह अर्ध समर्पण करके मैं, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०

ॐ हीं श्रीदेवशास्त्रगुरुविद्यमानविंशतितीर्थङ्करानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं
निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

(देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु भगवान ।

अब वरणूँ जयमालिका, करुँ स्तवन गुणगान ॥)

भुजंगप्रयात

नसे धातिया कर्म अर्हत देवा, करें सुर-असुर नर-मुनि नित्य सेवा ।
दरश-ज्ञान-सुख-बल-अनन्त के स्वामी, छियालीस गुण युत महाईश नामी ॥
तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी, महा मोह विध्वंसिनी मोक्ष-दानी ।
अनेकान्तमय द्वादशांगी बखानी, नमो लोक माता श्री जैन वाणी ॥

विरागी अचारज उवज्ज्ञाय साधू, दरश-ज्ञान भण्डार समता अराधू ।
नगन वेशधारी सु एका विहारी, निजानन्द मंडित मुकति पथ प्रचारी ॥
विदेह क्षेत्र में तीर्थकर बीस राजे, विहरमान वंदूं सभी पाप भाजे ।
नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी ॥

जोगीरासा

देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थकर, सिद्ध हृदय बिच धर ले रे ।
पूजन ध्यान गन गुण करके, भव सागर जिय तर ले रे ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यः श्रीअनन्तानन्तसिद्ध-
परमेष्ठिभ्योऽनर्थपदप्राप्तये जयमालामहार्थ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

भूत भविष्यत् वर्तमान की तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ ।
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम तीन लोक के मन लाऊँ ॥
ॐ ह्रीं त्रिकालसम्बन्धिविंशत्यधिकसप्तशतजिनेभ्यः
त्रिलोकसम्बन्धिकृत्रिमचैत्यालयेभ्यश्च अर्थ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

चैत्य भक्ति आलोचन चाहूं, कायोत्सर्ग अघ नाशन हेत ।
कृत्रिमा-कृत्रिम तीन लोक के राजत हैं जिन बिम्ब अनेक ॥
चतुर निकाय के देव जजें ले अष्ट द्रव्य निज भक्ति सपेत ।
निज शक्ति अनुसार जजूं मैं, कर समाधि पाऊँ शिवखेत ॥
ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्योऽर्थ्य निर्व० ।

पूर्व मध्य अपराह्ण की बेला, पूर्वचार्यों के अनुसार ।
देव वन्दना करुं भाव से सकल कर्म की नाशन हार ॥
पंच महागुरु सुमरन करके, कायोत्सर्ग करुं सुखकार ।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना जाऊँगा अब मैं भव पार ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत् (कायोत्सर्ग करें)



नवदेवता पूजा

(हरिगीतिका छन्द)

अरिहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु त्रिभुवन वंद्य हैं ।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वरमूर्ति जिनगृह वंद्य हैं ॥
नव देवता ये मान्य जग में, हम सदा अर्चा करें ।
आह्वान कर थापे यहाँ मन मैं अतुल श्रद्धा धरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह !
अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-
जिनचैत्यचैत्यालयसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-
सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

गंगा नदी का नीर निर्मल, बाह्य मल धोवे सदा ।
अंतर मलों के क्षालने को नीर से पूजूँ मुदा ॥
नव देवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें ।
सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो
जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूर मिश्रित गंध चंदन देह, ताप निवारता ।

तुम पाद पंकज पूजते, मन ताप तुरतहि वारता ॥ नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो
भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षीरोदधी के फेन सम सित तंदुलों को लायके ।

उत्तम अखंडित सौख्य हेतु, पुंज नव सु चढ़ायके ॥ नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये
अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

चंपा चमेली केवड़ा, नाना सुगंधित ले लिये ।

भव के विजेता आपको, पूजत सुमन अर्पण किये ॥

नव देवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें ।

सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः
कामबाणविनाशनाय पुष्टं निर्वपामीति स्वाहा ।

पायस मधुर पकवान मोदक, आदि को भर थाल में ।

निजआत्म अमृत सौख्य हेतु पूजहूँ नतभाल में ॥ नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः क्षुधा-
रोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूर ज्योति जगमगे दीपक लिया निज हाथ में ।

तव आरती तम वारती, पाऊँ सुज्ञान प्रकाश में ॥ नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो
मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दश गंध धूप अनूप सुरभित, अग्नि में खेऊँ सदा ।

निज आत्मगुण सौरभ उठे, हों कर्म सब मुझसे विदा ॥ नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्योऽष्टकर्मदहनाय
धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंगूर अमरख आम्र अमृत, फल भराऊँ थाल में ।

उत्तम अनूपम मोक्ष फल के, हेतु पूजूँ आज में ॥ नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो
मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंध अक्षत पुष्ट चरु दीपक सुधूप फलार्घ्य ले ।

वर रत्नत्रयनिधि लाभ यह बस अर्घ्य से पूजत मिले ॥ नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये
अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

जलधारा से नित्य मैं, जग की शांति हेत ।
नवदेवों को पूजहूँ, श्रद्धा भक्ति समेत ॥

(शान्तये शान्तिधारा)

नाना विधि के सुमन ले, मन मैं बहु हरषाय ।
मैं पूजूँ नवदेवता, पुष्पाञ्जलि चढ़ाय ॥

(दिव्यपुष्पाञ्जलिः)

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः ।
(९, २७ या १०८ बार जाप दें)

जयमाला

सोरठा

चिच्छिंतामणिरत्न, तीन लोक में श्रेष्ठ हो ।
गाऊँ गुण मणिमाल, जयवंते वर्तो सदा ॥१॥

हे दीनबन्धु.....

जय जय श्री अरिहंत देव देव हमारे,
जय घातिया को घात सकल जन्तु उबारे ।
जय जय प्रसिद्ध सिद्ध की मैं वंदना करूँ,
जय अष्ट कर्ममुक्त की मैं अर्चना करूँ ॥२॥

आचार्य देव गुण छत्तीस धार रहे हैं,
दीक्षादि दे असंख्य भव्य तार रहे हैं ।
जैवंत उपाध्याय गुरु ज्ञान के धनी,
सन्मार्ग के उपदेश की वर्षा करें धनी ॥३॥

जय साधु अठाईस गुणों को धरें सदा,
निज आतमा की साधना से च्युत न हों कदा ।
ये पंच परम देव सदा वंद्य हमारे,
संसार विषम सिंधु से हमको भी उबारें ॥४॥

जिनधर्म चक्र सर्वदा चलता ही रहेगा,
जो इसकी शरण ले वो सुलझता ही रहेगा ।
जिनकी ध्वनि पीयूष का जो पान करेंगे,
भव रोग दूर कर वे मुक्तिकान्त बनेंगे ॥५॥

जिन चैत्य की जो वंदना त्रिकाल करे हैं,
वे चित्स्वरूप नित्य आत्म लाभ करे हैं ।
कृत्रिम व अकृत्रिम जिनालयों को जो भजें,
वे कर्मशत्रु जीत शिवालय में जा बसें ॥६॥

नव देवताओं की जो नित आराधना करें,
वे मृत्युराज की भी तो विराधना करें ।
मैं कर्मशत्रु जीतने के हेतु ही जजूँ,
संपूर्ण ‘ज्ञानमती’ सिद्धि हेतु ही भजूँ ॥७॥

दोहा

नव देवों को भक्तिवश, कोटि कोटि प्रणाम ।
भक्ति का फल मैं चहूँ, निज पद में विश्राम ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो जयमालार्थ
निर्वपामीति स्वाहा ।

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से नव देवता पूजा करें ।
वे सब अमंगल दोष हर, सुख शांति में झूला करें ॥
नवनिधि अतुल भंडार ले, फिर मोक्ष सुख भी पावते ।
सुखसिंधु में हो मग्न फिर, यहाँ पर कभी न आवते ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्

नवदेवता पूजन

स्थापना

(गीता छंद)

अरि चार घाति विनाश कर, अरहंत पद को पा लिया।
 पुरुषार्थ प्रबल किया प्रभो, मुक्तीरमा को वर लिया॥
 अरहंत पथ पर चल रहे, आचार्य पद वंदन करूँ।
 उवझाय साधु श्रेष्ठ पद का, भक्ति से अर्चन करूँ॥१॥
 जिन धर्म आगम चैत्य चैत्यालय शरण को पा लिया।
 भव-सिंधु पार उतारने, नौका सहारा ले लिया॥
 यह भावना मेरी प्रभो, मम ज्ञान महल पधारिये।
 निज सम बना लीजे मुझे, जिनराज पदवी दीजिये॥२॥

दोहा

सुख दाता नव देवता, तिष्ठो हृदय मँझार।
 भावों से आह्वान करूँ, करो भवोदधि पार॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालय-समूह!
 अत्र अवतर अवतर संबोधट्।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालय-
 समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनचैत्य-चैत्यालय-समूह!
 अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(तर्ज—माता तू दया करके...)

जिनको अपना माना, उनसे ही दुख पाया।
 फिर भी क्यों राग किया, यह समझ नहीं आया॥
 यह राग की आग मिटे, ऐसा जल दो स्वामी।
 नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी॥१॥
 ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-

चैत्यालयेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

प्रभो! काल अनादि से, भव का संताप सहा।
 अब सहा नहीं जाता, यह मेटो द्वेष महा॥
 इस द्वेष की ज्वाला को, अब शांत करो स्वामी।
 नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी॥२॥

ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं...।

जिसको मैंने चाहा, सब नश्वर है माया।
 जिस तन में हूँ रहता, क्षणभंगुर वह काया॥
 क्षत विक्षत जग सारा, अब जाऊँ कहाँ स्वामी।
 नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी॥३॥

ॐ ह्रीं नवदेवेभ्योऽक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान्...।

इस काम लुटेरे ने, आतम धन लूट लिया।
 मैं मौन खड़ा निर्बल, बस तेरा शरण लिया॥
 विश्वास मुझे तुम पर, आतम बल दो स्वामी।
 नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी॥४॥

ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पाणि...।

इस क्षुधा रोग से मैं, प्रभुकर लाचार रहा।
 व्यंजन की औषध खा, ना कुछ उपचार हुआ॥
 प्रभु तू ही सहारा है, यह रोग नशे स्वामी।
 नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी॥५॥

ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

पर तत्त्व प्रशंसा में, महिमा पर की आयी ।
 नर तन में रहकर भी, निज की ना सुध आयी ॥
 अब ज्ञान ज्योति प्रगटे, आशीष मिले स्वामी ।
 नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी ॥६॥
 ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यो मोहांधकार-विनाशनाय दीपं.. ।
 कर्मों की आँधी में, चेतन गृह बिखर गया ।
 आया अब दर तेरे, निज आत्म निखर गया ॥
 शुभ ध्यान अनल में ही, वसु कर्म जले स्वामी ।
 नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी ॥७॥
 ॐ ह्रीं नवदेवेभ्योऽष्टकर्म-दहनाय धूपं.. ।
 पापों का बीज बोया, कैसे शिव फल पाऊँ ।
 तप धारूँ कर्म नशे, तब सिद्धालय पाऊँ ॥
 मुझे पास बुला लेना, यह अरज सुनो स्वामी ।
 नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी ॥८॥
 ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं... ।
 वसु कर्मों ने मिलकर, दिन-रात जलाया है ।
 गुरुदेव कृपा पाकर, यह अर्घ्य बनाया है ॥
 यह पद अनर्घ्य अनमोल, हो प्राप्त मुझे स्वामी ।
 नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी ॥९॥
 ॐ ह्रीं नवदेवेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्य... ।

जाप्य

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-
चैत्यालयेभ्यो नमः ॥९ बार ॥

जयमाला

दोहा

नव देवों की भक्ति से, सब अरिष्ट नश जाय ।

आत्म सिद्धि को प्राप्त कर, अष्टम वसुधा पाय ॥१॥

(चौपाई)

जय अरहंत देव जिनराई, तीन लोक में महिमा छाई ।
 घाति कर्म चउ नाश किये हैं, भव्य जनों में वास किये हैं ॥२॥
 दोष अठारह दूर किये हैं, छ्यालीस गुण पूर्ण हुये हैं ।
 समवसरण के बीच विराजे, तीर्थकर पद महिमा राजे ॥३॥
 क्षणभंगुर सारा जग जाना, जड़ चेतन को भिन्न पिछाना ।
 कल्याणक सब पंच मनाये, देव इंद्र हर्षित गुण गाये ॥४॥
 प्रभो! आपने प्रभुता पायी, दो हमको समता सुखदायी ।
 दुष्ट करम ने मुझको धेरा, निज स्वभाव से मुख को फेरा ॥५॥
 प्रभो आप सिद्धालय वासी, दर दर भटका मैं जगवासी ।
 अब निज भूल समझ में आई, सिद्धदशा ही मन में भायी ॥६॥
 करो नमन स्वीकार हमारा, भव सागर से करो किनारा ।
 कर्म भँवर में मेरी नैया, गुरुवर तुम बिन कौन खिवैया ॥७॥
 गुण छत्तीस मुनीश्वर धारे, इस कलयुग में आप सहारे ।
 दीक्षा देकर राह दिखाते, खुद चलते चलना सिखलाते ॥८॥
 उपाध्याय पद है तम नाशे, गुण पच्चीस ज्ञान परकासे ।
 अद्वाईस गुणों के धारी, साधू पद की महिमा भारी ॥९॥

श्री जिनधर्म अहिंसा प्यारा, गूँज उठा है जग में नारा ।
 आगम आत्म बोध कराता, फिर चेतन का शोध कराता ॥१०॥

जिनने आगम को अपनाया, अहो भाग्य तुम सा पद पाया ।
 अनेकांतमय धर्म सहारा, द्वादशांग को नमन हमारा ॥११॥

कर्म निकाचित निधनि विनाशे, बिम्ब जिनेश्वर आत्म प्रकाशे ।
 निज स्वरूप का बोध कराती, जिन सम जिन मूरत कहलाती ॥१२॥

जो जन नित जिन मंदिर जावे, पाप नशे औ पुण्य बढ़ावे ।
 परमात्म का ध्यान लगावे, शुद्ध होय मुक्तीपुर जावे ॥१३॥

नव देवों को शीश झुकाऊँ, गुण गाऊँ और ध्यान लगाऊँ ।
 रहूँ सदा मैं प्रभुकर चरणा, भव-भव मिले आपकी शरणा ॥१४॥

देह

पूर्व पुण्य से हो रहा, नव देवों का दर्श ।
 अल्प बुद्धि कैसे लहे, अनंत गुण का स्पर्श ॥१५॥

ॐ ह्रीं अहंतिष्ठाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-
 चैत्यालयेभ्यो जयमाला पूर्णार्थ्य... ।

घटा

प्रभुकर को पूजे, शिव पथ सूझे, भव-भव का संताप हरो ।
 नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, ‘विद्यासागर पूर्ण’ करो ॥

इत्याशीर्वादः पुष्ट्याज्जलिं क्षिपेत् / क्षिपामि ।

लघु चैत्यभक्ति

इन्द्रवज्रा

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु, नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
 यावन्ति चैत्यायतनानि लोके, सर्वाणि वन्दे जिनपुङ्गवानाम् ॥

मालिनी

अवनितल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
 वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानाम् ।
 इह मनुज-कृतानां देवराजार्चितानां
 जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥

शार्दूलविक्रीडितम्

जम्बूधातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्रत्रये ये भवा-
 श्नन्द्राभ्योजशिखण्डिकण्ठकनक-प्रावृद्धनाभा जिनाः ।
 सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा, दग्धार्धकर्मेन्धनाः,
 भूतानागत-वर्तमानसमये, तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥

स्वर्गथरा

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ, रजतगिरिवरे, शाल्मलौ जम्बुवृक्षे
 वक्षारे चैत्यवृक्षे, रतिकर - रुचके, कुण्डले मानुषाङ्के ।
 इष्वाकारेऽज्जनाद्रौ, दधिमुखशिखरे, व्यन्तरे स्वर्गलोके
 ज्योतिर्लकिऽभिवन्दे, भुवनमहितले, यानि चैत्यालयानि ॥

शार्दूलविक्रीडितम्

द्वौ कुन्देन्दु-तुषारहार-ध्वलौ, द्वाविन्द्रनील-प्रभौ,
 द्वौ बन्धूक-सम-प्रभौ जिनवृष्टौ, द्वौ च प्रियङ्गुप्रभौ ।
 शेषाः षोडश-जन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेम-प्रभा-
 स्ते सज्ज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥

अंचलिका

इच्छामि भंते! चेइयभत्ति-काउस्सगो कओ तस्सालोचेउं अहलोय-
तिरियलोय-उहूलोयमि किद्विमाकिद्विमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसु वि
लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासियति चउव्विहा देवा सपरिवारा
दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुफेण दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुणेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण
णहाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति अहमवि इह संतो तथ्य संताइं
णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो
सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्जं ।

अथ पौर्वाहिक(माध्याहिक/आपराहिक)देववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण
सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीपञ्चमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।
तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।

णमो उवज्ञायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

सिद्धपूजा (द्रव्याष्टकम्)

ऊर्ध्वाधोरयुतं सबिन्दु-सपरं, ब्रह्मस्वरावेष्टितं,

वर्गापूरित-दिग्गताम्बुजदलं, तत्सच्चित्त्वान्वितम् ।

अन्तःपत्रतेष्वनाहतयुतं, हींकारसंवेष्टितं,

देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो, वैरीभक्तिरवः ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवैषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अनुष्टुप्

निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।

वन्देऽहं परमात्मानममूर्तमनुपद्रवम् ॥

सिद्धयन्त्रस्थापनम्

वसन्ततिलका

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं, हान्यादिभावरहितं भववीत-कायम् ।

रेवापगावरसरोयमुनोद्भवानां, नीरैर्यजे कलशगैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं, सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतम् ।

सौरभ्यवासित-भुवं हरि-चन्दनानां, गर्व्यैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने भवातापविनाशनाय चन्दनं ।

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं, सिद्धं स्वरूपनिषुणं कमलं विशालम् ।

सौगन्ध्यशालिवन-शालिवराक्षतानां, पुञ्जैर्यजे शशि-निर्भैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

नित्यं स्वदेह-परिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानपेक्षाममृतं मरणाध्यतीतम् ।

मन्दारकुन्द-कमलादि-वनस्पतीनां, पुञ्जैर्यजे शुभतमैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्टं ।

ऊर्ध्वस्वभाव-गमनं सुमनोव्यपेतं, ब्रह्मादि-बीज-सहितं गगनावभासम् ।

क्षीरान्न-प्राज्ञ-वटकै रसपूर्णगर्भनित्यं यजे चरुवरैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं ।

पश्यन्समस्त-भुवनं युगपन्नितान्तं, त्रैकाल्य-वस्तु-विषये निविड-प्रदीपम् ।
कर्पूर-वर्ति-बहुभिः कनकावदातैर्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशाय दीपं ।
आतङ्क-शोक-भय-रोग-मद-प्रशान्तं, निर्दन्ध-भाव-धरणं महिमा-निवेशम् ।
सद्ग्रव्य-गन्ध-घनसार-विमिश्रितानां, धूपैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं ।
सिद्धासुराधिपति-यक्ष-नरेन्द्र-चक्रैर्थ्यें शिवं सकल-भव्य-जनैः सुवन्ध्यम् ।
नारिङ्ग-पूग-कदलीफल-नारिकेलैः, सोऽहं यजे वरफलैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षपदप्राप्तये फलं ।

शार्दूलविक्रीडितम्

गन्धाढ्यं सुपयो-मधुव्रत-गणैः सङ्गं वरं चन्दनं,
पुष्पौधं विमलं सदक्षत-चयं रम्यं चरुं दीपकम् ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये,
सिद्धानां युगपत्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तयेऽर्धं ।

वसन्ततिलका

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं, सूक्ष्म-स्वभाव-परमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मैघ-कक्ष-दहनं सुख-सस्य-बीजं, वन्दे सदा निरुपमं वर-सिद्ध-चक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

शार्दूलविक्रीडितम्

त्रैलोक्येश्वर-वन्दनीय-चरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतां,
यानाराध्य निरुद्ध-चण्ड-मनसः सन्तोऽपि तीर्थङ्गराः ।
सत्सम्यक्त्व - विबोध - वीर्य - विशदाव्यावाधताद्यैर्गुणै-
र्युक्तांस्तानिह तोषवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥

पुष्पाभ्यालिं क्षिपेत्

जयमाला

विराग सनातन शान्त निरंश, निरामय निर्भय निर्मल-हंस ।
सुधाम विबोध-निधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥१॥
विदूरित-संसृति-भाव निरङ्ग, समामृत-पूरित देव विसङ्ग ।
अबन्ध कषाय-विहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥२॥
निवारित-दुष्कृत-कर्म-विपाश, सदामल-केवल-केलिनिवास ।
भवोदधि-पारग शान्त विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥३॥
अनन्त-सुखामृतसागर धीर, कलङ्ग-रजो-मल-भूरि-समीर ।
विखण्डित-काम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥४॥
विकारविवर्जित तर्जितशोक, विबोध-सुनेत्र-विलोकितलोक ।
विहार विराव विरङ्ग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥५॥
रजोमल-खेद-विमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ।
सुदर्शन-राजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥६॥
नरामर-वन्दित निर्मलभाव, अनन्त-मुनीश्वर-पूज्य विहाव ।
सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥७॥

विदम्भ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परात्पर शङ्कर सार वितन्द्र ।
 विकोप विरुप विशङ्क विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥८॥
 जरा-मरणोज्जित वीतविहार, विचिन्तित निर्मल निरहङ्कार ।
 अचिन्त्य-चरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥९॥
 विवर्ण विगन्ध विमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ ।
 अनाकुल केवल सार्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥१०॥
 ॐ ह्रीं क्षायिकसम्यक्त्व-अनन्तज्ञान-अनन्तदर्शन-अनन्तवीर्य-अगुरुलघुत्व-अवगाहनत्व-
 सूक्ष्मत्व-निराबाधत्वगुणसम्पन्नश्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

मालिनी

असम-समयसारं चारु - चैतन्य - चिह्नं,
 पर - परिणति - मुक्तं पद्मनन्दीन्द्र - वन्धम् ।
 निखिल - गुण - निकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं,
 स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥११॥

इत्याशीर्वादः

~~~~~

## सिद्धपूजा (भावाष्टकम्)

निज-मनो-मणि-भाजनभारया शम-रसैक-सुधारसधारया ।  
 सकल-बोध-कला-रमणीयकं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥  
 ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०  
 सहज-कर्म-कलङ्क-विनाशनै-रमलभाव-सुवासित-चन्दनैः ।  
 अनुपमान-गुणावलि-नायकं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥  
 ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्व०  
 सहज-भाव-सुनिर्मलतण्डुलैः सकलदोष-विलास-विशोधनैः ।  
 अनुपरोध-सुबोध-निधानकं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥  
 ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपद्मापातये अक्षतान् निर्व. स्वाहा ।  
 समयसार-सुपुष्प-सुमालया सहज-कर्मक-रेणु-विशोधया ।  
 परम-योग-बलेन वशीकृतं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥  
 ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविघ्नसनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा ।  
 अकृतबोध-सुदिव्य-निवेद्यकैर्विहित-जातिजरामरणान्तकैः ।  
 निरवधि-प्रचुरात्म-गुणालयं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥  
 ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति०  
 सहज-रत्नरुचि-प्रतिदीपकैः रुचि-विभूति-तमःप्रविनाशनैः ।  
 निरवधि-स्वविकास-विकाशनं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥  
 ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व०  
 निज-गुणाक्षय-रूप-सुधूपनैः स्वगुणधातिमलप्रविनाशनैः ।  
 विशद-बोध-सुदीर्घ-सुखात्मकं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥  
 ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।  
 परम-भावफलावलि-सम्पदा सहजभाव-कुभावविशोधया ।  
 निज-गुणस्फुरणात्म-निरञ्जनं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥  
 ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेत्रोन्मीलि-विकास-भाव-निवहैरत्यन्त-बोधाय वै,  
वार्गन्धाक्षत-पुष्ट-दाम-चरुकैः सद्ब्रीप-धूपैः फलैः ।  
यश्चिन्तामणि-शुद्ध-भाव-परम-ज्ञानात्मकैरर्चयेत्,  
सिद्धं स्वादु-मगाध-बोधमचलं संचर्चयामो वयम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

## सिद्धपूजा (भावाष्टक)

पं. हीराचन्द्र

अडिल्ल छन्द

अष्टकरमकरि नष्ट अष्ट गुण पायकैं,  
अष्टम वसुधा माँहिं विराजे जायकैं ।  
ऐसे सिद्ध अनंत महंत मनायकैं,  
संवौषट् आह्नान कर्णं हरषायकैं ॥१॥

ॐ ह्रीं एमो सिद्धाण्डं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं एमो सिद्धाण्डं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं एमो सिद्धाण्डं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सविहितो भव भव वषट् ।

छन्द त्रिभंगी

हिमवनगत गंगा आदि अभंगा, तीर्थ उतंगा सरवंगा ।  
आनिय सुरसंगा सलिल सुरंगा, करि मन चंगा भरि भृंगा ॥  
त्रिभुवन के स्वामी, त्रिभुवननामी, अंतरजामी अभिरामी ।  
शिवपुरविश्रामी, निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी शिरनामी ॥  
ॐ ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

हरिचंदन लायो कपूर मिलायो, बहु महकायो मन भायो ।  
जल संग घसायो रंग सुहायो, चरन चढ़ायो हरषायो ॥  
त्रिभुवन के स्वामी, त्रिभुवननामी, अंतरजामी अभिरामी ।  
शिवपुरविश्रामी, निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी शिरनामी ॥  
ॐ ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

तंदुल उजियारे शशि-दुति टारे, कोमल प्यारे अनियारे ।

तुष खंड निकारे जल सु पखारे, पुंज तुम्हारे ढिंग धारे ॥ त्रिभु०  
ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरतरु की बारी, प्रीतिविहारी, क्यारी प्यारी गुलजारी ।

भरि कंचन थारी माल सँवारी, तुम पद धारी अतिसारी ॥ त्रिभु०  
ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने पुष्टं०

पकवान निवाजे, स्वाद विराजे, अमृत लाजे क्षुत भाजे ।

बहु मोदक छाजे, धेवर खाजे, पूजन काजे करि ताजे ॥ त्रिभु०  
ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने नैवेद्य०

आपापर भासै ज्ञान प्रकाशै, चित्त विकासै तम नासै ।

ऐसे विध खासे दीप उजासे, धरि तुम पासे उल्लासे ॥ त्रिभु०  
ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने दीपं०

चुंबत अलिमाला गंध विशाला, चन्दन कालागरुवाला ।

तस चूर्ण रसाला करि ततकाला, अगनी ज्वाला में डाला ॥ त्रिभु०  
ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने धूपं  
निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल अतिभारा, पिस्ता प्यारा, दाख छुहारा सहकारा ।

रितु-रितु का न्यारा सत्फल सारा, अपरंपारा लै धारा ॥ त्रिभु०  
ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने फलं  
निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल वसु वृंदा अरघ अमंदा, जजत अनंदा के कंदा ।

मेटो भवफंदा सब दुखदंदा, ‘हीराचंदा’ तुम बंदा ॥ त्रिभु०  
ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं  
निर्वपामीति स्वाहा ।

### जयमाला

दोहा

ध्यान दहन विधिदारु दहि, पायो पद निरवान ।

पंचभाव-जुत थिर थये, नमौं सिद्ध भगवान ॥१॥

त्रोटक छन्द

सुख सम्यकदर्शन ज्ञान लहा, अगुरुलघु सूक्षम वीर्य महा ।

अवगाह अबाध अधायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥२॥

असुरेन्द्र सुरेन्द्र नरेन्द्र जजैं, भुवनेन्द्र खगेन्द्र गणेन्द्र भजैं ।

जर-जामन-मर्ण मिटायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥३॥

अमलं अचलं अकलं अकुलं, अछलं असलं अरलं अतुलं ।

अबलं सरलं शिवनायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥४॥

अजरं अमरं अघरं सुधरं, अडरं अहरं अमरं अधरं ।

अपरं असरं सब लायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥५॥

वृषवृन्द अमन्द न निन्द लहैं, निरदन्द अफन्द सुछन्द रहैं ।

नित आनन्दवृन्द बधायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥६॥

भगवन्त सुसन्त अनन्तगुणी, जयवन्त महन्त नमन्त मुनी ।

जगजन्तु तणों अधधायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥७॥

अकलंक अटंक शुभंकर हो, निरडंक निशंक शिवंकर हो ।

अभयंकर शंकर क्षायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥८॥

अतरंग अरंग असंग सदा, भवभंग अभंग उतंग सदा ।

सरवंग अनंग-नसायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥९॥

ब्रह्मण्ड जु मण्डलमण्डन हो, तिहुँ दण्ड प्रचण्ड विहण्डन हो ।

चिदपिण्ड अखण्ड अकायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१०॥

निरभोग सुभोग वियोग हरै, निरजोग अरोग अशोग धरै ।

भ्रमभंजन तीक्ष्ण सायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥११॥

जय लक्ष्य अलक्ष्य सुलक्षक हो, जय दक्षक पक्षक रक्षक हो ।

पण अक्ष प्रतक्ष खपायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१२॥

अप्रमाद अनाद सुस्वाद-रता, उनमाद-विवाद-विषाद-हता ।

समता रमता अकषायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१३॥

निरभेद अखेद अछेद सही, निरवेद निवेदन वेद नहीं ।  
 सब लोकअलोक के ज्ञायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१४॥  
 अमलीन अदीन अरीन हने, निज लीन अधीन अछीन बने ।  
 जम कौ घन घात बचायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१५॥  
 न अहार निहार विहार कबै, अविकार अपार उदार सबै ।  
 जग जीवन के मन भायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१६॥  
 असमन्ध अधन्द अरन्ध भये, निरबन्ध अखन्द अगन्ध ठये ।  
 अमनं अतनं निरवायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१७॥  
 निरवर्ण अकर्ण उधर्ण बली, दुखहर्ण अशर्ण सुशर्ण भली ।  
 बलि मोह की फौज भगायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१८॥  
 अविरुद्ध अकुद्ध अजुद्ध प्रभू, अतिशुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध विभू ।  
 परमात्म पूरन पायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१९॥  
 विरूप चिद्रूपस्वरूप द्युति, जसकूप अनूपम भूप भुती ।  
 कृतकृत्य जगत्त्रयनायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥२०॥  
 सब इष्ट अभीष्ट विशिष्ट हितू, उतकिष्ट वरिष्ट गरिष्ट मितू ।  
 शिव तिष्ठत सर्व सहायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥२१॥  
 जय श्रीधर श्रीघर हो, जय श्रीकर श्रीभर श्रीझर हो ।  
 जय ऋद्धि सुसिद्धि बढ़ायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥२२॥  
 ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये अर्द्धं निर्वपामीति ॥  
 दोहा

सिद्ध सुगुण को कहि सकै, ज्यों विलस्त नभ मान ।  
 ‘हिराचन्द’ तातैं जजै, करहु सकल कल्यान ॥  
 अडिल्ल

सिद्ध जजैं तिनको नहिं आवै आपदा,  
 पुत्र पौत्र धन धान्य लहैं सुख सम्पदा ।  
 इन्द्रचन्द्र धरणेन्द्र नरेन्द्र जु होयकैं,  
 जावैं मुकति मँझार करम सब खोयकैं ॥  
 पुष्टाजलिं क्षिपामि

## सिद्ध पूजा (भाषा)

(पं. द्यानतराय)

दोहा

परमब्रह्म परमात्मा, परमज्योति परमेश ।  
 परम निरंजन परम शिव, नमो परम सिद्धेश ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।  
 ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।  
 ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

(सोरठा)

मोह तृषा दुख देइ, सो तुमने जीती प्रभो ।  
 जल-सौं पूजों नेह, मेरा रोग मिटाइयो ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति  
 स्वाहा ।

हम भव-आतप माहिं, तुम न्यारे संसार तैं ।

कीजे शीतल छाँहि, चन्दन सों पूजा करों ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति० ।

हम औगुन समुदाय, तुम अक्षय सब गुण भरे ।

पूजों अक्षत ल्याय, दोष नाश गुण कीजिए ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति०

काम अग्नि है मोहि, निश्चय शील स्वभाव तुम ।

पुष्प चढ़ाऊँ तोहि, सेवक की पावक हरो ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति० ।

हमें क्षुधा-दुःख भूर, ज्ञान-खड़ग सों तुम हती ।

मेरी बाधा चूर, नेवज सों पूजों तुम्हें ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति०

मोह-तिमिर हम पास, तुम पै चेतन ज्योति है ।

पूजों दीप-प्रकाश, मेरो तम निरवारियो ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति०

रुल्यो कर्म वन-जाल, मुक्ति माहिं तुम सुख करो ।

खेऊँ धूप रसाल, अष्ट कर्म-वन जारियो ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अन्तराय दुखकार, तुम अनन्त थिरता लिये ।

पूजों फल धर सार, विघ्न टार शिवफल करो ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

हममें आठों दोष, जजों अरघ ले सिद्ध जी ।

वसु गुण दीजे मोष, ‘द्यानत’ कर जोड़े खड़ो ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

### जयमाला

दोहा

आठ कर्म दृढ़ बन्ध-सों, नख-शिख बन्धो जहान ।

बन्ध रहित वसु गुण सहित, नमूँ सिद्ध भगवान ॥

पद्मरि छन्द

सुख सम्यक्-दर्शन ज्ञानधरं, बलनन्त अगुरुलघु-बाधहरं ।

अवगाह अमूरत नायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥

अबलं अचलं अतुलं अटलं, अतलं अवचं अकुलं अमलं ।

अजरं अमरं जगज्ञायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥

निरभोग स्वभोग अरोग परं, निरयोग असोग वियोगहरं ।

अरमं स्वरमं दुखधायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥

सब कर्म कलंक अटंक अजं, नरनाथ सुरेश समूह जजं ।

मुनि ध्यावत सञ्जन-नायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥

अविरुद्ध विशुद्ध प्रबुद्धमयं, सब जानत लोक अलोक चयं ।

परमं धरमं शिवलायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥

निरभेद अखेद अछेद लहा, निरद्बन्द सुछन्द अछन्द महा ।

अक्षुधा अतृषा अकषायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥

असमं अजमं अतमं लहियं, अगमं सुखमं सुखदं गहियं ।  
 यमराज की चोट बचायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥  
 निरधाम सुधाम अकामयुतं, अविहार निहार-अहारच्युतं ।  
 भवनाशन तीक्षण सायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥  
 निरवर्ण अकर्ण अशर्ण नतं, अगतिं अमितं अक्षतं अरतं ।  
 अस उत्तम भाव सुपायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥  
 निररंग असंग अभंग सदा, अतयं अचयं अवयं सुखदा ।  
 अमदं अगदं गुण ज्ञायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥  
 अविषाद अनादि अवाद परं, भगवन्त अनन्त महन्त तरं ।  
 तुम ध्येय महामुनि ध्यायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥  
 निरनेह अदेह अगेह सुखी, निरमोह अकोह अलोह तुखी ।  
 तिहुँ लोक के नायक पायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥  
 पन्द्रह सौ भाग महा निवर्से, नव लाख के भाग जघन्य लसे ।  
 तनुवात के अन्त सहायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-अनन्तदर्शन-वीर्य-सूक्ष्मत्व-अवगाहनत्व-अगुरुलघुत्व-अव्याबाधत्व-  
गुणविभूषित-सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिनेऽर्थं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा

बहुविधि नाम वखान, परमेश्वर सबही भजें ।  
 ज्यों का त्यों सरधान, ‘द्यानत’ सेर्वे ते बढ़े ॥

अडिल्ल छन्द

(अविनाशी अविकार परम रस धाम हो,  
 समाधान सर्वद्वं सहज अभिराम हो ।  
 शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो,  
 जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥  
 ध्यान अग्नि करि कर्म-कलंक सबै दहे,  
 नित्य निरंजन देव सरूपी हो रहे ।  
 ज्ञायक के आकार ममत्व निवारिके,  
 सो परमात्म सिद्ध नमूँ सिर नायके ॥

दोहा

अविचल ज्ञान-प्रकाशतें, गुन अनन्त की खान ।  
 ध्यान धरै सो पाइये, परम सिद्ध भगवान ॥)

इत्याशीर्वादः



## पञ्चपरमेष्ठी पूजा

अहन्त सिद्ध आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन ।  
 जय पंच परम परमेष्ठी जय, भव सागर तारणहार नमन ॥  
 मन वच काया पूर्वक करता, हूँ शुद्ध हृदय से आह्नानन ।  
 मम हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन् ॥  
 निज आत्म तत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन ।  
 तव चरणों के पूजन से प्रभु निज सिद्ध रूप का हो दर्शन ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपश्चपरमेष्ठिसमूह! अत्र अवतर अवतर संवैषद् ।  
 ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपश्चपरमेष्ठिसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं  
 अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपश्चपरमेष्ठिसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

## अष्टक

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ ।  
 तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्ज्वल जल भरकर लाया हूँ ॥  
 मैं जन्म-जरा-मृतु नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी ।  
 हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ॥

संसार ताप में जल-जल कर, मैंने अगणित दुख पाये हैं ।  
 निज शान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाये हैं ॥  
 शीतल चंदन है भेंट तुम्हें, संसार ताप नाशो स्वामी । हे पंच ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं ॥

दुखमय अथाह भव सागर में, मेरी यह नौका भटक रही ।  
 शुभ-अशुभ भाव की भँवरों में, चैतन्य शक्ति निज अटक रही ॥  
 तंदुल है धवल तुम्हें अर्पित, अक्षयपद प्राप्त करूँ स्वामी । हे पंच ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति ॥

मैं काम व्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किंचित् छाया ।  
 चरणों में पुष्प चढ़ाता हूँ, तुमको पाकर मन हर्षाया ॥  
 मैं काम भाव विध्वंस करूँ, ऐसा दो शील हृदय स्वामी । हे पंच ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥

मैं क्षुधा रोग से व्याकुल हूँ चारों गति में भरमाया हूँ ।  
 जग के सारे पदार्थ पाकर भी तृप्त नहीं हो पाया हूँ ॥  
 नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा रोग मेटो स्वामी ।  
 हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ॥

मोहान्ध महाअज्ञानी मैं, निज को पर का कर्ता माना ।  
 मिथ्यात्म के कारण मैंने, निज आत्म स्वरूप न पहचाना ॥  
 मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी । हे पंच ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥

कर्मों की ज्वाला धधक रही, संसार बढ़ रहा है प्रतिपल ।  
 संवर से आस्रव को रोकूँ, निर्जरा सुरभि महके पल-पल ॥  
 मैं धूप चढ़ा कर अब आठों, कर्मों का हनन करूँ स्वामी । हे पंच ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं ॥

निज आत्मतत्त्व का मनन करूँ, चिंतवन करूँ निज चेतन का ।  
 दो श्रद्धा-ज्ञान-चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का ॥  
 उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ, निर्वाण महाफल हो स्वामी । हे पंच ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥

जल चंदन अक्षत पुष्प दीप नैवेद्य धूप फल लाया हूँ ।  
 अब तक के संचित कर्मों का मैं पुंज जलाने आया हूँ ॥  
 यह अर्घ समर्पित करता हूँ अविचल अनर्घपद दो स्वामी । हे पंच ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽनर्घपदप्राप्तये ऽर्घं ॥

### जयमाला

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार ।  
 अष्टादश दोष रहित जिनवर, अर्हन्त देव को नमस्कार ॥  
 अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरंजन निराकार ।  
 जय अजर अमर हे मुक्तिकंत, भगवंत सिद्ध को नमस्कार ॥

छत्तीस सुगुण से तुम मंडित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार ।  
 हे मुक्ति वधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार ॥  
 एकादश अंग पूर्व चौदह के पाठी गुण पच्चीस धार ।  
 बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान, श्री उपाध्याय को नमस्कार ॥  
 व्रत समिति गुप्ति चारित्र प्रबल वैराग्य भावना हृदय धार ।  
 हे द्रव्य भाव संयममय मुनिवर सर्व साधु को नमस्कार ॥  
 बहु पुण्य संयोग मिला नरतन जिनश्रुत जिनदेव चरण दर्शन ।  
 हो सम्यक् दर्शन प्राप्त मुझे तो सफल बने मानव जीवन ॥  
 निज पर का भेद जानकर मैं निज को ही निज में लीन करूँ ।  
 अब भेद ज्ञान के द्वारा मैं निज आत्म स्वयं स्वाधीन करूँ ॥  
 निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहचानूँ ।  
 पर परिणति से हो विमुख सदा, निजज्ञान तत्त्व को ही जानूँ ॥  
 जब ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प तज, शुक्ल ध्यान मैं ध्याऊँगा ।  
 तब चार घातिया क्षय करके अर्हत महापद पाऊँगा ॥  
 है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु कब इसको पाऊँगा ।  
 सम्यक् पूजा फल पाने को अब निज स्वभाव में आऊँगा ॥  
 अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु हे प्रभु मैंने की है पूजन ।  
 तब तक चरणों में ध्यान रहे जब तक न प्राप्त हो मुक्ति सदन ॥  
 ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधपञ्चपरमेष्ठिभ्यो महार्थं निर्वपामीति०  
 हे मंगल रूप अमंगल हर, मंगलमय मंगल गान करूँ ।  
 मंगल में प्रथम श्रेष्ठ मंगल, नवकार मंत्र का ध्यान करूँ ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्



## दीपावली-पूजन-विधि

दीपावली-पूजन-विधि में से मिथ्या मान्यताओं का परित्याग कर महावीर भगवान् की पूजन करें, क्योंकि उस दिन भगवान् मोक्ष पधारे थे। श्री गौतम गणधर की पूजन और केवलज्ञानस्वरूप सरस्वती-पूजन भी करनी चाहिए। पंचपरमेष्ठी-पूजन करने का भी विधान है।

### पूजन-विधि

दीपावली के दिन सन्ध्या समय शुभ बेला, शुभ नक्षत्र और शुभ एवं स्थिर लग्न में नीचे लिखी विधि के अनुसार पूजा एवं नई बही का मुहूर्त करके पश्चात् दीपों की ज्योति प्रज्वलित करें।

सर्व प्रथम अपनी दुकान या मकान जहाँ पूजन करना हो, उस स्थान को सुन्दरतापूर्वक खूब सजा लें, पश्चात् उत्तम अष्ट द्रव्य, शास्त्रजी, तीन-चार चौकियाँ, मिट्टी का कलश, श्रीफल, सूती लाल कपड़ा, मौली, आम के पत्ते, घिसी हुई केशर, नवीन कलम, दवात, बही-खाता, सुपारी, हल्दी की गांठें, चावल, मूंग और धनियां आदि सामग्री एकत्र करके रख लें।

कुटुम्ब के अभिभावक या दुकान के मालिक पूर्व या उत्तर मुख बैठ कर अपने समुख एक चौकी पर पूजन की सामग्री रखें, दूसरी चौकी पर द्रव्य चढ़ाने का थाल रखें जिसके मध्य में केशर से श्री लिखें, पूर्व दिशा में 5 का दक्षिण में 24 का पश्चिम में 3 का और उत्तर में 2 का अंक लिखें। पश्चात् नीचे लिखा मन्त्र बोलकर सभी उपस्थित सज्जन केशर से तिलक करें।

## तिलकमन्त्र

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी ।

मंगलं कुन्दकुन्दाद्यो, जैनधर्मोऽस्तु मंगलं ॥

पश्चात् रक्षा मन्त्र बोलकर गृहपति के दाहिने हाथ में एवं दवात-कमल आदि में रक्षा सूत्र (मौली) बांध दें ।

## रक्षामन्त्र

ॐ क्षाँ क्षीं क्षुँ क्षें क्षें क्षों क्षौं क्षं क्षः नमोऽर्हते, भगवते, श्रीमते सर्वं रक्ष  
रक्ष हूँ फट् स्वाहा ।

## श्री मंगलकलश स्थापन विधि

मिट्ठी का एक बड़ा कलश जल में धोकर वस्त्र से पोंछ लें और उसके चारों ओर केशर से चार साथिये बना कर उसके गले को मौली से बांधे । मौली बांधते समय ॐ सम्यग्दर्शनाय नमः बोलकर पहला धेरा देकर एक गाँठ लगावें । ॐ सम्यग्ज्ञानाय नमः बोलकर दूसरा धेरा लगा दूसरी गाँठ लगावें । ॐ सम्यक्वारित्राय नमः बोलकर तीसरा धेरा देकर तीसरी गाँठ लगा दें । पश्चात् कलश में लगभग सवा सेर (दोहरे छन्ने से छना हुआ) जल भर दें, फिर पाँच सुपारी, हल्दी की पाँच गाँठें, एक तोला चावल, एक तोला मूंग और एक तोला धनिया दाहिने हाथ में लेकर ‘ॐ ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा नमः मंगलकलशमंगलकार्यनिर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थं पूंगादि-फल-प्रभृतिवस्त्रूनि प्रक्षिपामीति स्वाहा’ मन्त्र बोलकर उन्हें सावधानीपूर्वक कलश में डाल दें । पश्चात् मंगल - कलश के मुख पर आम के सात पत्ते रखें, फिर एक उत्तम नारियल को सूती लाल वस्त्र से मढ़कर उसे मौली से ऐसा सजावें कि जिसे देखकर मन प्रसन्न हो जावे, और उसे मंगल-कलश के मुख पर ‘ॐ क्षाँ क्षीं क्षुँ क्षें क्षें क्षों क्षौं क्षं क्षः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते सर्वं रक्ष हूँ फट् स्वाहा’ यह रक्षा-मन्त्र बोलते हुए रख दें । किसी एक ऊँचे स्थान पर एक चौकी रख कर उस पर केशर से एक सुन्दर साथिया बना लें । पश्चात् गृहपति के दोनों हाथों में मंगल कलश देकर नीचे लिखे मन्त्र को शुद्ध भावना के साथ शुद्धोच्चारण करते हुए चौकी पर बने हुए स्वस्तिक पर विराजमान कर देवें ।

## मंगलकलश स्थापनमन्त्र

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादिब्रह्मणो मतेऽस्मिन् नूतनवर्षमुहूर्त-  
मङ्गलकर्मणि होममण्डपभूमिशुद्ध्यर्थं शान्त्यर्थं, पुण्याहवाचनार्थं, पात्रशुद्ध्यर्थं  
नवरत्नगन्धपूष्पाक्षतादिबीजफलसहित-शुद्धप्रासुक-तीर्थजलपूरित-मङ्गलकलश-  
स्थापनं करोमि । इर्वीं क्षीं हं सः स्वाहा ।

## इति मंगलकलश स्थापन विधि

मंगल कलश की चौकी के चारों कोनों पर चार दीपक जला कर रख दें । पश्चात् पूजन की दोनों चौकियों के आगे मंगल कलश की चौकी के दक्षिण में एक चौकी रखें, उस पर केशर से सुन्दर ॐ लिख कर शास्त्रजी विराजमान कर दें । पश्चात् इसी पुस्तक के प्रारम्भ में छपा हुआ मंगलाष्टक सुन्दर लय और शुद्ध उच्चारण पूर्वक पढ़ें तथा प्रत्येक श्लोक के अन्त में पूजन करने वालों के सिर पर पुष्प क्षेपण करते जावें । मंगलाष्टक समाप्त होने के बाद इसी पुस्तक के प्रारम्भ में छपी हुई नित्य पूजन कर महावीर भगवान की पूजन करें । पश्चात् गौतम गणधर, सरस्वती पूजन करें । यदि समय कम हो तो अर्ध्य चढ़ा देवें, यदि इतना समय भी न हो तो इसी पुस्तक में छपा हुआ महार्थ्य चढ़ावें ।

~~~~~

श्री गौतम गणधर पूजा

श्री गौतम गण ईश शीष यह तुम्हें नमा कर ।
 आह्वानन अब करुं आय तिष्ठो मानस पर ॥
 पाके केवल ज्योति ज्ञाननिधि हुए गुणाकर ।
 निज लक्ष्मी का दान करो मेरे घट आकर ॥
 श्री गौतम गण ईश जी, तिष्ठो मम उर आय ।
 ज्ञान-लक्ष्मी-पति बने, मेरी मानव-काय ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां सायंकाले कैवल्यलक्ष्मीप्राप्तश्रीगौतमगणपति-
 जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र
 मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम् ।

अष्टक

गांगेय वारि शुचि प्रासुक दिव्य ज्योति,
 जन्मादि कष्ट निज वारण को लिया ये ।
 संसार के अखिल त्रास निवारने को,
 योगीन्द्र गौतम - पदाम्बुज में चढ़ाता ॥१॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां सायंकाले कैवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय श्रीगौतमगणधराय
 जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरयुक्त मलयागिर को घिसाया,
 संसार - ताप - शमनार्थ इसे बनाया ।
 संसार के अखिल त्रास निवारने को,
 योगीन्द्र गौतम - पदाम्बुज में चढ़ाता ॥२॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां.....चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

मुक्ताभ अक्षत सुगन्धि चुना-चुना के,
 व्याधिघ्न अक्षत-पदार्थ सजा-सजा के ।
 संसार के अखिल त्रास निवारने को,
 योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता ॥३॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां..... अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

कन्दर्प - दर्प - दलनार्थ नवीन ताजे,
 बेला गुलाब मचकुन्द सुपारिजाता ।
 संसार के अखिल त्रास निवारने को,
 योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता ॥४॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां..... पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षीरादि मिश्रित अमोघ बल - प्रदाता,
 पक्वान्न थाल यह भूख निवारने को ।
 संसार के अखिल त्रास निवारने को,
 योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता ॥५॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां..... नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नादि दीप नव - ज्योति कपूर-वर्ती,
 उद्धाम - मोह - तम तोम सभी हटाने ।
 संसार के अखिल त्रास निवारने को,
 योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता ॥६॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां..... दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अज्ञान मोह मद से भव में भ्रमाता,
 ये दुष्ट कर्म तिस नाशन को दशांगी ।

संसार के अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता ॥७॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां..... धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

केला अनार सहकार सुपक्व जामू,
ये सिद्ध-मिष्ट फल मोक्ष फलामि को मैं ।
संसार के अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता ॥८॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां..... फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

पानीय आदि वसु द्रव्य सुगन्ध-युक्त,
लाया प्रशान्त मन से निज रूप पाने ।
संसार के अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता ॥९॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां..... अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

वीर-जिनेश्वर के प्रथम, गणधर गौतम पाय ।

नमन करूं कर जोड़कर, स्वर्ग-मोक्ष फलदाय ॥

छन्द

जय देव ! श्री गौतम गणेश्वर, प्रार्थना तुम से करूँ ।
सब हटा दो कष्ट मेरे, अर्घ ले आरति करूँ ॥१॥

दुष्ट काल कराल पंचम में सहारा उठ रहा ।
नेतृत्वहीन हुए सभी जन आर्ष पथ सब मिट रहा ॥२॥

तत्त्वार्थ - चिन्तन सत्यपथ और सत्य यत्नाचार का ।
है ठिकाना अब न भारत में गृहस्थाचार का ॥३॥

मार्ग नाना पकड़ जग-जन मुक्ति अपनी चाहते ।
आत्म-वैभव-शून्य हो भौतिक-विभूति विगाहते ॥४॥

आत्म - तन्त्र - स्वतन्त्रता का सत्य शिव था पंथ जो ।
खो दिया वह ज्ञान सारा, मोह ममता तन्त्र हो ॥५॥

हे गणेश ! कृपा करो, अब आत्मज्योति पसार दो ।
हम हैं तुम्हारे सदा तुम दुर्वासनाएं मार दो ॥६॥

क्या दशा तुमको सुनावें जो हमारी हो गई ।
आत्म-निधि सब खो गई विज्ञान-धारा सो गई ॥७॥

ज्ञान - भौतिक, शान - भौतिक, मान - भौतिक शेष है ।
विज्ञान - भौतिक रक्त सारा बना भारत देश है ॥८॥

न्याय-नीति तिलाज्जलि देकर निकाले देश से ।
देश के बाजार काले कर दिये निज वेश से ॥९॥

ऐसी दशा जब देश की तब धर्म का क्या रूप हो ।
तुम ही बताओ नाथ ! जब यह जगत तम का तूप हो ॥१०॥
कैसे बचावें सत्य अपना और सत्याचार को ।
जब हाय पैसा ! हाय पैसा ! कर रहा संसार हो ॥११॥
इस विषम भव की भँवर से कैसे ये नौका पार हो ।
मांझी लुटेरे, पथिक डाकू, दस्यु-कर-पतवार हो ॥१२॥

महावीर स्वामी की प्रव्रज्या के समय जो हाल था ।
 दीन-दुखिया प्राणियों का जीवनत्व मुहाल था ॥१३॥
 वह ही दशा भारत-धरा की नीति भ्रष्टाचार से ।
 आओ ! सम्हालो ! सदय होकर आत्म-करुणाधार से ॥१४॥
 कालिमा से व्याप सब व्यापार धन्धे कर दिये ।
 नैतिक पतन की चरम सीमा युक्त नय-पथ कर दिये ॥१५॥
 वीर-प्रभु निर्वाण-क्षण में था सम्हाला आपने ।
 अब छोड़ तुमको जाऊँ कहाँ घेरा चहुँ दिशि पाप ने ॥१६॥
 है दिवस वह ही नाथ ! स्वामी वीर के निर्वाण का ।
 जग के हितैषी विज्ञ गौतम ईश केवलज्ञान का ॥१७॥
 नाथ ! अब करके कृपा हमको सहारा दीजिये ।
 दीपमाला - आरती - पूजा ग्रहण मम कीजिये ॥१८॥
 हैं सभी जन आपके अब ज्ञान से भर दो हिया ।
 गौतम दिया गणपति दिया, बोले सभी अनुपम दिया ॥१९॥
 तेरे दिए बिन जग अँधेरा क्योंकि वह केवल दिया ।
 इसलिए हे नाथ ! अब चहुँ ओर कर दो निज दिया ॥२०॥
 है अनूठा शक्तिशाली उदय जहाँ पाता दिया ।
 अज्ञान तम के तोम को चैतन्य मणि करता दिया ॥२१॥
 ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां सायंकाले कैवल्यलक्ष्मीप्राप्तश्रीगौतम-गणपतिजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि. स्वाहा ।

दोहा

ज्योतिपुञ्ज गणपति प्रभो, दूर करो अज्ञान ।

समता रस से सिक्त हो, नया उगे उर भानु ॥

दोहा

ज्योतिपुञ्ज गणपति प्रभो, दूर करो अज्ञान ।

समता रस से सिक्त हो, नया उगे उर भानु ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्



श्रीमहावीराय नमः



श्री

श्री श्री

श्री श्री श्री

श्री शुभ

श्री श्री श्री श्री

श्री श्री श्री श्री

श्रीऋषभाय नमः

श्रीवर्धमानाय नमः

श्रीगौतमगणधराय नमः

श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नमः

श्रीकेवलज्ञानलक्ष्मीदेव्यै नमः

श्री लाभ

श्रीमद्वाधिदेवश्रीमन्महावीरनिर्वाणात् तमे वीराब्दे, श्री..... विक्रमाब्दे,
शुभलज्जे, स्थिर-मुहूर्ते श्रीमहावीर-जिनेन्द्रादि-पूजनं विधाय अद्य कार्तिकशुक्ल-प्रतिपदायां
एष संस्कारः महोत्सवेन कृतः । शुभमस्तु, लाभप्रदो भवतु, कल्याणमस्तु ।

इस प्रकार और भी वार, तारीख, माह एवं ईसवी सन् आदि लिखें । पश्चात् एक
थाली में कपूर प्रज्वलित कर जिनवाणी माता की आरती उतारें ।

॥ जिनवाणी माता की आरती ॥

जय अम्बे वाणी, माता जय अम्बे वाणी ।
तुमको निशदिन ध्यावत, सुर-नर-मुनि ज्ञानी ॥टेक॥

श्री जिनगिरितें निकसी गुरु गौतम वाणी ।
जीवन-भ्रम-तम-नाशन, दीपक दरशाणी ॥ जय०

कुमत-कुलाचल-चूरण, वज्र सु सरधाणी ।
नय-नियोग-निक्षेपण, देखन दरशाणी ॥ जय०

पातक-पंक-पखानल, पुण्य परम पाणी ।
मोह महार्णव डूबत, तारण नौकाणी ॥ जय०

लोकालोक निहारण, दिव्य नेत्र स्थानी ।
निज-पर भेद दिखावन, सूरज किरणानी ॥ जय०

श्रावक मुनिगण जननी, तुम ही गुणखानी ।
सेवक लख सुखदायक, पावन परमाणी ॥ जय०

इसके पश्चात् शुद्ध उच्चारण पूर्वक सुन्दर लय से महावीराष्ट्र के बोलें ।

अनन्तव्रत पूजा

अडिल्ल छन्द

श्री जिनराज चतुर्दश जग जयकार जी ।
कर्मनाश भवतार सु शिवसुख-धारजी ॥
संवौषट् ठः ठः सु वषट् यह उच्चरुं ।
आह्वानन स्थापन मम सन्निधि करुं ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्राः ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।
अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

अष्टक

(हरिगीतिका)

गंगादि तीरथ को सुजल भर, कनकमय भृंगार में ।
चउदश जिनेश्वर चरणयुग परि, धार डारौं सार में ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यंत पूजौं ध्यायके ।
करि अनंतव्रत तप कर्म हनि के, लहों शिवसुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं
निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदन अगर घनसार आदि, सुगंधित द्रव्य घसायके ।
सहजहि सुगन्धि जिनेन्द्रके पद, चर्चहों सुखदायके ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यंत पूजौं ध्यायके ।
करि अनंतव्रत तप कर्म हनि के, लहों शिवसुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं ।

तंदुल अखंडित अति सुगंध, सुमिष्ट लेके कर धरों ।
जिनराज तुम चरनन निकट, भवि पाय पूजौं शुभ भरों ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यंत पूजौं ध्यायके ।
करि अनंतब्रत तप कर्म हनि के, लहों शिवसुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

चंपा चमेली केतकी पुनि, मोगरो शुभ लाय के ।
केवड़ो कमल गुलाब गेंदा, जुही सुमाल बनायके ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यंत पूजौं ध्यायके ।
करि अनंतब्रत तप कर्म हनि के, लहों शिवसुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ।

लाडू कलाकंद सेव घेवर, और मोतीचूर ले ।
गुंजा सु पेड़ा क्षीर व्यंजन, थाल में भरपूर ले ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यंत पूजौं ध्यायके ।
करि अनंतब्रत तप कर्म हनि के, लहों शिवसुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ।

ले रत्नजड़ित सु आरती, ता मांहि दीप संजोय के ।
जिनराज तुम पद आरती कर, तिमिरमिथ्या सु खोय के ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यंत पूजौं ध्यायके ।
करि अनंतब्रत तप कर्म हनि के, लहों शिवसुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यंतचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ।

चंदन अगर तगर सिलारस, कर्पूर की करि धूप को ।
ता गंधतैं मधु चकित सो, खेऊँ निकट जिनभूप को ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यंत पूजौं ध्यायके ।
करि अनंतब्रत तप कर्म हनि के, लहों शिवसुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यंतचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. ।

नारिंग केला दाख दाढ़िम, बीजपूर मंगाय के ।
पुनि आम्र और बादाम खारिक, कनक थाल भरायके ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यंत पूजौं ध्यायके ।
करि अनंतब्रत तप कर्म हनि के, लहों शिवसुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यंतचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. ।

जल और चंदन अखत पुष्प, सुगंध बहुविध लायके ।
नैवेद्य दीप सुधूप फल इनको, जु अर्ध बनायके ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यंत पूजौं ध्यायके ।
करि अनंतब्रत तप कर्म हनि के, लहों शिवसुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यंतचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्योऽनर्धपदप्राप्तये अर्ध्यं नि. ।

जयमाला

पद्मरि छन्द

श्री वृषभनाथ वृष को प्रकाश, भविजन को तारे पाप नाश ।
जय अजितनाथ जीते सुकर्म, ले क्षमा खड़ग भेदे जु मर्म ॥
जय संभव जग सुख के निधान, जग सुखकर्ता तुम दियो ज्ञान ।
जय अभिनन्दन पद धरो ध्यान, तासों प्रगटे शुभज्ञान भान ॥
जय सुमति सुमति के देनहार, जासों उतरे भव उदधि पार ।
जय पद्म पद्म पदकमल तोहिं, भविजन अति सेरें मगन होहिं ॥

जय जय सुपाश्वरं तुम नमत पाय, क्षय होत पाप बहु पुन्य थाय ।
 जय चन्द्रप्रभं शशिकोटं भान, जग का मिथ्यातम हरो जान ॥
 जय पुष्पदन्तं जगमांहि सार, तुम मार्यौ ध्यान कुठार मार ।
 करि धर्मभाव जग में प्रकाश, हरि पाप तिमिर दियो मुक्तिवास ॥
 जय शीतलजिन हरभव प्रवीन, हर पाप ताप जगसुखी कीन ।
 श्रेयांस कीनो जग को कल्यान, दे धर्म दुखित तारे सुजान ॥
 जय वासुपूज्य जिन नमों तोहि, सुर नर मुनि पूजत गर्व खोहि ।
 जय विमल विमल गुण लीन मेय, भवि करे आप सम सुगुण देय ॥
 जय अनन्तनाथ करि अनन्तवीर्य, हरि धाति कर्म धरि अनन्तवीर्य ।
 उपजायो केवलज्ञान भान, प्रभु लखे चराचर सब सुजान ॥
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्योऽधर्य ॥

दोहा

ये चौदह जिन जगत में, मंगलकरन प्रवीन ।
 पापहरन बहु सुखकरन, सेवक सुखमय कीन ॥
 इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

प्रत्येक टोक के अर्थ

टोक प्रति जलादि द्रव्य चढ़ाने की विधि

(१) २४ तीर्थकरों के गणधरों की कूट
चौबीसों जिनराज के, गण नायक हैं जेह ।
मन वच तन कर पूजहूं, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्री गौतम स्वामी आदि गणधर देव गुणावा ग्राम के उद्यान आदि भिन्न-भिन्न स्थानोंसे निर्वाण पथारे हैं तिनके चरणारविन्दको जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(२) ज्ञानधर कूट

कुन्थुनाथ जिनराज का, कूट ज्ञानधर जेह ।
मन वच तन कर पूजहूं, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्रादि ९६ कोड़ाकोड़ी ९६ करोड़ ३२ लाख ९६ हजार ७४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय करि बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्ध निर्वपा० स्वाहा ।

(३) मित्रधर कूट

नमिनाथ जिनराज का कूट मित्रधर जेह ।
मन वच तन कर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथ जिनेन्द्रादि नौ सौ कोड़ाकोड़ी १ अरब ४५ लाख ७ हजार १४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा नमस्कार हो, जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(४) नाटक कूट

अरनाथ जिनराज का नाटक कूट है जेह ।
मन वच तन कर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्रादि ९९ करोड़ ९९ लाख ९९ हजार मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(५) संबल कूट

मल्लिनाथ जिनराज का संबल कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्रादि ९६ करोड़ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(६) संकुल कूट

श्रेयांसनाथ जिनराज का संकुल कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयोनाथजिनेन्द्रादि ९६ कोड़ाकोड़ी ९६ करोड़ ९६ लाख ९ हजार ५४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(७) सुप्रभ कूट

पुष्पदन्त जिनराज का सुप्रभ कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ी ९९ लाख ७ हजार ४८० मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(८) मोहन कूट

पद्मप्रभ जिनराज का मोहन कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्रादि ९९ करोड़ ८७ लाख ४३ हजार ७९० मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(९) निर्जर कूट

मुनिसुव्रत जिनराज का निर्जर कूट है जेह ।

मन वच कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्रादि ९९ कोड़ाकोड़ी ९७ करोड़ ९ लाख ९९९ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(१०) ललित कूट

चन्द्रप्रभ जिनराज का ललित कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्रादि ९८४ अरब ७२ करोड़ ८० लाख ८४ हजार मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(११) आदिनाथ भगवान की टोंक

ऋषभदेव जिन सिद्ध भये, गिरिकैलाश से जोय ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर नमूँ पद दोय ॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथजिनेन्द्रादि कैलाश पर्वत से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(१२) विद्युतवर कूट

शीतलनाथ जिनराज का कूट विद्युत वर जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्रादि १८ कोड़ाकोड़ी ४२ करोड़ ३२ लाख ४२ हजार ९०५ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(१३) स्वयम्भू कूट

अनन्त नाथ जिनराज का कूट स्वयम्भू जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्रादि ९६ कोड़ाकोड़ी ७० करोड़ ७० लाख ७० हजार ७०० मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(१४) ध्वल कूट

सम्भवनाथ जिनराज का ध्वल कूट धर जेह ।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्भवनाथजिनेन्द्रादि ९ कोड़ाकोड़ी ७२ करोड़ ३२ लाख ४२ हजार ५०० मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध०

(१५) वासुपूज्य भगवान की टोंक

वासुपूज्य जिन सिद्ध भये चम्पापुर से जेह ।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्रादि चम्पापुर से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(१६) आनन्द कूट

अभिनन्दन जिनराज का आनन्द कूट है जेह ।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्रादि ७२ कोड़ाकोड़ी ७० करोड़ ७० लाख ४२ हजार ७०० मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध०

(१७) सुदत्त कूट

धर्मनाथ जिनराज का कूट सुदत्त वर जेह ।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्रादि २९ कोड़ाकोड़ी १९ करोड़ ९ लाख ९ हजार ७९५ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध०

(१८) अविचल कूट

सुमतिनाथ जिनराज का अविचल कूट है जेह ।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्रादि मुनि १ कोड़ाकोड़ी ८४ करोड़ ७२ लाख ८१ हजार ७०० मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(१९) शान्तिनाथ कूट (कुन्दप्रभ)

शांतिनाथ जिनराज का कूट कुन्दप्रभ जेह ।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्रादि ९ कोड़ाकोड़ी ९ लाख ९ हजार ९९९ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(२०) महावीर भगवान की टोंक

महावीर जिन सिद्ध भये पावापुर से जोय ।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरस्वामी पावापुर से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(२१) प्रभास कूट

सुपार्श्वनाथ जिनराज का प्रभास कूट है जेह ।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्रादि ४९ कोड़ाकोड़ी ८४ करोड़ ७२ लाख ७ हजार ७४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(२२) सुवीर कूट (सकुल कूट)

विमलनाथ जिनराज का कूट सुवीर है जेह ।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्रादि ७० कोड़ाकोड़ी ६० लाख ६ हजार ७४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(२३) सिद्धवर कूट

अजितनाथ जिनराज का सिद्धवर कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्रादि १ अरब ८० करोड़ ४४ लाख मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(२४) नेमिनाथ भगवान की टांक

नेमिनाथ जिन सिद्ध भये सिद्ध क्षेत्र गिरनार ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथभगवान गिरनार पर्वत से मोक्ष गये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

(२५) स्वर्णभद्र कूट

पाश्वर्नाथ जिनराज का स्वर्ण भद्र है कूट ।

मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्रादि ८२ करोड़ ८४ लाख ४५ हजार ७४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को जलादि अर्ध निर्वपामीति स्वाहा । इन कूटों का शुद्ध भाव से ध्यान धरने से व दर्शन करने से पशु गति से छुटकारा हो जाता है ।



नन्दीश्वरद्वीप पूजा

कविवर घानतराय

अडिल्ल छन्द

सरब परब में बड़ो अठाई परब है,
नन्दीश्वर सुर जाहिं लेय वसु दरब है ।
हमैं सकति सो नाहिं इहाँ करि थापना,
पूजैं जिनगृह-प्रतिमा है हित आपना ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

कंचन-मणि-मय भृंगार, तीरथ-नीर भरा ।
तिहुँ धार दयी निरवार, जामन मरन जरा ॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों ।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनँद-भाव धरों ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०

भव-तप-हर शीतल वाच, सो चन्दन नाहीं ।

प्रभु यह गुन कीजै साँच, आयो तुम ठाहीं ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं०

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहै ।

सब जीते अक्ष-समाज, तुम सम अरु को है ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्०

तुम काम विनाशक देव, ध्याऊँ फूलन सौं ।

लहुँ शील-लच्छमी एव, छूटों सूलन सौं ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः कामबाणविधंसनाय पुण्यं०

नेवज इन्द्रिय बलकार, सो तुमने चूरा ।

चरु तुम छिग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०

दीपक की ज्योति-प्रकाश, तुम तन माँहिं लसै ।

टूटै करमन की राश, ज्ञान-कणी दरसै ॥

नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों ।

वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द-भाव धरों ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं०

कृष्णागरु-धूप-सुवास, दश-दिशि नारि वरै ।

अति हरष-भाव परकाश, मानो नृत्य करै ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं०

बहुविध फल ले तिहुँ काल, आनन्द राचत हैं ।

तुम शिव-फल देहु दयाल, तुहिं हम जाचत हैं ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं०

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों ।

‘द्यानत’ कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हों ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्दं०

जयमाला

दोहा-कार्तिक फाल्युन साढ के, अन्त आठ दिन माँहिं ।

नन्दीश्वर सुर जात हैं, हम पूजै इह ठाहिं ॥

स्नग्विणी छन्द

एक सौ त्रेसठ कोड़ि जोजन महा ।

लाख चौरासिया एक दिशि में लहा ॥

आठमों दीप नन्दीश्वरं भास्वरं ।

भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं ॥१॥

चार दिशि चार अंजनगिरी राजहीं ।

सहस चौरासिया एक दिशि छाजहीं ॥

ढोल सम गोल ऊपर तले सुन्दरं ॥ भौन०॥२॥

एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी ।

एक इक लाख जोजन अमल-जल भरी ॥

चहुँ दिशा चार वन लाख जोजन वरं । भौन०॥३॥

सोल वापीन मधि सोल गिरि दधिमुखं ।

सहस दश महाजोजन लखत ही सुखं ॥

बावरी कोन दो माँहिं दो रतिकरं । भौन०॥४॥

शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे ।

चार सोलै मिलैं सर्व बावन लहे ॥

एक इक सीस पर एक जिनमन्दिरं ।

भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं । भौन०॥५॥

बिम्ब अठ एक सौ रत्नमयी सोहहीं ।

देव-देवी सरब नयन मन मोहहीं ॥

पाँच सै धनुष तन पद्म-आसन परं । भौन०॥६॥

लाल नख-मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं ।

स्याम-रंग भोंह सिर-केश छबि देत हैं ॥

वचन बोलत मनों हँसत कालुषहरं । भौन०॥७॥
 कोटि-शशि-भान-दुति-तेज छिप जात है ।
 महा - वैराग - परिणाम ठहरात है ॥
 वयन नहिं कहें लखि होत सम्यक्धरं । भौन०॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिक्षु द्विपश्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः
 पूर्णर्धि निर्व. स्वाहा ।

सोरठा

नन्दीश्वर-जिन-धाम, प्रतिमा-महिमा को कहै ।
 'धानत' लीनो नाम, यही भगति शिव-सुख करै ॥
 इत्याशीर्वादः पुष्ट्याङ्गलिं क्षिपेत्

~~~

## सोलहकारण पूजा

कविवर धानतराय

अडिल्ल

सोलह कारण भाय तीर्थकर जे भये ।  
 हरषे इन्द्र अपार मेरु पै ले गये ॥  
 पूजा करि निज धन्य लख्यौ बहु चाव सौं ।  
 हमहू षोडश कारन भावै भाव सौं ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धचादिषोडशकारणसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धचादिषोडशकारणसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धचादिषोडशकारणसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (चौपाई आंचलीबद्ध)

कंचन-झारी निरमल नीर, पूजौं जिनवर गुन-गंभीर ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थकर पद पाय ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धचादिषोडशकारणेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० स्वाहा ।

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवर के पाय ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धचादिषोडशकारणेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति०

तंदुल धवल सुगंध अनूप, पूजौं जिनवर तिहुँ जगभूप ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धचादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तयेऽक्षतान् निर्व. स्वाहा ।

फूल सुगंध मधुप-गुंजार, पूजौं जिनवर जग-आधार ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धचादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा ।

सद नेवज बहुविध पकवान, पूजौं श्रीजिनवर गुणखान ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धचादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा ।

दीपक ज्योति तिमिर छयकार, पूजूँ श्रीजिन केवलधार ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धचादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्व. स्वाहा ।

अगर कपूर गंध शुभ खेय, श्रीजिनवर आगे महकेय ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०  
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि बहुत फलसार, पूजौं जिन वांछित-दातार ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०  
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षपदप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आठों दरब चढ़ाय, 'द्यानत' वरत करों मन लाय ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०  
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्थपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

### जयमाला

दोहा

षोडश कारण गुण करै, हरै चतुरगति-वास ।

पाप पुंज सब नाश के, ज्ञान-भानु परकाश ॥

चौपाई

दरश-विशुद्धि धरे जो कोई, ताकौ आवागमन न होई ।

विनय-महा धारै जो प्राणी, शिववनिता की सखी बखानी ॥

शील सदा दिढ़ जो नर पालै, सो औरन की आपद टालै ।

ज्ञानाभ्यास करै मन माँहीं, ताके मोह-महातम नाहीं ॥

जो संवेग-भाव विस्तारै, सुरग-मुकति-पद आप निहारै ।

दान देय मन हरष विशेखै, इहभव जस परभव सुख देखै ॥

जो तप तपै खपै अभिलाषा, चूरै करम-शिखर गुरु भाषा ।

साधु-समाधि सदा मन लावै, तिहुँ जग भोग भोगि शिव जावै ॥

निश-दिन वैयावृत्य करैया, सो निहचै भव-नीर तिरैया ।

जो अरहंत-भगति मन आनै, सो जन विषय-कषाय न जाने ॥

जो आचारज-भगति करै है, सो निर्मल आचार धरै है ।

बहुश्रुतवंत-भगति जो करई, सो नर संपूरन श्रुत धरई ॥

प्रवचन-भगति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानंद-दाता ।

षट्-आवश्यक काल जो साधै, सो ही रत्नत्रय आराधै ॥

धर्म-प्रभाव करैं जे ज्ञानी, तिन शिव-मारग रीति पिछानी ।

वत्सल अंग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थकर पदवी पावै ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिर्विनयसंपन्नता शीलब्रतेष्वन्तिचारोऽभीक्षणज्ञानोपयोगसंवेगौ

शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत-

प्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना-प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वकारणेभ्यः

पूर्णार्थं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय ।

देव-इन्द्र-नर-वन्द्य-पद, 'द्यानत' शिव-पद होय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्टाङ्गिं क्षिपेत्

## पञ्चमेरु पूजा

### कविवर धानतराय

गीता छन्द

तीर्थकरों के न्हवन जलतैं भये तीरथ शर्मदा,  
तातैं प्रदच्छन देत सुर-गन पंच मेरुन की सदा ।  
दो जलधि ढाई-द्वीप में सब गनत-मूल विराजहीं,  
पूजौं असी जिनधाम-प्रतिमा होहि सुख, दुख भाजहीं ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

**अष्टक (चौपाई आंचलीबद्ध)**

सीतल-मिष्टसुवास मिलाय, जलसौं पूजौं श्री जिनराय ।

महासुख होय देखे नाथ परम सुख होय ॥

पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करों प्रनाम ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं

जल केसर करपूर मिलाय, गंधसौं पूजौं श्री जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसौं पूजौं जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये॒ऽक्षतान्०

बरन अनेक रहे महकाय, फूलन सौं पूजौं जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः कामबाणविधंसनाय पुष्टं

मन-वांछित बहु तुरत बनाय, चरु सौं पूजौं श्री जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं

तम-हर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीप सौं पूजौं श्री जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो मोहाध्यकारविनाशाय दीपं

खेऊँ अगर अमल अधिकाय, धूप सौं पूजौं श्री जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं

सुरस सुवर्ण सुगन्ध सुभाय, फल सौं पूजौं श्री जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो मोक्षपदप्राप्तये फलं

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'धानत' पूजौं श्री जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये॒ऽर्घं०

## जयमाला

सोरठा

प्रथम सुदर्शन स्वामि, विजय अचल मन्दर कहा ।

विद्युन्माली नाम, पंच मेरु जग में प्रगट ॥

बेसरी छन्द

प्रथम सुदर्शन-मेरु विराजै, भद्रशाल वन भूपर छाजै ।

चैत्यालय चारों सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी ॥

ऊपर पंच-शतक पर सोहै, नन्दन-वन देखत मन मोहै ।

चैत्यालय चारों सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी ॥

साढ़े बासठ सहस उँचाई, वन सुमनस शोभै अधिकाई ।

चैत्यालय चारों सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी ॥

ऊँचा जोजन सहस-छत्तीसं, पाण्डुक-वन सोहै गिरि-सीसं ।

चैत्यालय चारों सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी ॥

चारों मेरु समान बखाने, भूपर भद्रसाल चहुँ जाने ।

चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी ॥

ऊँचे पाँच शतक पर भाखे, चारों नन्दनवन अभिलाखे ।

चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी ॥

साढ़े पचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा ।

चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी ॥

उच्च अठाइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये ।

चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी ॥

सुर-नर-चारन वन्दन आवैं, सो शोभा हम किह मुख गावैं ।

चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्मालि-पञ्चमेरुसम्बन्धिजिन-चैत्यालयस्थ-  
जिनबिष्वेभ्योऽनर्थपदप्राप्तयेऽर्थ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

पंच मेरु की आरती, पढ़े सुनै जो कोय ।

‘द्यानत’ फल जानै प्रभू, तुरत महासुख होय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्टाञ्जलिं क्षिपेत्

.....

## दशलक्षणधर्म पूजा

कविवर द्यानतराय

अडिल्ल

उत्तम छिमा मारदव आरजव भाव हैं,

सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव हैं ।

आकिंचन ब्रह्मचरज धरम दस सार हैं,

चहुँगति-दुख तैं काढ़ि मुकति करतार हैं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौष्ट् ।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

## अष्टक (सोरठा)

हेमाचल की धार, मुनि-चित सम शीतल सुरभि ।  
 भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-सत्य-शौच-संयम-तपस्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणीति-  
 दशलक्षणधर्माय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन केसर गार, होय सुवास दशों दिशा ।  
 भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अमल अखण्डित सार, तन्दुल चन्द्र समान शुभ ।  
 भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायाक्षयपदप्राप्तये॒क्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरथ-लोक-लों ।  
 भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय कामबाणविधंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज विविध निहार, उत्तम षट्-रस-संजुगत ।  
 भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

बाति कपूर सुधार, दीपक-ज्योति सुहावनी ।  
 भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगन्धता ।  
 भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायाष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल की जाति अपार, ग्रान-नयन-मन-मोहने ।  
 भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोक्षपदप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठों दरब सँवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सौं ।  
 भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायानर्थपदप्राप्तये॒र्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

**अंगपूजा (सोरठा)**

पीड़ें दुष्ट अनेक, बाँध मार बहुविधि करैं ।  
 धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा ॥

चौपाई

उत्तम छिमा गहो रे भाई, इह-भव जस पर-भव सुखदाई ।  
 गाली सुनि मन खेद न आनो, गुन को औगुन कहै अयानो ॥

गीता छन्द

कहि है अयानो वस्तु छीनै, बाँध मार बहुविधि करै ।  
 घरतैं निकारै तन विदारै, वैर जो न तहाँ धरै ॥

तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा ।  
 अति क्रोध-अग्नि बुझाय प्रानी, साम्यजल ले सीयरा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

मान महाविषरूप, करहि नीच-गति जगत में ।  
 कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा ॥

उत्तम मार्दव-गुन मन माना, मान करन कौ कौन ठिकाना ।  
वस्यो निगोद माँहिं तैं आया, दमरी लँकन भाग बिकाया ॥  
रुकन बिकाया भागवश तैं, देव इक-इन्ही भया ।  
उत्तम मुआ चाणडाल हूवा, भूप कीड़ों में गया ॥  
जीतव्य जोवन धन गुमान, कहा करै जल-बुद्बुदा ।  
करि विनय बहु-गुन बड़े जन की, ज्ञान का पावै उदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्ध्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कपट न कीजे कोय, चोरन के पुर ना बसै ।

सरल सुभावी होय, ताके घर बहु सम्पदा ॥

उत्तम-आर्जव रीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी ।  
मन में हो सो वचन उचरिये, वचन होय सो तन सौं करिये ॥  
करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निरमल आरसी ।  
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट-प्रीति अंगार-सी ॥  
नहिं लहै लछमी अधिक छल करि, करम-बन्ध-विशेषता ।  
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ॥

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्माङ्गाय अर्ध्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कठिन वचन मति बोल, पर-निन्दा अरु झूठ तज ।

साँच जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी ॥

उत्तम सत्य वरत पालीजै, पर विश्वासघात नहिं कीजै ।  
साँचे-झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो ॥  
पेखो तिहायत पुरुष साँचे को दरब सब दीजिये ।  
मुनिराज-श्रावक की प्रतिष्ठा साँच गुण लख लीजिये ॥  
ऊँचे सिंहासन बैठि वसु नृप, धरम का भूपति भया ।  
वच झूठ सेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया ॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्माङ्गाय अर्ध्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देह सौं ।

शौच सदा निरदोष, धरम बड़ो संसार में ॥

उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पाप को बाप बखाना ।  
आशा-पास महा दुखदानी, सुख पावै सन्तोषी प्रानी ॥  
प्रानी सदा शुचि शील जप-तप, ज्ञान-ध्यान प्रभाव तैं ।  
नित गंग जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि-दोष सुभाव तैं ॥  
ऊपर अमल मल भर्यो भीतर, कौन विधि घट शुचि कहै ।  
बहु देह मैली सुगुन-थैली, शौच-गुन साधु लहै ॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्माङ्गाय अर्ध्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो ।

संजम-रतन सँभाल, विषय-चोर बहु फिरत हैं ॥

उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भव के भाजैं अघ तेरे ।  
सुरग-नरक-पशुगति में नाहीं, आलसहरन करन सुख ठाहीं ॥  
ठाहीं पृथी जल आग मारुत, रुख त्रस करुना धरो ।  
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो ॥  
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग-कीच में ।  
इक घरी मत विसरो करो नित, आव जम-मुख बीच में ॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अर्ध्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तप चाहै सुरराय, करम-सिखर को वज्र है ।  
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम ॥

उत्तम तप सब माँहिं बखाना, करम-शैल को वज्र समाना ।  
वस्यो अनादिनिगोद-मङ्गारा, भू-विकलत्रय-पशुतन धारा ॥

धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता ।  
श्री जैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता ॥

अति महा-दुरलभ त्याग विषय-कषाय जो तप आदरै ।  
नर-भव-अनूपम-कनक-घर पर, मणिमयी कलसा धरै ॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्माङ्गाय अर्द्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

दान चार परकार, चार-संघ को दीजिए ।  
धन बिजुली उनहार, नर-भव-लाहो लीजिए ॥

उत्तम त्याग कहो जग सारा, औषध शास्त्र अभय आहारा ।  
निहचै राग-द्वेष निरवारै, ज्ञाता दोनों दान सँभारै ॥

दोनों सँभारे कूप-जलसम, दरब घर में परिनया ।  
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया ॥

धनि साध शास्त्र अभय-दिवैया, त्याग राग-विरोध को ।  
बिन दान श्रावक साधु दोनों, लहैं नाहीं बोध को ॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अर्द्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करैं मुनिराज जी ।  
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए ॥

उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह-चिंता दुख ही मानो ।  
फाँस तनक-सी तन में सालै, चाह लँगोटी की दुख भालै ॥

भालै न समता सुख कभी नर, बिना मुनि मुद्रा धरै ।  
धनि नगन पर तन-नगन ठाड़े, सुर असुर पाँयनि परै ॥

घरमाँहिं तिसना जो घटावै, रुचि नहीं संसार सौं ।  
बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर-उपगार सौं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्धर्माङ्गाय अर्द्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

शील-बाढ़ नौ राख, ब्रह्म-भाव अन्तर लखो ।  
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नर-भव-सदा ॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता-बहिन-सुता पहिचानौ ।  
सहैं बान-वरषा बहु सूरे, टिकै न नैन-बान लखि कूरे ॥

कूरे तिया के अशुचि तन में, काम-रोगी रति करै ।  
बहु मृतक सड़हिं मसान माँहीं, काग ज्यों चोंचैं भरै ॥

संसार में विष-बेल नारी, तजि गये जोगीथरा ।  
‘द्यानत’ धरम दश पैंडि चढ़िकै, शिव-महल में पग धरा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्द्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

### समुच्चय जयमाला

दोहा

दश लच्छन वन्दौं सदा, मन-वांछित फलदाय ।  
कहों आरती भारती, हम पर होहु सहाय ॥

बेसरी छन्द

उत्तम छिमा जहाँ मन होई, अन्तर-बाहिर शत्रु न कोई ।  
उत्तम मार्दव विनय प्रकासै, नाना भेद ज्ञान सब भासै ॥

उत्तम आर्जव कपट मिटावै, दुरगति त्यागि सुगति उपजावै ।  
 उत्तम सत्य-वचन मुख बोलै, सो प्रानी संसार न डोलै ॥  
 उत्तम शौच लोभ परिहारी, सन्तोषी गुण-रत्न-भंडारी ।  
 उत्तम संयम पालै ज्ञाता, नर-भव सफल करै ले साता ॥  
 उत्तम तप निरवांछित पालै, सो नर करम-शत्रु को टालै ।  
 उत्तम त्यग करै जो कोई, भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥  
 उत्तम आकिंचन व्रत धारै, परम-समाधि-दशा विसतारै ।  
 उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावै, नर-सुर सहित मुकति-फल पावै ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-सत्य-शौच-संयम-तपस्त्यागकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्य-  
 दशलक्षणधर्माय पूर्णार्थ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

करै करम की निरजरा, भव-पींजरा विनाश ।  
 अजर-अमर पद को लहै, 'द्यानत' सुख की राश ॥  
 इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्

~~~~~

रत्नत्रय पूजा

पं. द्यानतराय

दोहा

चहुँ-गति-फनि-विष-हरन-मणि, दुख-पावक-जलधार ।
 शिव-सुख-सुधा-सरोवरी, सम्यक्-त्रयी निहार ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्-रत्नत्रयधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
 ॐ ह्रीं सम्यक्-रत्नत्रयधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ ह्रीं सम्यक्-रत्नत्रयधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (सोरठा)

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो ।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
 ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 चन्दन-केसर-गारि, परिमल महा सु रंगमय ।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

तन्दुल अमल चितार, वासमती-सुखदास के ।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
 ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

महकैं फूल अपार अलिङ्गुंजैं ज्यों थुति करैं ।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविधंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धयुत ।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप रत्नमय सार, जोत प्रकाशै जगत में ।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप सुवास विथार, चन्दन अगर कपूर की ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल शोभा अधिकार, लोंग छुहारे जायफल ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठ दरब निरधार, उत्तम सौं उत्तम लिये ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
सम्यक् दरशन ज्ञान, ब्रत शिव-मग तीनों मयी ।
पार उतारन यान, ‘द्यानत’ पूजों ब्रतसहित ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यग्दर्शन पूजा

दोहा

सिद्ध - अष्ट - गुनमय प्रगट, मुक्त जीव सोपान ।
ज्ञान चरित जिहँ बिन अफल, सम्यक्-दर्शन प्रधान ॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

अष्टक

(सोरठा)

नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल केसर धनसार, ताप हरै सीतल करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप-जोति तम-हार, घट-पट परकाशै महा ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप ग्रान-सुखकार, रोग-विघ्न जड़ता हरै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिवफल-करै ।
 सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
 सम्यग्दर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप निहचै लखै, तत्त्व-प्रीति व्यौहार ।
 रहितदोष पच्चीस हैं, सहित अष्ट गुन सार ॥
 चौपाई

सम्यग् दरशन-रतन गहीजै, जिन-वच में संदेह न कीजै ।
 इह-भव विभव चाह दुखदानी, पर-भव-भोग चहै मत प्रानी ॥
 गीता

प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरम-गुरु-प्रभु परखिए ।
 पर-दोष ढकिए धरम डिगते, को सुथिर कर हरखिए ॥
 चहुँ संघ को वात्सल्य कीजै, धरम की परभावना ।
 गुन आठ सौं गुन आठ लहिकै, इहाँ फेर न आवना ॥
 ॐ ह्रीं पञ्चविंशतिदोषरहिताष्टाङ्गसहितसम्यग्दर्शनाय पूर्णार्थं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यग्ज्ञानपूजा

दोहा

पंच-भेद जाके प्रगट, ज्ञेय-प्रकाशन-भान ।
 मोह-तपन-हर-चंद्रमा, सोई सम्यग्ज्ञान ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौष्ठ ।
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

अष्टक (सोरठा)

नीर सुगंध अपार, तृष्णा हरै मल छय करै ।
 सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै ।
 सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
 सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।
 सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
 सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दीप-जोति तम-हार, घट-पट परकाशै महा ।
 सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप ग्रान्ति सुखकार, रोग-विघ्न जड़ता है ।
 सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै ।
 सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
 सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप जाने नियत, ग्रन्थ पठन व्यौहार ।
 संशय विभ्रम मोह बिन, अष्ट अंग गुनकार ॥
 चौपाई मिश्रित गीता छन्द

सम्यग्ज्ञान-रतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया ।
 अच्छर शुद्ध अर्थ पहिचानो, अच्छर अरथ उभय संग जानो ॥
 जानो सुकाल-पठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइए ।
 तप रीति गहि बहुमान देकै, विनय गुन चित लाइए ॥
 ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञान-दर्पन देखना ।
 इस ज्ञान ही सौं भरत सीझा, और सब पट-पेखना ॥
 ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्थं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यक्कचारित्रपूजा

दोहा

विषयरोग औषध महा, दव-कषाय-जल-धार ।
 तीर्थकर जाको धरै, सम्यक्कचारित सार ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्कचारित्र ! अत्र अवतर अवतर संवैषट् ।
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्कचारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्कचारित्र ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

अष्टक

(सोरठा)

नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।
 सम्यक्कचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्कचारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै ।
 सम्यक्कचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्कचारित्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
 सम्यक्कचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्कचारित्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।
 सम्यक्कचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्कचारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नेवज विधि प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
 सम्यक्कचारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्कचारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप जोति तमहार, घट-पट परकाशै महा ।
 सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 धूप ग्रान सुखकार, रोग विघ्न जड़ता हरे ।
 सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर शिव फल करै ।
 सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
 सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप धिर नियत नय, तप संजम व्यौहार ।
 स्व-पर-दया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार ॥
 चौपाई मिश्रित गीता छन्द
 सम्यक्चारित रतन सँभालौ, पाँच पाप तजिकै ब्रत पालौ ।
 पंच समिति त्रय गुपति गहीजै, नर-भव सफल करहु तन छीजै ॥
 छीजै सदा तन को जतन यह, एक संजम पालिए ।
 बहु रुल्यो नरक-निगोद माँहीं, विष-कषायनि टालिए ॥
 शुभ करम-जोग सुधाट आयो, पार हो दिन जात है ।
 'द्यानत' धरम की नाव बैठो, शिव-पुरी कुशलात है ॥
 ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्चय जयमाला

दोहा

सम्यग्दरशन-ज्ञान-ब्रत, इन बिन मुकति न होय ।
 अन्धं पंगु अरु आलसी, जुदे जलें दव-लोय ॥
 चौपाई १६ मात्रा
 जापै ध्यान सुथिर बन आवै, ताके करम-बन्ध कट जावै ।
 तासों शिव-तिय प्रीति बढ़ावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥
 ताको चहुँगति के दुःख नाहीं, सो न परै भव-सागर माँहीं ।
 जनम-जरा-मृत दोष मिटावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥
 सोई दशलच्छन को साधै, सो सोलह कारण आराधै ।
 सो परमात्म पद उपजावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥
 सोई शक्रचक्रिपद लई, तीन लोक के सुख विलसेई ।
 सो रागादिक भाव बहावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥
 सोई लोकालोक निहारै, परमानन्द दशा विस्तारै ।
 आप तिरै औरन तिरवावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥
 ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

एक स्वरूप प्रकाश निज, वचन कह्यो नहि जाय ।
 तीन भेद व्यौहार सब 'द्यानत' को सुखदाय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्टाऽलिं क्षिपेत्

क्षमावाणी पूजा

कवि मल्ल

छप्पय

अंग क्षमा जिन-धर्म तनो दृढ़-मूल बखानो ।
सम्यक् रतन सँभाल हृदय में निश्चय जानो ॥
तज मिथ्या विष-मूल और चित निर्मल ठानो ।
जिनधर्म सौं प्रीत करो सब पातक भानो ॥

रलत्रय गह भविक-जन, जिन-आज्ञा सम चालिये ।
निश्चय कर आराधना, करम-रास को जालिये ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रलत्रय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं सम्यग्रलत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं सम्यग्रलत्रय ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

अष्टक

नीर सुगन्ध सुहावनो, पदम-द्रह को लाय ।
जन्म-रोग निरवारिये, सम्यक् रतन लहाय ॥

क्षमा गहो उर जीवडा, जिनवर-वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टाङ्गसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रलत्रयाय
जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

केसर चन्दन लीजिये, संग कपूर घसाय ।

अलि पंकति आवत घनी, वास सुगन्ध सुहाय ॥

क्षमा गहो उर जीवडा, जिनवर-वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रलत्रयाय
भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शालि अखण्डित लीजिये, कंचन-थाल भराय ।

जिनपद पूजों भाव सौं, अक्षत पद को पाय ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रलत्रयाय
अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पारिजात अरु केतकी, पहुप सुगन्ध गुलाब ।

श्रीजिन-चरण-सरोज कूँ, पूज हर्ष चित-चाव ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रलत्रयाय
कामबाणविधंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

शक्कर घृत सुरभी तना, व्यंजन षड्रस स्वाद ।

जिनके निकट चढ़ाय कर, हिरदे धरि आह्नाद ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रलत्रयाय
क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

हाटकमय दीपक रचो, बाति कपूर सुधार ।

शोधित घृत कर पूजिये, मोह-तिमिर निरवार ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रलत्रयाय
मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्णागर करपूर हो, अथवा दशविधि जान ।

जिन-चरणन छिंग खेइये, अष्ट-कर्म की हान ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रलत्रयाय
अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

केला अम्ब अनार फल, नारिकेल ले दाख ।

अग्र धरो जिनपद तने, मोक्ष होय जिन भाख ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्वारित्राय रत्नत्रयाय
मोक्षपदप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आदि मिलाय के, अरघ करो हरषाय ।

दुःख-जलांजलि दीजिये, श्री जिन होय सहाय ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टाङ्गसम्यज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्वारित्राय रत्नत्रयाय
अनर्घपदप्राप्तये अर्ध्य निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

उनतिस अंग की आरती, सुनो भविक चित लाय ।

मन-वचन्तन सरधा करो, उत्तम नर-भव पाय ॥

चौपाई

जैनधर्म में शंक न आने, सो निःशंकित गुण चित ठाने ।

जप तप कर फल वांछै नाहीं, निःकांक्षित गुण हो जिस माँहीं ॥१॥

पर को देख गिलानि न आने, सो तीजा सम्यक् गुण ठाने ।

आन देव को रंच न माने, सो निर्मूढ़ता गुण पहिचाने ॥२॥

पर को औगुण देख जु ढाकै, सो उपगूहन श्रीजिन भाखै ।

जैनधर्म तैं डिगता देखै, थापै बहुरि स्थिति कर लेखै ॥३॥

जिन-धरमी सौं प्रीति निवहिये, गउ-बच्छवत बच्छल कहिये ।

ज्यों त्यों करि उद्योत बढ़ावै, सो प्रभावना अंग कहावै ॥४॥

अष्ट अंग यह पालै जोई, सम्यग्दृष्टी कहिये सोई ।

अब गुण आठ ज्ञान के कहिये, भाखे श्रीजिन मन में गहिये ॥५॥

व्यंजन अक्षर सहित पढ़ीजै, व्यंजन-व्यंजित अंग कहीजै ।

अर्थ सहित शुध शब्द उचारै, दूजा अर्थ समग्रह धारै ॥६॥

तदुभय तीजा अंग लखीजै, अक्षर-अर्थ सहित जु पढ़ीजै ।

चौथा कालाध्ययन विचारै, काल समय लखि सुमरण धारै ॥७॥

पंचम अंग उपधान बतावै, पाठ सहित तब बहु फल पावै ।

षष्ठम विनय सुलभि सुनीजै, वाणी बहुत विनय सु पढ़ीजै ॥८॥

जापै पढ़ै न लोपै जाई, अंग सप्तम गुरुवाद कहाई ।

गुरु की बहुत विनय जु करीजै, सो अष्टम अंग धर सुख लीजै ॥९॥

यह आठों अंग-ज्ञान बढ़ावै, ज्ञाता मन-वचन्तन कर ध्यावै ।

अब आगे चारित्र सुनीजै, तेरहविध धर शिव-सुख लीजै ॥१०॥

छहों काय की रक्षा करिहै, सोई अहिंसा व्रत चित धरिहै ।

हित मित सत्य वचन मुख कहिये, सो सतवादी केवल लहिये ॥११॥

मन-वच-काय न चोरी करिये, सोई अचौर्य-व्रत चित धरिये ।

मनमथ-भय मन रंच न आने, सो मुनि ब्रह्मचर्य व्रत ठाने ॥१२॥

परिग्रह देख न मूर्छित होई, पंच महाव्रत-धारक सोई ।

महाव्रत ये पाँचों सु खरे हैं, सब तीर्थकर इनको करे हैं ॥१३॥

मन में विकल्प रंच न होई, मनोगुप्ति मुनि कहिये सोई ।

वचन अलीक रंच नहिं भाखैं, वचन गुप्ति सो मुनिवर राखैं ॥१४॥

कायोत्सर्ग परीषह सहिँैं, ता मुनि काय-गुप्ति जिन कहिँैं ।
 पंच समिति अब सुनिये भाई, अर्थ सहित भाखों जिनराई ॥१५॥
 हाथ चार जब भूमि निहारैं, तब मुनि ईर्यापथ पद धारैं ।
 मिष्ट वचन मुख बोलें सोई, भाषा-समिति तास मुनि होई ॥१६॥
 भोजन छियालिस दूषण टारैं, सो मुनि एषण शुद्धि विचारैं ।
 देखिके पोथी ले अरु धर हैं, सो आदान-निक्षेपण वर हैं ॥१७॥
 मल-मूत्र एकान्त जु डारें, परतिष्ठापन समिति सँभारें ।
 यह सब अंग उनतीस कहे हैं, जिन भाखे गणधर ने गहे हैं ॥१८॥
 आठ-आठ-तेरहविधि जानो, दर्शन-ज्ञान-चरित्र सु ठानो ।
 तातैं शिवपुर पहुँचो जाई, रत्नत्रय की यह विधि भाई ॥१९॥
 रत्नत्रय पूरण जब होई, क्षमा क्षमा करियो सब कोई ।
 चैत माघ भादों त्रय बारा, क्षमा क्षमा हम उर में धारा ॥२०॥

दोहा

यह क्षमावणी आरती, पढ़े सुनै जो कोय ।
 कहे 'मल्ल' सरधा करो, मुक्ति-श्री-फल होय ॥

ॐ ह्रीं निःशङ्किताङ्गाय निःकाङ्क्षिताङ्गाय निर्विचिकित्सताङ्गाय निर्मूढताङ्गाय
 उपगूहनाङ्गाय सुस्थितीकरणाङ्गाय वात्सल्याङ्गाय प्रभावनाङ्गाय सम्यग्दर्शनाय महार्थ्य
 निर्वपार्मीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं व्यञ्जनव्यञ्जिताय अर्थसमग्राय तदुभयसमग्राय कालाध्ययनाय उपधानोपहिताय
 विनयलब्धिप्रभावनाय गुर्वनिहवाय बहुमानोन्मानाय अष्टाङ्गसम्यग्ज्ञानाय महार्थ्य
 निर्वपार्मीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अहिंसामहाव्रताय सत्यमहाव्रताय अचौर्यमहाव्रताय ब्रह्मचर्यमहाव्रताय
 अपरिग्रहमहाव्रताय मनोगुप्तये वचनगुप्तये कायगुप्तये ईर्पासमितये भाषासमितये
 एषणासमितये आदाननिक्षेपणसमितये प्रतिष्ठापनसमितये त्रयोदशविधि-सम्यक्चारित्राय
 महार्थ्य निर्वपार्मीति स्वाहा ।

सोरठा— दोष न गहियो कोय, गुण गह पढ़िये भाव सों ।
 भूल चूक जो होय, अर्थ विचारि जु शोधिये ॥
 इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्

तीर्थकर पूजाएँ

श्री समुच्चय चतुर्विशति जिन पूजा

छन्द कवित्त

क्रषभ अजित सम्भव अभिनन्दन, सुमति पदम सुपाश्व जिनराय ।
 चन्द पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासुपूज्य पूजित सुरराय ॥
 विमल अनन्त धर्म जस-उज्ज्वल, शान्ति कुंथु अर मल्लि मनाय ।
 मुनिसुव्रत नमि नेमि पाश्व प्रभु, वर्द्धमान पद पुष्ण चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तचतुर्विशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवैषट् ।
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तचतुर्विशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तचतुर्विशतिजिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

मुनि मन सम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गन्ध भरा ।
 भरि कनक - कटोरी धीर, दीनी धार धरा ॥
 चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द - कन्द सही ।
 पद जजत हरत भवफन्द, पावत मोक्षमही ॥
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

गोशीर कपूर मिलाय, केसर रंग भरी ।
 जिन चरनन देत चढ़ाय, भव आताप हरी ॥ चौ०
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तन्दुल सित सोम समान, सुन्दर अनियारे ।
 मुक्ताफल की उनमान, पुञ्ज धरों प्यारे ॥
 चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द - कन्द सही ।
 पद जजत हरत भवफन्द, पावत मोक्षमही ॥
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

वर-कंज कदम्ब कुरण्ड, सुमन सुगन्ध भरे ।
 जिन अग्र धरों गुनमण्ड, कामकलंक हरे ॥ चौ०
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्टं निर्वपामीति स्वाहा ।
 मन - मोदन मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने ।
 रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने ॥ चौ०
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तम-खण्डन दीप जगाय, धारों तुम आगें ।
 सब तिमिर मोह क्षय जाय, ज्ञानकला जागें ॥ चौ०
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दश गन्ध हुताशन माँहि, हे प्रभु! खेवत हों ।
 मिस धूम करम जरि जाँहि, तुम पद सेवत हों ॥ चौ०
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुचि पक्व सुरस फल सार, सब ऋतु के ल्यायो ।
 देखत दृग मन को प्यार, पूजत सुख पायो ॥ चौ०
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आठों शुचि सार, ताको अर्घ करों ।
 तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों ॥ चौ०
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा—श्रीमत तीरथनाथ पद, माथ नाय हित हेत ।

गाऊँ गुणमाला अबै, अजर-अमर पद देत ॥

(छन्द घत्तानन्द)

जय भवतमभंजन, जनमनकंजन, रंजन दिनमनि स्वच्छकरा ।

शिवमग परकाशक, अरिगननाशक, चौबीसों जिनराज वरा ॥

पञ्चरि छन्द

जय ऋषभदेव ऋषि-गन नमन्त, जय अजित जीत वसु अरि तुरन्त ।

जय सम्भव भव-भय करत चूर, जय अभिनन्दन आनन्दपूर ॥१॥

जय सुमति सुमतिदायक दयाल, जय पद्म पद्मदुति तन रसाल ।

जय जय सुपास भव-पाश-नाश, जय चन्द, चन्द-तन-दुति-प्रकाश ॥२॥

जय पुष्पदन्त दुति-दन्त-सेत, जय शीतल शीतल-गुण-निकेत ।
 जय श्रेयनाथ नुत-सहजभुज्ज, जय वासव-पूजित वासुपुज्ज ॥३॥
 जय विमल विमल-पद-देनहार, जय जय अनन्त गुण-गण अपार ।
 जय धर्म धर्म शिवशर्म देत, जय शान्ति शान्ति-पुष्टी करेत ॥४॥
 जय कुन्थु कुन्थु-आदिक रखेय, जय अरजिन वसु अरि छय करेय ।
 जय मल्लि मल्ल हत-मोहमल्ल, जय मुनिसुव्रत ब्रतशल्ल दल्ल ॥५॥
 जय नमि नित वासव-नुत सपेम, जय नैमिनाथ वृष-चक्र-नेम ।
 जय पारसनाथ अनाथ-नाथ, जय वर्धमान शिव-नगर साथ ॥६॥

घृतानन्द

चौबीस जिनन्दा, आनन्द-कन्दा, पाप-निकन्दा, सुखकारी ।
 तिन पद-जुग-चन्दा, उदय अमन्दा, वासव-वन्दा, हितधारी ॥
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये महार्थ निर्वपामीति स्वाहा ।
 सोरठा-भुक्ति - मुक्ति - दातार, चौबीसों जिनराज वर ।
 तिन पद मन वच धार, जो पूजै सो शिव लहै ॥
इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री आदिनाथ पूजा

नाभिराय मरुदेवि के नन्दन, आदिनाथ स्वामी महाराज,
 सर्वार्थसिद्धि तैं आप पथारे, मध्य लोक माँहिं जिनराज ।
 इन्द्रदेव सब मिलकर आये, जन्म महोत्सव करने काज,
 आह्वानन सब विधि मिल करके, अपने कर पूजें प्रभु पाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवैषट् ।
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

क्षीरोदधि कौ उज्ज्वल जल ले, श्री जिनवर पद पूजन जाय ।
 जन्म जरा दुख मेटन कारन, ल्याय चढ़ाऊँ प्रभु के पाँय ॥
 श्री आदिनाथके चरणकमल पर, बलि-बलि जाऊँ मन-वच-काय ।
 हे करुणानिधि भव दुख मेटो, यातै मैं पूजों प्रभु पाँय ॥
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 मलयागिरि चन्दन दाहनिकन्दन, कंचन झारी में भर ल्याय ।
 श्रीजी के चरण चढ़ावो भविजन, भव आताप तुरत मिट जाय ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय संसारातपविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 शुभशालि अखंडित सौरभ मंडित, प्रासुक जल सौं धोकर ल्याय ।
 श्रीजी के चरण चढ़ावो भविजन, अक्षयपद को तुरत उपाय ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 कमल केतकी बेल चमेली, श्री गुलाब के पुष्प मँगाय ।
 श्रीजी के चरण चढ़ावो भविजन, कामबाण तुरत हि नसि जाय ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नेवज लीना षट्-रस भीना, श्री जिनवर आगे धरवाय ।
 थाल भराऊँ क्षुधा नसाऊँ, जिन गुण गावत मन हरषाय ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जगमग-जगमग होत दशों दिश, ज्योति रही मन्दिर में छाय ।
 श्रीजी के सन्मुख करत आरती, मोहतिमिर नासै दुखदाय ॥
 श्री आदिनाथके चरणकमल पर, बलि-बलि जाऊँ मन-वच-काय ।
 हे करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पाय ॥
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोहाध्कारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अगर कपूर सुगन्ध मनोहर चन्दन कूट सुगन्ध मिलाय ।
 श्रीजी के सन्मुख खेय धूपायन, कर्म जरे चहुँगति मिटि जाय ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय ।
 महामोक्षफल पावन कारन, ल्याय चढ़ाऊँ प्रभु के पाय ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 शुचि निर्मल नीरं गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरणाय ।
 दीप धूप फल अर्घ सु लेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पञ्चकल्याणकार्ध

सर्वारथसिद्धितैं चये, मरुदेवी उर आय ।
 दोज असित आषाढ़ की, जजूँ तिहारे पाँय ॥
 ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णद्वितीयायं गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व ।
 चैतवदी नौमी दिना, जन्म्यां श्री भगवान ।
 सुरपति उत्सव अतिकरा, मैं पूजौं धरि ध्यान ॥
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व ।
 तृणवत् ऋद्धि सब छाँड़ि के, तप धार्यो वन जाय ।
 नौमी चैत्र असेत की, जजूँ तिहारे पाँय ॥
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व ।
 फाल्गुन वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान ।
 इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजौं इह थान ॥
 ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व ।
 माघ चतुर्दशि कृष्ण की, मोक्ष गये भगवान ।
 भवि जीवों को बोधि के, पहुँचे शिवपुर थान ॥
 ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व ।

जयमाला

आदीश्वर महाराज मैं विनती तुमसे करूँ ।
 चारों गति के माँहिं मैं दुःख पायो सो सुनो ॥
 अष्ट कर्म मैं हुँ एकलो, यह दुष्ट महादुख देत हो ।
 कबहूँ इतर निगोद में मोकूँ, पटकत करत अचेत हो ॥
 म्हारी दीनतणी सुन वीनती ॥ टेक ॥

प्रभु कबहूँक पटक्यो नरक में, जठै जीव महादुख पाय हो ।
 निष्ठुर निरदई नारकी, जठै करत परस्पर घात हो ॥ म्हारी०
 प्रभु नरकतणां दुख अब कहूँ, जठै करत परस्पर घात हो ।
 कोइयक बाँध्यो खंभस्यो, पापी दे मुदगर की मार हो ॥ म्हारी०
 कोइयक काटें करोत सों, पापी अंगतणी दोय फाड़ हो ।
 प्रभु यह विधि दुःख भुगत्या घणां, फिर गति पाई तिरयंच हो ॥ म्हारी०

हिरणा बकरा बाछला, पशु दीन गरीब अनाथ हो ।
 पकड़ कसाई जाल में, पापी काट-काट तन खाय हो ।
 प्रभु मैं ऊंट बलद भैंसा भयो, जा पैं लादियो भार अपार हो ॥ म्हारी०
 नहिं चाल्यौ जब गिर पर्यो, पापी दे सोटन की मार हो ।
 प्रभु कोइयक पुण्य संजोग सूँ, मैं तो पायो स्वर्ग निवास हो ॥ म्हारी०
 देवांगना संग रमि रह्यो जठै भोगनि को परिताप हो ।
 प्रभु संग अप्सरा रमि रह्यो, कर-कर अति अनुराग हो ॥ म्हारी०
 कबहुँक नंदनवन विष्णु प्रभु, कबहुँक वनगृह मँहिं हो ।
 प्रभु यह विधि काल गमाय कैं, फिर माला गई मुरझाय हो ॥ म्हारी०
 देव थिती सब घट गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो ।
 सोच करत तन खिर पड्यो, फिर उपज्यो गरभ में जाय हो ॥ म्हारी०
 प्रभु गर्भतणा दुःख अब कहूँ, जठै सकुड़ाई की ठौर हो ।
 हलन चलन नहिं कर सक्यो, जठै सघन कीच घनघोर हो ॥ म्हारी०
 माता खावै चरपरो, फिर लागै तन संताप हो ।
 प्रभु जो जननी तातो भखै, फिर उपजै तन संताप हो ॥ म्हारी०
 औंधे मुख झूल्यो रह्यो, फेर निकसन कौन उपाय हो ।
 कठिन-कठिन कर नीसर्यो, जैसे निसरै जंत्री में तार हो ॥ म्हारी०
 प्रभु फिर निकसत ही धरत्यां पड्यो, फिर लागी भूख अपार हो ।
 रोय-रोय बिलख्यो घणों, दुख वेदन को नहि पार हो ॥
 म्हारी दीनतणी सुन वीनती ॥

प्रभु दुख मेटन समरथ धनी, यातैं लागूँ तिहारे पाँय हो ।
 सेवक अरज करै प्रभु मोकूँ, भवदधि पार उतार हो ॥ म्हारी०
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

श्रीजी की महिमा अगम है, कोई न पावै पार ।
 मैं मति अल्प अज्ञान हूँ, कौन करै विस्तार ॥
 विनती ऋषभ जिनेश की, जो पढ़सी मन ल्याय ।
 सुरगों में संशय नहीं, निहचै शिवपुर जाय ॥
 इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गिं क्षिपेत्

श्री चन्द्रप्रभजिन पूजन

छप्य

चारु चरन आचरन, चरन चितहरन चिह्नचर,
 चन्द्र चन्दतन चरित, चंद-थल चहत चतुर नर ।
 चतुक चण्ड चकचूरि, चारि चिद्चक्र गुनाकर,
 चंचल चलित सुरेश, चूलनुत चक्र धनुरधर ॥
 चर-अचर-हितू तारन-तरन, सुनत चहकि चिरनंद शुचि ।
 जिनचंदचरन चरच्यो चहत, चित-चकोर नचि रच्चि रुचि ॥

दोहा

धनुष डेढ सौ तुंग तन, महासेन नृपनन्द ।
 मातु लछमना उर जये, थापों चन्द-जिनन्द ॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (चाल नंदीधर पूजन)

गंगा हृद निरमल नीर, हाटक-भृंगभरा,
 तुम चरन जजों वर वीर, मेटो जनम जरा ।
 श्री चंदनाथ दुति चंद, चरनन चंद लगे,
 मन वच तन जजत अमंद, आतम जोति जगे ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीखण्ड कपूर सुचंग, केशर रंगभरी ।
 घसि प्रासुक जल के संग, भव आताप हरी ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

तन्दुल सित सोम समान सम लय अनियारे ।
 दिय पुंज मनोहर आन तुम पदतर प्यारे ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरदुम के सुमन सुरंग, गंधित अलि आवै ।
 तासों पद पूजत चंग, काम विथा जावै ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविधंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नेवज नाना परकार, इन्द्रिय-बलकारी ।

सो लै पद पूजों सार, आकुलताहारी ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तम भंजन दीप सँवार, तुम ढिग धारतु हों ।

मम तिमिर मोह निरवार, यह गुन धारतु हों ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविधंसनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दश गंध हुताशन माँहिं, हे प्रभु खेवतु हों ।
 मम करम दुष्ट जरि जाँहिं, यातैं सेवतु हों ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अति उत्तम फल सु मंगाय, तुम गुन गावतु हों ।
 पूजों तन मन हरषाय, विघ्न नशावतु हों ॥श्री०
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों ।
 पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमों ॥
 श्री चंदनाथ दुति चंद, चरनन चंद लगे ।
 मन वच तन जजत अमंद, आतम जोति जगे ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्धपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक

तोटक (वर्ण १२)

कलि पंचम चैत सुहात अली, गरभागम मंगल मोद भली ।
 हरि हर्षित पूजत मातु पिता, हम ध्यावत पावत शर्म सिता ॥
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपञ्चम्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्धं निर्वपामीति०
 कलि पौष इकादशि जन्म लयो, तब लोकविषै सुख-थोक भयो ।
 सुरईश जजें गिर-शीश तबै, हम पूजत हैं नुत-शीश अबै ॥
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्धं निर्वपा०

तप दुखर श्रीधर आप धरा, कलि पौष इग्यारसि पर्व वरा ।
निज ध्यान विषें लवलीन भये, धनि सो दिन पूजत विघ्न गये ॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णकादश्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्य निर्वपा०
वर केवलभानु उद्योत कियो, तिहुँ लोक-तणों भ्रम मेट दियो ।
कलि फाल्युन सप्तमी इन्द्र जजे, हम पूजहिं सर्व कलंक भजे ॥
ॐ ह्रीं फाल्युनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्य निर्वपा०
सित फाल्युन सप्तमि मुक्त गये, गुणवन्त अनन्त अबाध भये ।
हरि आय जजें तित मोद धरे, हम पूजत ही सब पाप हरे ॥
ॐ ह्रीं फाल्युनशुक्लसप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्य निर्वपा०

जयमाला

दोहा

हे मृगांक-अंकित-चरण, तुम गुण अगम अपार ।
गणधर से नहि पार लहि, तौ को वरनत सार ॥
पै तुम भगति हिये मम, प्रेरै अति उमगाय ।
तातैं गाऊँ सुगुण तुम, तुम ही होउ सहाय ॥
पद्मरि छन्द

जय चन्द्र जिनेन्द्र दया-निधान, भवकानन हानन दवप्रमान ।
जय गरभ जनम मंगल दिनन्द, भवि जीव विकाशन शर्म कन्द ॥१॥
दश लक्ष पूर्व की आयु पाय, मन बांछित सुख भोगे जिनाय ।
लखि कारण है जगतैं उदास, चिन्त्यो अनुप्रेक्षा सुख निवास ॥२॥
तित लौकान्तिक बोध्यो नियोग, हरि शिविका सजि धरियो अभोग ।
तापै तुम चढ़ि जिनचन्दराय, ता छिन की शोभा को कहाय ॥३॥
जिन अंग सेत सित चरम ढार, सित छत्र शीस गल-गुलक हार ।
सित रतनजड़ित भूषण विचित्र, सित चन्द्र-चरण चरचैं पवित्र ॥४॥
सित तन-द्युति नाकाधीश आप, सित शिविका कांधें धरि सुचाप ।
सित सुजस सुरेश नरेश सर्व, सित चित में चिन्तत जात पर्व ॥५॥
सित चन्द्र-नगरतैं निकसि नाथ, सित वन में पहुँचे सकल साथ ।
सित सिला शिरोमणि स्वच्छ छांह, सित तप तित धार्यो तुम जिनाह ॥६॥
सित पय को पारण परम सार, सित चन्द्रदत्त दीनों उदार ।
सित कर में सो पयधार देत, मानो बाँधत भवसिन्धु सेत ॥७॥
मानो सुपुण्यधारा प्रतच्छ, तित अचरज पन सुर किय ततच्छ ।
फिर जाय गहन सित तप करंत, सित केवलज्योति जग्यौ अनन्त ॥८॥
लहि समवसरण रचना महान, जाके देखत सब पापहान ।
जहँ तरु अशोक शोभै उतंग, सब शोकतनो चूरै प्रसंग ॥९॥
सुर सुमनवृष्टि नभतैं सुहात, मनु मन्मथ तज हथियार जात ।
बानी जिन मुखसौं खिरत सार, मनु तत्त्व प्रकाशन मुकुरधार ॥१०॥
जहँ चौसठ चमर अमर ढुरंत, मनु सुजसमेघ झरि लगिय तन्त ।
सिंहासन है जहँ कमल जुक्त, मनु शिवसरवर को कमलशुक्त ॥११॥
दुंदुभि जित बाजत मधुर सार, मनु करम जीत को है नगार ।
सिर छत्र फिरै त्रय श्वेतवर्ण, मनु रतन तीन त्रय-ताप-हर्ण ॥१२॥

तन प्रभातनों मण्डल सुहात, भवि देखत निज भव सात सात ।
 मनु दर्पण द्युति यह जगमगाय, भविजन भव मुख देखत सुआय ॥१३॥
 इत्यादि विभूति अनेक जान, बाहिज दीसत महिमा महान ।
 ताको वरणत नहिं लहत पार, तौ अन्तरंग को कहै सार ॥१४॥
 अनअन्त गुणनि-जुत करि विहार, धरमोपदेश दे भव्य तार ।
 फिर जोगनिरोधि अधाति हान, सम्प्रेद थकी लिय मुक्तिथान ॥१५॥
 ‘वृन्दावन’ वन्दत शीश नाय, तुम जानत हो मम उर जु भाय ।
 तातैं का कहों सु बार-बार, मन वांछित कारज सार-सार ॥१६॥

घत्तानन्द

जय चन्द-जिनंदा आनंदकंदा, भव-भय-भंजन राजै हैं ।
 रागादिक-द्वन्द्वा हरि सब फन्दा, मुक्ति माँहिं थिति साजै हैं ॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्दप्रभजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चौबोला

आठों दरब मिलाय गाय गुण, जो भविजन जिनचन्द जजैं ।
 ताके भव-भव के अघ भाजैं, मुक्ति सारसुख ताहि सजैं ॥
 जम के त्रास मिटैं सब ताके, सकल अमंगल दूर भजैं ।
 ‘वृन्दावन’ ऐसो लखि पूजत, जातैं शिवपुरि राज रजैं ॥

इत्याशीर्वादः पुष्णाञ्चलिं क्षिपेत्

श्री शीतलनाथ पूजन

(छन्द, मत्तमातङ्ग तथा मत्तगयंद, वर्ण २३)

शीतलनाथ नमों धरि हाथ, सुमाथ जिन्हों भवगाथ मिटाये ।
 अच्युततैं च्युत मात सुनन्द के, नन्द भये पुरभद्वल आये ॥
 वंश इक्षवाकु कियो जिन भूषित, भव्यन को भव पार लगाये ।
 ऐसे कृपानिधि के पद पंकज, थापतु हों हिय हर्ष बढ़ाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (छन्द वसंततिलका, वर्ण १४)

देवापगा सुवरवारि विशुद्ध लायो ।
 भृंगार हेम भरि भक्ति हिये बढ़ायो ॥
 रागादिदोष मलमर्दन हेतु येवा ।
 चर्चों पदाब्ज तव शीतलनाथ देवा ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

श्रीखंडसार वर कुंकुम गारि लीनों ।

कंसंग स्वच्छ धसि भक्ति हिये धरीनों ॥ रागादि०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा ।

मुक्ता समान सित तन्दुल सार राजैं ।

धारंत पुंज कलिकुंज समस्त भाजैं ॥ रागादि०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा ।

श्रीकेतकी प्रमुख पुष्प अदोष लायो ।

नौरंग जंगकरि भृंग सुरंग पायो ॥ रागादि०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा ।

नैवेद्य सार चरु चारु संवारि लायो ।

जांबूनद प्रभृति भाजन शीस नायो ॥ रागादि०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य नि. स्वाहा ।

स्नेह प्रपूरित सुदीपक जोति राजै ।

स्नेह प्रपूरित हिये जजतेऽघ भाजे ॥

रागादिदोष मलमर्दन हेतु येवा ।

चर्चों पदाब्ज तव शीतलनाथ देवा ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्णागरु प्रमुख गन्ध हुताशमांहीं ।

खेवो तवाग्र वसुकर्म जरन्त जाहीं ॥ रागादि०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

निम्बाम्र कर्कटि सु दाडिम आदि धारा ।

सौवर्ण गंध फल सार सुपक्व प्यारा ॥ रागादि०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कंशीफलादि वसु प्रासुक द्रव्य साजे ।

नाचे रचे मचत बञ्जत सञ्ज बाजे ॥ रागादि०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक

(छन्द इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा)

आठें वदी चैत सुगर्भ माँहिं, आये प्रभू मंगलरूप थाहीं ।

सेरैं शची मातु अनेक भेवा, चर्चों सदा शीतलनाथ देवा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाष्टम्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा

श्री माघ की द्वादशि श्याम जायो, भूलोक में मंगलसार आयो ।

शैलेन्द्र पै इन्द्र फनिन्द्र जज्ञै, मैं ध्यान धारों भवदुःख भज्ञै ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य०

श्री माघ की द्वादशि श्याम जानों, वैराग्य पायो भवभाव हानों ।

ध्यायो चिदानन्द निवार मोहा, चर्चों सदा चर्न निवार कोहा ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य०

चतुर्दशी पौषवदी सुहायो, ताही दिना केवललब्धि पायो ।

शोभै समोसृत्य बखानि धर्म, चर्चों सदा शीतल पर्म शर्म० ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य०

कुँवार की आठम शुद्ध बुद्धा, भये महामोक्षसरूप शुद्धा ।

सम्पेदतैं शीतलनाथ स्वामी, गुनाकरं तासु पदं नमामी ॥

ॐ ह्रीं आश्चिनशुक्लाष्टम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य०

जयमाला

(छन्द लोलतरंग, वर्ण ११)

आप अनंत गुनाकर राजैं, वस्तुविकासन भानु समाजैं ।

मैं यह जानि गही शरना है, मोहमहारिपु को हरना है ॥

(दोहा)

हेम वरन तन तुंग धनु, नव्ये अति अभिराम ।

सुर तरु अंक निहारि पद, पुन-पुन करों प्रणाम ॥

(छन्द तोटक, वर्ण १२)

जय शीतलनाथ जिनन्द वरं, भवदाहदवानल-मेघझरं ।

दुखभूतभंजन वज्रसमं, भवसागर-नागर-पोतपरमं ॥

कुह-मान-मया-गद-लोभ-हरं, अरि विघ्न गयंद मृगिंद वरं ।
 वृष वारिदवृष्टन सृष्टिहितू, पर दृष्टि विनाशन सुष्टु पितू ॥
 समवसृतसंजुत राजतु हो, उपमा अभिराम विराजतु हो ।
 वर बारहभेद सभाधित को, तित धर्म-बखानि कियौ हितको ॥
 पहले महिं श्री गनराज रजैं, दुतिये महिं कल्पसुरी जु सजैं ।
 त्रितिये गणिनी गुण भूरि धरैं, चवथे तिय जोतिष जोति भरैं ॥
 तिय-विंतरनी पनमें गनिये, छह में भुवनेसुर ती भनिये ।
 भुवनेश दशों थित सप्तम हैं, वसु में वसु-व्यंतर उत्तम हैं ॥
 नव में नभजोतिष पंच भरे, दश में दिविदेव समस्त खरे ।
 नरवृन्द इकादश में निवर्सैं, अरु बारह में पशु सर्व लर्सैं ॥
 तजि वैर प्रमोद धरैं सब ही, समतारस मग्न लर्सैं तब ही ।
 धुनि दिव्य सुनै तजि मोहमलं, गनराज असी धरि ज्ञानबलं ॥
 सबके हित तत्त्व बखान करैं, करुना मनरंजित शर्म भरैं ।
 वरने षटदर्व-तनें जितने, वर भेद विराजतु हैं तितने ॥
 पुनि ध्यान उभै शिवहेत मुना, इक धर्म दुती सुकलं अधुना ।
 तित धर्म सुध्यान-तणो गनियो, दशभेद लखे भ्रमको हनियो ॥
 पहलो अरि नाश अपाय सही, दुतियो जिनवैन उपाय गही ।
 त्रिति जीवविचै निजध्यावन है, चवथो सु अजीव रमावन है ॥
 पनमों सु उदै बलटारन है, छहमों अरिराग निवारन है ।
 भव त्यागन चिंतन सप्तम है, वसुमों चितलोभ न आतम है ॥
 नवमों जिनकी धुनि सीस धरै, दशमों जिनभाषित हेत करै ।
 इमि धर्म-तणों दश भेद भन्यो, पुनि शुक्लतणों चदु येम गन्यो ॥
 सुपृथक्त्ववितर्क विचार सही, सुइकत्ववितर्क विचार गही ।
 पुनि सूक्ष्मक्रियाप्रतिपात कही, विपरीतक्रियानिवृत्त लही ॥
 इन आदिक सर्व प्रकाश कियो, भवि जीवनि को शिव-स्वर्ग दियो ।
 पुनि मोच्छविहार कियो जिनजी, सुखसागर मग्न चिरं गुनजी ॥
 अब मैं शरना पकरी तुमरी, सुधि लेहु दयानिधि जी हमरी ।
 भव व्याधि निवार करो अब ही, मति ढील करो सुख धो सब ही ॥

(छन्द घत्तानन्द)

शीतल जिन ध्याऊँ भगति बढाऊँ, ज्यों रतनत्रयनिधि पाऊँ ।
 भवदंद नशाऊँ शिवथल जाऊँ, फेर न भौवन मैं आऊँ ॥
 ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय महार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

(छन्द मालिनी)

दिढरथ सुत श्रीमान्, पंचकल्याणधारी ।
 तिन पदजुग-पद्मं जो जजैं भक्तिधारी ॥
 सहसुख धनधान्यं, दीर्घ सौभाग्य पावै ।
 अनुक्रम अरि दाहै, मोक्षको सो सिधावै ॥
 इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्

श्री शान्तिनाथ पूजन

(मत्तगयन्द, यमकालंकार)

या भवकानन में चतुरानन, पाप-पनानन धेरि हमेरी ।

आतम जानन मानन ठानन, वान न होन दई शठ मेरी ॥

ता मद भानन आपहि हो, यह छानन आन न आनन टेरी ।

आन गही शरनागत को अब, श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

अष्टक (त्रिभंगी)

हिमगिरि-गतगंगा, धार अभंगा प्रासुक संगा भरि भूंगा,

जर-जनम-मृतंगा, नाशि अधंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ।

श्री शान्ति-जिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं, चक्रेशं,

हनि अरि-चक्रेशं, हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर बावन-चंदन, कदली-नंदन, घनआनंदन सहित घसों ।

भवताप निकंदन, ऐरानन्दन, वंदि अमंदन, चरन वसों ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

हिमकर करि लज्जत, मलय सुसज्जत, अच्छत जज्जत भरि थारी ।

दुखदारिद गज्जत, सदपदसज्जत, भवभयभज्जत अति भारी ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

मन्दार सरोजं, कदली जोजं, पुंज भरोजं मलयभरं ।

भरि कंचनथारी, तुम ढिग धारी, मदनविदारी, धीरधरं ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविधंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान नवीने पावन कीने, षटरस भीने सुखदाई ।

मन मोदन हारे, छुधा विदारे, आगै धारे गुन गाई ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तुम ज्ञान प्रकाशे, भ्रमतम नाशे, झेय विकाशे, सुखरासे ।

दीपक उजियारा, यातैं धारा, मोह निवारा, निज भासे ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन करपूरं करि वर चूरं, पावक भूरं, माँहि जुरं ।

तसु धूम उडावै, नाचत आवै, अलि गुंजावै, मधुरसुरं ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बादाम खजूरं दाडिम पूरं, निंबुक भूरं लै आयो ।

तासों पद जज्जौं, शिवफल सज्जौं, निजरस रज्जौं, उमगायो ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

वसु द्रव्य सँवारी तुम ढिग धारी, आनन्दकारी दृग्प्यारी ।

तुम हो भवतारी, करुनाधारी, यातैं थारी, शरनारी ॥

श्री शान्ति-जिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं, चक्रेशं ।

हनि अरि-चक्रेशं, हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्धपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक अर्ध

सुन्दरी तथा द्रुतविलम्बित

असित सातयैँ भादव जानिये, गरभमंगल ता दिन मानिये ।
शचि कियो जननी-पद-चर्चनं, हम करैँ इत ये पद अर्चनं॥
ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्ध ।

जनम जेठ चतुर्दशी श्याम है, सकल इन्द्र सु आगत धाम है ।
गजपुरै गज साजि सबै तबै, गिरि जजैं इत मैं जजि हों अबै ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्ध ।
भव शरीर सुभोग असार हैं, इमि विचार तबै तप धार हैं ।
भ्रमर चौदस जेठ सुहावनी, धरमहेत जजों गुन पावनी ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्ध ।
शुकल पौष दशैं सुखरास है, परम केवलज्ञान प्रकाश है ।
भवसमुद्र - उधारन देव की, हम करैँ नित मंगल सेवकी ॥
ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्ध ।
असित चौदश जेठ हने अरी, गिरि-समेद थकी शिवतिय वरी ।
सकल इन्द्र जजैं तित आइकैं, हम जजैं इत मस्तक नाइकैं ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्ध ।

जयमाला

रथोद्धता छन्द चन्द्रवर्त्म तथा चन्द्रवत्स (११ वर्ण लाटानुप्रास)

शान्ति शान्तिगुन मंडिते सदा, जाहि ध्यावत सुपंडिते सदा ।
मैं तिन्हें भगतिमंडिते सदा, पूजिहों कलुष-हंडिते सदा ॥१॥
मोक्षहेत तुम ही दयाल हो, हे जिनेश गुन रत्नमाल हो ।
मैं अबै सुगुनदाम ही धरों, ध्यावतें तुरित मुक्तितिय वरों ॥२॥
(पञ्चरि १६ मात्रा)

जय शान्तिनाथ चिदूपराज, भवसागर में अद्भुत जहाज ।
तुम तजि सरवारथसिद्धि थान, सरवारथजुत गजपुर महान ॥३॥
तित जनम लियो आनंद धार, हरि ततछिन आयो राजद्वार ।
इन्द्रानी जाय प्रसूत-थान, तुमको कर मैं लै हरष मान ॥४॥
हरि गोद देय सो मोद धार, सिर चमर अमर ढोरत अपार ।
गिरिराज जाय तित शिला पाण्ड, तापै थाप्यो अभिषेक माण्ड ॥५॥
तित पंचम उदधि तनों सुवार, सुर कर-कर करि ल्याये उदार ।
तब इन्द्र सहसकर करि अनन्द, तुम सिर धारा ढार्यो सुनन्द ॥६॥
अघ घघ घघ घघ धुनि होत घोर, भभ भभ भभ धध धध कलशशोर ।
दृम दृम दृम बाजत मृदंग, झन नन नन नन नन नूपुरंग ॥७॥
तन नन नन नन नन तनन तान, घन नन नन घंटा करत ध्वान ।
ताथेइ थेइ थेइ थेइ थेइ सुचाल, जुत नाचत नावत तुमहिं भाल ॥८॥
चट चट चट अटपट नटत नाट, झट झट झट हट नट शट विराट ।
इमि नाचत राचत भगत रंग, सुर लेत जहाँ आनंद संग ॥९॥

इत्यादि अतुल मंगल सुठाट, तित बन्यो जहाँ सुरगिरि विराट ।
 पुनि करि नियोग पितुसदन आय, हरि सौंप्यौ तुम तित वृद्ध थाय ॥१०॥

पुनि राजमाँहिं लहि चक्ररत्न, भोग्यौ छखंड करि धरम जत्न ।
 पुनि तप धरि केवलऋद्धि पाय, भविजीवन को शिवमग बताय ॥११॥

शिवपुर पहुँचे तुम हे जिनेश, गुनमण्डित अतुल अनंत भेष ।
 मैं ध्यावतु हों नित शीश नाय, हमरी भवबाधा हरि जिनाय ॥१२॥

सेवक अपनो निज जान जान, करुना करि भौभय भान भान ।
 यह विघ्नमूल तरु खण्ड खण्ड, चित्तचिन्तित आनन्द मण्ड मण्ड ॥१३॥

घटा

श्रीशान्ति महंता शिवतियकंता, सुगुन अनन्ता भगवन्ता ।
 भव भ्रमन हनंता, सौख्य अनन्ता, दातारं तारनवन्ता ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय महार्दि निर्वपामीति स्वाहा ।

रूपक सैव्या

शान्तिनाथ जिनके पद पंकज, जो भवि पूजै मनवचकाय,
 जनप जनप के पातक ताके, तताछिन तजिकै जाय पलाय ।
 मनवाँछित सुख पावै सौ नर, वाँचैं भगतिभाव अति लाय,
 तातैं 'वृन्दावन' नित वन्दै, जातैं शिवपुर-राज कराय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री नेमिनाथ पूजन

छन्द लक्ष्मी, तथा अर्खलक्ष्मीधरा

जैति जै जैति जै जैति जै नेम की, धर्म अवतार दातार शिव चैन की ।
 श्री शिवानन्द भौफंद निःकन्द की, ध्यावैं जिन्हैं इन्द्र नागेन्द्र औ मैन की ॥
 पर्म कल्यान के देनहारे तुम्हीं, देव हो एव तातैं करौं ऐन की ।
 थापि हों बार त्रै शुद्ध उच्चार कैं, शुद्धता धार भौपारकूं लेन की ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौष्ठद् ।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

चाल होली, ताल जत्त

दाता मोच्छ के, श्रीनेमिनाथ जिनराय, दाताऽ ॥ टेक ॥

निगम नदी कुश प्रासुक लीनौ, कंचनभृंग भराय ।

मन वच तन तैं धार देत ही, सकल कलंक नशाय ।

दाता मोच्छ के, श्रीनेमिनाथ जिनराय ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

हरि चन्दन जुत कदलीनन्दन, कुंकुम सङ्ग घसाय ।

विघ्न तप नाशन के कारन, जजौं तिहारे पाय ॥ दाताऽ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

पुण्यराशि तुम जस सम उज्ज्वल, तंदुल शुद्ध मँगाय ।

अख्य सौख्य भोगन के कारन, पुंज धरों गुन गाय ॥ दाताऽ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुण्डरीक तृणद्रुम को आदिक, सुमन सुगंधित लाय ।
दर्पक-मनमथ भंजन कारन, जजहुँ चरन लव लाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविधंसनाय पुष्टं निर्वपामीति स्वाहा ।

घेवर बावर खाजे साजे, ताजे तुरित मँगाय ।
क्षुधावेदनी नाश करन को, जजहुँ चरन उमगाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कनक दीप नवनीत पूरकर, उज्ज्वल जोति जगाय ।
तिमिरमोहनाशक तुमकों लखि, जजहुँ चरन हुलसाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दशविध गंध मँगाय मनोहर, गुंजत अलिगन आय ।
दशों बंध जारन के कारन, खेवों तुम ढिंग लाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरस वरन रसना मनभावन, पावन फल सु मँगाय ।
मोक्ष महाफल कारन पूजों, हे जिनवर तुम पाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय ।
अष्टम छिति के राज करन को, जजों अंग वसु नाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पञ्चकल्याणक

(सखी/पाईता छन्द)

सित कार्तिक छट्ठ अमंदा, गरभागम आनन्दकन्दा ।
शुचि सेय शिवापद आई, हम पूजत मन वच काई ॥
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व० ।

सित सावन छट्ठ अमन्दा, जनमें त्रिभुवन के चन्दा ।
पितु समुद्र महासुख पायो, हम पूजत विघ्न नशायो ॥
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय श्रावणशुक्लषष्ठ्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व० ।

तजि राजमती व्रत लीनों, सित सावन छट्ठ प्रवीनों ।
शिवनारि तबै हरणाई, हम पूजैं पद शिर नाई ॥
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय श्रावणशुक्लषष्ठ्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व० ।

सित आश्विन एकम चूरे, चारों धाती अति कूरे ।
लहि केवल महिमा सारा, हम पूजैं अष्ट प्रकारा ॥
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय आश्विनशुक्लप्रतिपदायां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व० ।

सित षाढ अष्टमी चूरे, चारों अधातिया कूरे ।
शिव उर्जयन्त-तैं पाई, हम पूजैं ध्यान लगाई ॥
ॐ ह्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय आषाढशुक्लाष्टम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्व० ।

जयमाला

दोहा— श्याम छवी तन चाप दश, उन्नत गुननिधि धाम ।

शंख चिह्नपद में निरखि, पुनि-पुनि करों प्रनाम ॥

पञ्चरि छन्द

जय जय जय नेमि जिनिंद चन्द, पितु समुद देन आनन्दकन्द ।

शिवमात कुमुद-मन-मोद-दाय, भविवृन्द चकोर सुखी कराय ॥

जय देव अपूरब मारतंड, तुम कीन ब्रह्मसुत सहस खंड ।
 शिवतिय मुखजलज-विकासनेश, नहि रहो सृष्टि में तम अशेष ॥
 भवि भीत कोक कीनों अशोक, शिवमग दरशायो शर्मथोक ।
 जै जै जै तुम गुनगंभीर, तुम आगम निपुन पुनीत धीर ॥
 तुम केवल जोति विराजमान, जै जै जै करुनानिधान ।
 तुम समवसरन में तत्त्वभेद, दरशायो जातें नशत खेद ॥
 तित तुमकों हरि आनन्द धार, पूजत भगतीजुत बहु प्रकार ।
 पुनि गद्यपद्यमय सुजस गाय, जै बल अनंत गुनवंतराय ॥
 जय शिव शंकर ब्रह्मा महेश, जय बुद्ध विधाता विष्णुवेष ।
 जय कुमति-मतंगन को मृगेन्द्र, जय मदनध्वांत को रवि जिनेन्द्र ॥
 जय कृपासिन्धु अविरुद्ध बुद्ध, जय रिद्धसिद्ध दाता प्रबुद्ध ।
 जय जग-जन मनरंजन महान, जय भवसागरमहँ सुषु यान ॥
 तुव भगति करै ते धन्य जीव, ते पावैं दिव-शिवपद सदीव ।
 तुमरो गुन देव विविध प्रकार, गावत नित किन्नर की जु नार ॥
 वर भगतिमाँहिं लवलीन होय, नाचैं ताथेइ थेइ थेइ बहोय ।
 तुम करुणासागर सृष्टिपाल, अब मोकों वेगि करों निहाल ॥
 मैं दुख अनंत वसुकरमजोग, भोगे सदीव नहि और रोग ।
 तुमको जग में जान्यों दयाल, हो वीतराग गुनरत्नमाल ॥
 तातें शरना अब गही आय, प्रभु करो वेगि मेरी सहाय ।
 यह विघ्नकरम मम खंड-खंड, मनवांछित कारज मंड-मंड ॥
 संसारकष्ट चकचूर-चूर, सहजानंद मम उर पूर-पूर ।
 निज पर प्रकाश बुधि देह-देह, तजि के विलंब सुधि लेह-लेह ॥
 हम जांचत हैं यह बार-बार, भवसागरतैं मो तार-तार ।
 नहिं सह्यो जात यह जगत दुःख, तातें विनवों हे सुगुनमुक्ख ॥

घत्तानन्द

श्रीनेमिकुमारं, जितमदमारं, शीलागारं, सुखकारं ।
 भवभयहरतारं, शिवकरतारं, दातारं धर्माधारं ॥
 ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मालिनी

सुख धन जस सिद्धी, पुत्र पौत्रादि वृद्धी, सकल मनसि सिद्धी, होतु है ताहि रिद्धी ।
 जजत हरष धारी, नेमि को जो अगारी, अनुक्रम अरिजारी, सो वरे मोच्छनारी ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री पार्श्वनाथ पूजा

कवि बख्तावरसिंह

वर स्वर्ग प्राणत को विहाय, सुमात वामा सुत भये,
 अश्वसेन के पारस जिनेश्वर, चरन जिनके सुर नये ।
 नौ हाथ उग्रत तन विराजै, उरग लच्छन पद लसैं,
 थापूँ तुम्हें जिन आय तिष्ठो कर्म मेरे सब नसैं ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (चामर छन्द)

क्षीरसोम के समान अम्बुसार लाइए ।
हेमपात्र धारिकैं सु आपको चढ़ाइए ।
पाश्वर्नाथ देव सेव आपकी करूँ सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिए नहीं कदा ॥

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दनादि केसरादि स्वच्छ गंध लीजिए ।
आप चरण चर्च मोहताप को हनीजिए ॥ पार्थ०

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

फेन चंद के समान अक्षतान् लाइकैं ।
चर्न के समीप सार पूज को रचाइकैं ॥ पार्थ०

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

केवड़ा गुलाब और केतकी चुनाइए ।
धार चर्न के समीप काम को नसाइए ॥ पार्थ०

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय कामबाणविघ्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

घेवरादि बावरादि मिष्ठ सर्पि में सनें ।
आप चर्ण अर्चते क्षुधादि रोग को हनें ॥ पार्थ०

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

लाय रत्न दीप को सनेह पूर के भरूँ ।
वातिका कपूर बारि मोह ध्वान्त को हरूँ ॥ पार्थ०

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप गन्ध लेय-कैं सुअग्नि संग जारिये ।
तास धूप के सुसंग कर्म अष्ट बारिये ॥

पाश्वर्नाथ देव सेव आपकी करूँ सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिए नहीं कदा ॥

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

खारकादि चिर्भटादि रत्नथाल में भरूँ ।
हर्ष धारिकैं जजूं सुमोक्ष सौख्य को वरूँ ॥ पार्थ०

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

नीर गन्ध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिये ।
दीप धूप श्रीफलादि अर्ध तैं जजीजिये ॥ पार्थ०

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय अनर्धपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक
(सखी/पाईता छन्द)

शुभ प्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये ।
वैशाख तनी दुति कारी, हम पूजें विघ्न निवारी ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय अर्ध. ।

जनमें त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता ।
श्यामा तन अद्भुत राजै, रवि कोटिक तेज सु लाजै ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णकादश्यां जन्मङ्गलमण्डिताय श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय अर्ध ।

कलि पौष एकादशि आई, तब बारह भावन भाई ।
अपने कर लोंच सु कीना, हम पूजैं चरन जजीना ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णकादश्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीपाश्वर्नाथजिनेन्द्राय अर्ध निर्व.

कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवल ज्ञान उपाई ।
 तब प्रभु उपदेश जु कीना, भवि जीवन को सुख दीना ॥
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्या केवलज्ञानमण्डिताय श्रीपाश्वनाथजिनेन्द्राय अर्धं निर्व.
 सित सावन सातैं आई, शिवनारि वरी जिनराई ।
 सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजैं मोक्ष कल्याना ॥
 ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीपाश्वनाथजिनेन्द्राय अर्धं ।

जयमाला

पारसनाथ जिनेन्द्र तने वच, पौनभखी जरते सुन पाये ।
 करयो सरधान लह्हो पद आन, भये पद्मावति शेष कहाये ॥
 नाम प्रताप टरें संताप सु, भव्यन को शिवशर्म दिखाये ।
 हो अश्वसेन के नंद भले, गुण गावत हैं तुमरे हरषाये ॥
 दोहा

केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ ।
 लक्षण उरग निहार पग, वंदैं पारसनाथ ॥

मोतियादाम छन्द

रची नगरी षट् मास अगार, बने चहुँ गोपुर शोभ अपार ।
 सु कोट तनी रचना छवि देत, कंगूरन पै लहैं बहुकेत ॥१॥
 बनारस की रचना जु अपार, करी बहु भाँति धनेश तैयार ।
 तहाँ विश्वसेन नरेन्द्र उदार, करैं सुख वाम सु दे पटनार ॥२॥
 तज्यो तुम प्रानत नाम विमान, भये तिनके घर नंदन आन ।
 तबै सुर इंद्र नियोगनि आय, गिरीन्द्र करी विधि न्हौन सुजाय ॥३॥
 पिता घर सौंप गये निज धाम, कुबेर करै वसु जाम सुकाम ।
 बढ़े जिन दोज मयंक समान, रमैं बहु बालक निर्जर आन ॥४॥
 भये जब अष्टम वर्ष कुमार, धरे अणुव्रत महा सुखकार ।
 पिता जब आन करी अरदास, करो तुम ब्याह वरो मम आस ॥५॥
 करी तब नाहि रहे जग चंद, किये तुम काम कषाय जु मंद ।
 चढ़े गजराज कुमारन संग, सु देखत गंगतनी सुतरंग ॥६॥
 लख्यो इक रंक करै तप घोर, चहुँ दिशि अग्नि बलै अति जोर ।
 कहै जिननाथ अरे सुन भ्रात, करै बहुजीवन की मत घात ॥७॥
 भयो तब कोप कहै कित जीव, जले तब नाग दिखाय सजीव ।
 लख्यो यह कारण भावन भाय, नये दिव ब्रह्म-ऋषी सुर आय ॥८॥
 तबहिं सुर चार प्रकार नियोग, धरी शिविका निजकंध मनोग ।
 कियो वन माँहि निवास जिनंद, धरे व्रत चारित आनंदकंद ॥९॥
 गहें तहैं अष्टम के उपवास, गये धनदत्त तने जु अवास ।
 दियो पद्मदान महासुखकार, भई पन वृष्टि तहाँ तिहि बार ॥१०॥
 गये तब कानन माँहि दयाल, धर्यो तुम योग सबहिं अघ टाल ।
 तबै वह धूम सुकेतु अयान, भयो कमठाचर को सुर आन ॥११॥
 करै नभ गैन लखे तुम धीर, जु पूरब बैर विचार गहीर ।
 कियो उपसर्ग भयानक घोर, चली बहु तीक्षण पवन झकोर ॥१२॥
 रह्यो दशहुँ दिश में तम छाय, लगी बहु अग्नि लखी नहि जाय ।
 सुरुण्डन के बिन मुण्ड दिखाय, पड़े जल मूसलधार अथाय ॥१३॥

तबै पद्मावति कंत धनंद, नये जुग आय तहाँ जिनचंद ।
 भग्यो तब रंक सु देखत हाल, लह्यो तब केवलज्ञान विशाल ॥१४॥
 दियो उपदेश महा हितकार, सुभव्यन बोध सम्मेद पधार ।
 सुवर्णभद्र जू कूट प्रसिद्ध, वरी शिवनारि लही वसुरिद्ध ॥१५॥
 जज्ञूं तुम चरन दोउ कर जोर, प्रभु लखिए अब ही मम ओर ।
 कहै ‘बखतावर रत्न’ बनाय, जिनेश हमें भव पार लगाय ॥१६॥

घत्तानन्द छन्द

जय पारस देवं, सुरकृत सेवं, वंदत चरण सुनागपती ।
 करुणा के धारी, पर उपकारी, शिवसुखकारी कर्महती ॥१७॥
 ॐ ह्रीं श्रीपाश्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल—जो पूजै मन लाय, भव्य पारस प्रभु नित ही ।
 ताके दुख सब जाँय, भीति व्यापै नहिं कित ही ॥
 सुख संपत्ति अधिकाय, पुत्र मित्रादिक सारे ।
 अनुक्रमसौं शिव लहै, ‘रतन’ इमि कहै पुकारे ॥
 इत्याशीर्वादः पुष्टाङ्गलिं क्षिपेत्

श्री वर्द्धमान पूजन

मत्तगयन्द

श्रीमत वीर हरें भव-पीर, भरें सुख-सीर अनाकुलताई,
 केहरि-अंक अरीकरदंक, नये हरि-पंकति-मौलि सुआई ।
 मैं तुमको इत थापतु हौं प्रभु, भक्ति समेत हिये हरषाई,
 हे करुणा-धन-धारक देव, इहाँ अब तिष्ठु शीघ्रहि आई ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौष्ट ।
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वष्ट ।

अष्टक(अवतार छन्द)

क्षीरोदधि सम शुचि नीर, कंचन-भृंग भरों,
 प्रभु वेग हरो भव-पीर, यातैं धार करों ।
 श्री वीर महा अतिवीर सन्मति नायक हों,
 जय वर्द्धमान गुण-धीर सन्मति-दायक हो ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयागिर-चन्दन सार, केसर-संग घसौं ।
 प्रभु भव-आताप निवार, पूजत हिय हुलसौं ॥ श्री वीर०
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

तन्दुल सित शशि-सम शुद्ध, लीनों थार भरी ।
 तसु पुंज धरों अविरुद्ध, पावों शिव-नगरी ॥ श्री वीर०
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुरतरु के सुमन समेत, सुमन सुमन प्यारे ।
 सो मन्मथ-भंजन हेत, पूजौं पद थारे ॥ श्री वीर०
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय कामबाणविधंसनाय पुष्टं निर्वपामीति स्वाहा ।

रस-रज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी ।
 पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख-अरी ॥ श्री वीर०
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तम-खण्डित मणिडत-नेह, दीपक जोवत हों ।
तुम पदतर है सुख-गेह, भ्रम-तम खोवत हों ॥ श्री वीर०
ॐ ह्यं श्रीवर्ष्मानजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

हरिचन्दन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा ।
तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा ॥ श्री वीर०
ॐ ह्यं श्रीवर्ष्मानजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
ऋतु-फल कल-वर्जित लाय, कंचन-थार भरों ।
शिव-फल-हित है जिनराय, तुम छिं भेंट धरों ॥ श्री वीर०
ॐ ह्यं श्रीवर्ष्मानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल वसु सजि हिम-थार, तन-मन-मोद धरों ।
गुण गाऊँ भव-दधि तार, पूजत पाप हरों ॥ श्री वीर०
ॐ ह्यं श्रीवर्ष्मानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

पञ्चकल्याणक

राग टप्पा चाल

मोहि राखो हो सरना, श्रीवर्ष्मान जिनरायजी,
मोहि राखो हो सरना ॥

गरभ साढ़ सित छटु लियो थिति, त्रिशला उर अघ-हरना ।
सुर सुरपति तित सेव कर्यो नित, मैं पूजों भव-तरना ॥ मोहि०
ॐ ह्यं आषाढशुक्लषष्ठ्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्ष्मानजिनेन्द्राय अर्ध ।

जनम चैत सित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कन-वरना ।
सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भव-हरना ॥ मोहि०
ॐ ह्यं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्ष्मानजिनेन्द्राय अर्ध ।

मगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना ।
नृप-कुमार घर पारन कीों, मैं पूजों तुम चरना ॥ मोहि०
ॐ ह्यं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्ष्मानजिनेन्द्राय अर्ध ।

शुक्ल दशैं वैशाख दिवस अरि, धाति चतुक छय करना ।
केवल लहि भवि भव-सर तारे, जजों चरन सुख भरना ॥ मोहि०
ॐ ह्यं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्ष्मानजिनेन्द्राय अर्ध ।

कार्तिक श्याम अमावस शिव-तिय, पावापुरते वरना ।
गन-फनि-वृन्द जजैं तित बहुविधि, मैं पूजों भय-हरना ॥ मोहि०
ॐ ह्यं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्ष्मानजिनेन्द्राय अर्ध ।

जयमाला

छन्द हरिगीता

गनधर अशनिधर, चक्रधर, हलधर गदाधर वरवदा,
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा ।
दुखहरन आनन्द-भरन तारन, तरन चरन रसाल हैं,
सुकुमाल गुन-मनिमाल उन्नत, भाल की जयमाल है ॥

घत्तानन्द

जय त्रिशला नन्दन, हरिकृत वन्दन, जगदानन्दन चन्दवरं ।
भव-ताप-निकन्दन, तन कन-मन्दन, रहित-सपन्दन नयन-धरं ॥

छन्द तोटक

जय केवल-भानु कलासदनं, भवि-कोक-विकाशन कंज-वनं ।
जग - जीत - महारिपु - मोह - हरं, रज - ज्ञान - दृगावर - चूर - करं ॥१॥

गर्भादिक-मंगल-मणित हो, दुख-दारिद को नित खण्डित हो ।
 जगमाँहि तुम्हीं सत-पणित हो, तुम ही भव-भाव विहणित हो ॥२॥
 हरिवंश-सरोजन को रवि हो, बलवन्त महन्त तुम्हीं कवि हो ।
 लहि केवल धर्म-प्रकाश कियो, अबलों सोइ मारग राजति यो ॥३॥
 पुनि आप तने गुन माँहि सही, सुर मग्न रहैं जितने सब ही ।
 तिनकी वनिता गुन गावत हैं, लय माननिसौं मन-भावत हैं ॥४॥
 पुनि नाचत रंग उमंग भरी, तुअ भक्ति विषें पग येम धरी ।
 झननं झननं झननं झननं, सुर लेत तहाँ तननं तननं ॥५॥
 घननं घननं घन घण्ट बजै, दृमदं दृमदं मिरदंग सजै ।
 गगनांगन-गर्भगता सुगता, ततता ततता अतता वितता ॥६॥
 धृगतां धृगतां गति बाजत है, सुरताल रसाल जु छाजत है ।
 सननं सननं सननं नभ में, इक रूप अनेक जु धारि भ्रमें ॥७॥
 कई नारि सुबीन बजावति हैं, तुमरो जस उज्ज्वल गावति हैं ।
 कर-ताल विषें करताल धरें, सुरताल विशाल जु नाद करें ॥८॥
 इन आदि अनेक उछाह भरी, सुर भक्ति करें प्रभु जी तुमरी ।
 तुम ही जग-जीवनि के पितु हो, तुम ही बिन कारनतैं हितु हो ॥९॥
 तुम ही सब विघ्न-विनाशन हो, तुम ही निज आनन्द-भासन हो ।
 तुम ही चित चिन्तित-दायक हो, जगमाँहि तुम्हीं सब लायक हो ॥१०॥
 तुमरे पन मंगल माँहि सही, जिय उत्तम पुन्य लियो सब ही ।
 हमको तुमरी सरनागत है, तुमरे गुन में मन पागत है ॥११॥
 प्रभु मो हिय आप सदा बसिये, जबलों वसु कर्म नहीं नसिये ।
 तब लों तुम ध्यान हिये वरतो, तबलों श्रुत चिन्तन चित्त रतो ॥१२॥
 तबलों व्रत चारित चाहतु हों, तबलों शुभ भाव सुगाहतु हों ।
 तबलों सत-संगति नित्य रहो, तबलों मम संजम चित्त गहो ॥१३॥
 जबलों नहि नाश करैं अरि को, शिव-नारि वरैं समता धरि को ।
 यह द्यो तबलों हमको जिन जी, हम जाचतु हैं इतनी सुन जी ॥१४॥

घतानन्द

श्रीवीर-जिनेशा नमित-सुरेशा, नाग-नरेशा भगति भरा ।
 ‘वृन्दावन’ ध्यावै विघ्न नशावै, वांछित पावै शर्म-वरा ॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय पूर्णार्धं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दोहा—श्री सनमति के जुगल पद, जो पूजै धरि प्रीति ।
 ‘वृन्दावन’ सो चतुर नर, लहै मुक्ति नवनीत ॥
 इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्

अध्यार्थावली

बीस तीर्थकर

जल फल आठों दर्व अरघ कर प्रीति धरी है,
 गणधर इन्द्रनिहूतैं थुति पूरी न करी है।
 द्यानत सेवक जानके (हो) जगतें लेहु निकार,
 सीमन्धर जिन आदि दे बीस विदेह मँझार।
 (श्री जिनराज हो भव तारण तरण जहाज ॥)
 ॐ ह्रीं श्रीसीमन्धरादिविद्यमानविंशतितीर्थद्वारे द्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति०।

कृत्रिमाकृत्रिम जिनबिम्ब

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान्,
 वन्दे भावन-व्यन्तरान् द्युतिवरान् कल्पामरावासगान् ॥
 सद्-गन्धाक्षत-पुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैर्
 नीरादैश्च यजे प्रणम्य शिरसा, दुष्कर्मणां शान्तये ॥
 (सात करोड़ बहत्तर लाख, सु-भवन जिन पाताल में ।
 मध्यलोक में चारसौ अद्वावन, जजों अधमल टाल के ॥
 अब लखचौरासी सहस्र सत्याणव, अधिक तेझ्स रु कहे ।
 बिन संख ज्योतिष व्यन्तरालय, सब जजों मन वच ठहे ॥)
 ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमजिनबिम्बेभ्योऽर्थं निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्ध भगवान

गन्धाद्यं सुपयोमधुव्रत-गणैः, सङ्गं वरं चन्दनं,
 पुष्पौद्यं विमलं सदक्षत - चयं, रम्यं चरुं दीपकम् ।
 धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं, श्रेष्ठं फलं लब्ध्ये,
 सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं, सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥
 ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्चय चौबीसी भगवान

जल फल आठों शुचिसार ताको अर्ध करों,
 तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों ।
 चौबीसों श्रीजिनचंद, आनन्दकंद सही,
 पद जजत हरत भव फंद, पावत मोक्ष मही ॥
 ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विशतिर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्व. ।

तीस चौबीसी

द्रव्य आठों, जु लीना है, अर्ध कर में नवीना है,
 पूजताँ पाप छीना है, ‘भानुमल’ जोड़ कीना है।
 दीप अढाई सरस राजैं, क्षेत्र दस ताँ विषें छाजैं,
 सातशत बीस जिनराजैं, पूजताँ पाप सब भाजै ॥
 ॐ ह्रीं पञ्चभरतपञ्चैरावतयोः भूतभविष्यद्वर्तमानसम्बन्धिविंशत्यधिकसप्तशत-

जिनेन्द्रेभ्योऽर्थं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री आदिनाथ भगवान

शुचि निर्मल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरणाय,
 दीप धूप फल अर्ध सुलेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय ।
 श्रीआदिनाथ के चरण कमल पर बलि बलि जाऊँ मन-वच-काय,
 हे करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पाय ॥
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री चन्द्रप्रभ भगवान

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों ।
 पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमों ॥
 श्री चन्द्रनाथ दुति चन्द, चरनन चंद लगै ।
 मन-वच-तन जजत अमंद, आतमजोति जगै ॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री वासुपूज्य भगवान

जल फल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई,
 शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरों यह लाई ।

वासुपूज्य वसुपूज-तनुज पद, वासव सेवत आई,
बालब्रह्मचारी लखि जिन को, शिवतिय सनमुख धाई ॥
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री शान्तिनाथ भगवान

वसु द्रव्य सँवारी, तुम ढिग धारी, आनन्दकारी दृग प्यारी ।
तुम हो भवतारी, करुणाधारी, यातै थारी शरनारी ॥
श्री शान्ति-जिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं, चक्रेशं ।
हनि अरि-चक्रेशं हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं ॥
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री नेमिनाथ भगवान

जल फल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलायू ।
अष्टम छिति के राज करन को, जजों अंग वसु नायू ॥
दाता मोच्छ के, श्रीनेमिनाथ जिनरायू ॥
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीपार्थनाथ भगवान

नीर गन्ध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिये ।
दीप - धूप - श्रीफलादि अर्ध तें जजीजिये ॥
पार्थनाथ देव सेव आपकी करुँ सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष, भूलिये नहीं कदा ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्थनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री महावीर भगवान

जल फल वसु सजि हिम थार, तन-मन मोद धरों ।
गुण गाऊँ भवदधि-तार, पूजत पाप हरों ॥
श्री वीर महा अतिवीर सन्मति नायक हो ।
जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मतिदायक हो ॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री बाहुबली स्वामी

हूँ शुद्ध निराकुल सिद्धों सम, भवलोक हमारा वासा ना ।
रिपु राग रु द्वेष लगे पीछे, यातें शिवपद को पाया ना ॥
निज के गुण निज में पाने को, प्रभु अर्ध संजोकर लाया हूँ ।
हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ ॥
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच-बालयति

सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ अरघ बनावत हैं ।
वसुकर्म अनादि संयोग, ताहि नशावत हैं ॥
श्री वासुपूज्य मल्लि नेम, पारस वीर अती ।
नमूँ मन-वच-तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति ॥
ॐ ह्रीं श्रीपञ्चबालयतिर्तीर्थझरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्ध निर्वपामीति स्वाहा ।

नन्दीश्वरद्वीप

यह अरघ कियो निजहेत, तुमको अरपतु हों ।
'धानत' कीज्यो शिवखेत, भूमि समरपतु हों ॥
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पूज करों ।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरों ॥

नन्दीश्वरद्वीप महान चारों दिशि सोहें ।
बावन जिन मन्दिर जान सुर-नर-मन मोहें ॥
ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तर-दक्षिणदिक्षु द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो
अनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोलहकारण

जल फल आठों दरब चढ़ाय, 'ध्यानत' वरत करों मन लाय ।
परमगुरु हो, जय-जय नाथ परम गुरु हो ॥
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थकर पददाय ।
परमगुरु हो, जय-जय नाथ परमगुरु हो ॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

पञ्चमेरु

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'ध्यानत' पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धि-अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति

रत्नत्रय

आठ दरब निरधार, उत्तम सो उत्तम लिये ।
जनम रोग निरवार सम्यक् रत्नत्रय भजूँ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

दशलक्षण

आठों दरब संवार, 'ध्यानत' अधिक उछाह सों ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मागाय अनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

सप्तर्षि

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना ।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥
मन्वादि चारणऋद्धि धारक, मुनिन की पूजा करूँ ।
ता करें पातक हरें सारे, सकल आनंद विस्तरूँ ॥
ॐ हः श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

निर्वाणक्षेत्र

जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं ।
'ध्यानत' करो निरभय जगत सों, जोर कर विनती करौं ।
सम्मेदगढ़ गिरनार चंपा पावापुर कैलाश कों ।
पूजौं सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास कों ॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थद्वारनिर्वाणक्षेत्रेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

सरस्वती

जल चन्दन अक्षत फूल चरु, चत दीप धूप अति फल लावै ।
पूजा को ठानत जो तुम जानत, सो नर 'ध्यानत' सुख पावै ।
तीर्थकर की ध्वनि गणधर ने सुनी अंग रचे चुनि ज्ञानमई ।
सो जिनवर वानी शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी पूज्य भई ।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेवै अनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री ऋषिमण्डल

जल फलादिक द्रव्य लेकर अर्ध सुन्दर कर लिया ।
संसार रोग निवार भगवन् वारि तुम पद में दिया ॥
जहाँ सुभग ऋषिमण्डल विराजें पूजि मन-वचन सदा ।
तिस मनोवांछित मिलत सब सुख स्वजन में दुख नहि कदा ॥
ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थय ऋषिमण्डलाय अर्ध्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र

नीर चन्दन अखंड अक्षत पुष्प चरु अति सार ही ।
वर धूप निरमल फल विविध, बहु अर्ध सन्त उतार ही ॥
सो मेट दुर्गति होय सुरगति, सुख लहै शुद्ध भाव सों ।
सम्मेदगढ़ पर बीस जिनवर, पूजि भवि उच्छाह सों ॥
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्राय नमः अर्ध्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

महार्घ

मैं देव श्री अरहंत पूजूँ, सिद्ध पूजूँ चाव सों ।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ, साधु पूजूँ भाव सों ॥
अर्हन्त भाषित बैन पूजूँ, द्वादशांग रची गनी ।
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरण, शिवहेत सब आशा हनी ॥
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि, दयामय पूजूँ सदा ।
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहि कदा ॥
त्रैलोक्य के कृत्रिम, अकृत्रिम, चैत्य चैत्यालय जजूँ ।
पनमेरु-नन्दीश्वर जिनालय, खचर सुरपूजित भजूँ ॥
कैलाशश्री सम्मेदश्री, गिरनारगिरि पूजूँ सदा ।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि, और तीरथ सर्वदा ॥
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ, बीस क्षेत्र विदेह के ।
नामावली इक सहस्रवसु जय होय पति शिवगेह के ॥
दोहा

जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय ।
सर्व पूज्य पद पूजहूँ, बहु विधि भक्ति बढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं भावपूजाभाववंदना त्रिकालपूजा त्रिकाल-वंदना करै करावै
भावना भावै श्री अरिहन्तजी सिद्धजी आचार्यजी उपाध्यायजी सर्वसाधुजी
पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः प्रथमानुयोग-करणानुयोग-चरणानुयोग-द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः।
दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो नमः । उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मेभ्यो नमः।
सम्पर्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः । जल के विषे, थल के विषे, आकाश के
विषे, गुफा के विषे, पहाड़ के विषे, नगरनगरी विषे, ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक,
पाताललोक विषे विराजमान कृत्रिम अकृत्रिम जिनचैत्यालय- जिनबिम्बेभ्यो नमः ।
विदेहक्षेत्रे विद्यमान-विंशतितीर्थङ्करेभ्यो नमः । पाँच भरत, पाँच ऐरावत दशक्षेत्र
सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनबिम्बेभ्यो नमः । नन्दीश्वर-
द्वीपसम्बन्धी बावन जिनचैत्यालयेभ्यो नमः । पञ्चमेरुसम्बन्धी अस्सी
जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। सम्मेदशिखर, कैलाश, चम्पापुर, पावापुर, गिरनार,
सोनागिरि, राजगृही, शत्रुज्जय, तारङ्गा, मथुरा आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः ।

जैनबिद्री, मूडबिद्री, हस्तिनापुर, चन्द्रेरी, पपौरा, अयोध्या, चमत्कारजी, महावीरजी, पदमपुरीजी, तिजारा आदि अतिशयक्षेत्रेभ्यो नमः श्रीचारणऋद्धिधारी सप्तपरमर्षभ्यो नमः ।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्त-
चतुर्विंशतितीर्थङ्करपरमदेवं आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे
.....नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे मासे ... शुभपक्षे तिथौ
.....वासरे मुन्यार्थिकाश्रावकश्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं अनर्घपदप्राप्तये
सम्पूर्णार्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

शान्तिपाठ

(चौपाई)

शान्तिनाथ मुख शशि उनहारी, शील गुणव्रत संयमधारी ।
लखन एक सौ आठ विराजैं, निरखत नयन कमलदल लाजैं ॥
पञ्चम चक्रवर्ति पदधारी, सोलम तीर्थङ्कर सुखकारी ।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शान्तिहित शान्ति विधायक ॥
दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा ।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ॥
शान्ति जिनेश शान्ति सुखदाई, जगत्पूज्य पूजैं शिर नाई ।
परम शान्ति दीजै हम सबको, पढ़ैं तिन्हें पुनि चार सू को ॥

वसन्ततिलका

पूजैं जिन्हें मुकुटहार किरीट लाके, इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ॥
सो शान्तिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप, मेरे लिये करहिं शान्ति सदा अनूप ॥
(निम्न श्लोक को पढ़कर जल छोड़ना चाहिए)

उपजाति

संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीनकों को यतिनायकों को ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन ! शान्ति को दे ॥

स्थग्धरा

होवै सारी प्रजा को, सुख बलयुत हो, धर्म-धारी नरेशा ।
होवै वर्षा समै पै, तिलभर न रहे, व्याधियों का अन्देशा ॥
होवै चोरी न जारी, सुसमय वरतै, हो न दुष्काल मारी ।
सारे ही देश धारैं, जिनवर वृष को, जो सदा सौख्यकारी ॥
दोहा

घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज ।
शान्ति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज ॥

मन्दाक्रान्ता

शास्त्रों का हो, पठन सुखदा, लाभ सत्संगती का,
सद्वृत्तों का, सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का ।
बोलूँ प्यारे, वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ,
तौ लों सेऊँ, चरण जिनके, मोक्ष जो लों न पाऊँ ॥

आर्य

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में ।
तब लौं लीन रहौं प्रभु, जब लौं पाया न मुक्ति पद मैंने ॥

अक्षर पद मात्रा से, दूषित जो कुछ कहा गया मुझसे ।
 क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भव दुख से ॥
 हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊँ तव चरण-शरण बलिहारी ।
 मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्
 (यहाँ पर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ना चाहिए)

दोहा

बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय ।
 तुम प्रसाद तैं परमगुरु, सो सब पूरन होय ॥
 पूजनविधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आह्वान ।
 और विसर्जन हूँ नहीं, क्षमा करहु भगवान ॥
 मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव ।
 क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव ॥
 आये जो जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमान ।
 ते अब जावहू कृपाकर, अपने-अपने थान ॥

(निम्न श्लोक पढ़कर विसर्जन करना चाहिये)

श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय ।
 भव-भव के पातक कर्टे, दुःख दूर हो जाय ॥
 (यहाँ पर नौ बार णमोकार मंत्र जपना चाहिये ।)

स्तुति पाठ

तुम तरणतारण भवनिवारण भविक-मन आनन्दनो ।
 श्रीनाभिनन्दन जगतवंदन आदिनाथ निरञ्जनो ॥१॥

तुम आदिनाथ अनादि सेऊँ सेय पद पूजा करूँ ।
 कैलाशगिरि पर रिषभ जिनवर पदकमल हिरदै धरूँ ॥२॥

तुम अजितनाथ अजीत जीते अष्टकर्म महाबली ।
 यह विरद सुनकर सरन आयो कृपा कीज्यो नाथजी ॥३॥

तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलच्छन चन्द्रपुरी परमेश्वरो ।
 महासेननन्दन जगतवंदन चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥४॥

तुम शान्ति पाँच कल्याण पूजूं शुद्ध मन वच काय जू ।
 दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन विघ्न जाय पलाय जू ॥५॥

तुम बालब्रह्म विवेकसागर भव्यकमल विकाशनो ।
 श्री नेमिनाथ पवित्र दिनकर पापतिमिर विनाशनो ॥६॥

जिन तजी राजुल राजकन्या कामसेन्या वश करी ।
 चारित्ररथ चढ़ भये दूलह जाय शिवसुन्दरि वरी ॥७॥

कंदर्प दर्प सु सर्पलच्छन कमठ शठ निर्मद कियो ।
 अथवसेननन्दन जगतवंदन सकल संघ मंगल कियो ॥८॥

जिन धरी बालकपणे दीक्षा कमठ मान विदारकैं ।
 श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र के पद मैं नमूँ शिर धारकैं ॥९॥
 तुम कर्मधाता मोखदाता दीन जान दया करो ।
 सिद्धार्थनन्दन जगतवंदन महावीर जिनेश्वरो ॥१०॥
 छत्र तीन सोहै सुरनर मोहै वीनती अवधारिये ।
 कर जोडि सेवक वीनवै प्रभु आवागमन निवारिये ॥११॥
 अब होउ भव भव स्वामी मेरे मैं सदा सेवक रहों ।
 कर जोड़ यो वरदान मागूँ मोक्षफल जावत लहों ॥१२॥
 जो एक माँहीं एक राजत एक माँहीं अनेकनो ।
 इक अनेक की नाहिं संख्या नमूँ सिद्ध निरंजनो ॥१३॥

चौपट

मैं तुम चरण कमल गुण गाय, बहुविधि भक्ति करी मन लाय ।
 जनम-जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ॥१४॥
 कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय ।
 बार-बार मैं विनती करूँ, तुम सेवा भवसागर तरूँ ॥१५॥
 नाम लेत सब दुख मिट जाय, तुम दर्शन देख्या प्रभु आय ।
 तुम हो प्रभु देवन के देव, मैं तो करूँ चरण तव सेव ॥१६॥
 जिन पूजातें सब सुख होय, जिन पूजा सम अवर न कोय ।
 जिन पूजातें स्वर्ग विमान, अनुक्रमतें पावें निर्वान ॥
 मैं आयो पूजन के काज, मेरो जनम सफल भयो आज ।
 पूजा करके नवाऊँ शीस, मुझ अपराध क्षमहु जगदीस ॥१७॥

दोहा

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान ।
 मो गरीब की वीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥१८॥
 पूजन करते देव का, आद्य मध्य अवसान ।
 स्वर्गन के सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥१९॥
 जैसी महिमा तुम विषै, और धरै नहिं कोय ।
 जो सूरज मैं ज्योति है, तारा गण नहिं सोय ॥२०॥
 नाथ तिहारे नाम तैं, अघ छिन माँहिं पलाय ।
 ज्यों दिनकर परकाश तैं, अंधकार विनशाय ॥२१॥
 बहुत प्रशंसा क्या करूँ, मैं प्रभु बहुत अजान ।
 पूजाविधि जानूँ नहीं, सरन राखि भगवान ॥२२॥

इति भाषास्तुतिपाठ समाप्त



स्वाध्याय पाठ

तत्त्वार्थसूत्रम्

आचार्य गृद्धपिच्छ

मोक्ष-मार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्म-भूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्व-तत्त्वानां वन्दे तद्गुण-लब्धये ॥

स्वर्गरा

१त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्कं नवपदसहितं जीव-षट्काय-लेश्याः,
पञ्चान्ये चास्तिकाया ब्रत-समिति-गति-ज्ञान-चारित्र-भेदाः ।
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्विरीशैः,
प्रत्येति श्रद्धधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः ॥१॥

२सिद्धे जयप्पसिद्धे चउविहाराहणाफलं पत्ते ।
वंदिता अरहंते वोच्छं आराहणा कमसो ॥२॥
उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं ।
दंसण-णाण-चरितं तवाणमाराहणा भणिया ॥३॥

अथ प्रथमोऽध्यायः

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥१॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं
सम्यग्दर्शनम् ॥२॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥ जीवाजीवास्त्रव-बन्ध-
संवर-निर्जरा-मोक्षास्तत्त्वम् ॥४॥ नाम-स्थापना-द्रव्य-भावतस्तन्यासः
॥५॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥६॥ निर्देश-स्वामित्व-साधनाधिकरण-स्थिति-
विधानतः ॥७॥ सत्संख्या-क्षेत्र-स्पर्शन-कालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥
मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानि ज्ञानम् ॥९॥ तत्प्रमाणे ॥१०॥
आद्ये परोक्षम् ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा
चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥१३॥ तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम्
॥१४॥ अवग्रहेहावायधारणाः ॥१५॥ बहु-बहुविधि-क्षिप्रानिःसृतानुक्त-
ध्वाणां सेतराणाम् ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥१८॥
न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्वयनेकद्वादशभेदम्
॥२०॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥२१॥ क्षयोपशम-निमित्तः
षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥२२॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥
विशुद्धयप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धि-क्षेत्र-स्वामि-
विषयेभ्योऽवधि-मनःपर्यययोः ॥२५॥ मतिश्रुतयोर्निर्बन्धो द्रव्येष्वसर्व-
पर्ययेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधे: ॥२७॥ तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य
॥२८॥ सर्वद्रव्यपर्ययेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनि भाज्यानि
युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३०॥ मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥
सदसतोरविशेषादृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥ नैगम-संग्रह-
व्यवहारर्जुसूत्र-शब्द-समभिरुढैवंभूता नयाः ॥३३॥
॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिक-
पारिणामिकौ च ॥१॥ द्विनवाष्टादशैक-विंशति-त्रिभेदा यथाक्रमम् ॥२॥ सम्यक्त्व-चारित्रे ॥३॥ ज्ञान-दर्शन-दान-लाभ-भोगोपभोग-
वीर्याणि च ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्ध्यश्चतुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्व-
चारित्र-संयमासंयमाश्च ॥५॥ गति-कषाय-लिङ्ग-मिथ्यादर्शनाज्ञाना-
संयतासिद्ध-लेश्याश्चतुस्त्र्यैकैकैकषड्भेदाः ॥६॥ जीवभव्या-
भव्यत्वानि च ॥७॥ उपयोगो लक्षणम् ॥८॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥९॥
संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्कामनस्काः ॥११॥
संसारिणश्चस्थावराः ॥१२॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥
दीन्द्रियादयन्नसाः ॥१४॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥१५॥ द्विविधानि ॥१६॥
निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥१७॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥१८॥
स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुःश्रोत्राणि ॥१९॥ स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-
शब्दास्तदर्थाः ॥२०॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥२१॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥
कृमिपिपीलिका-भ्रमरमनुष्यादीनामैकैवृद्धानि ॥२३॥
संज्ञिनः समनस्काः ॥२४॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥२५॥ अनुश्रेणि
गतिः ॥२६॥ अविग्रहा जीवस्य ॥२७॥ विग्रहवती च संसारिणः
प्राक् चतुर्भ्यः ॥२८॥ एकसमयाविग्रहा ॥२९॥ एकं द्वौ त्रीन्
वानाहारकः ॥३०॥ सम्मूर्च्छन-गर्भोपपादा जन्म ॥३१॥ सचित्त-
शीत-संवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥३२॥ जरायुजाण्डज-
पोतानां गर्भः ॥३३॥ देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥ शेषाणां
सम्मूर्च्छनम् ॥३५॥ औदारिक-वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि
शरीराणि ॥३६॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक्
तैजसात् ॥३८॥ अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतीघाते ॥४०॥ अनादि-
सम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्या-
चतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥ गर्भसम्मूर्च्छनजमाघम् ॥४५॥
औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥४६॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥४७॥
तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥
नारकसम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥५१॥
शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिक-चरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोऽ-
नपवर्त्ययुषः ॥५३॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

रत्न-शर्करा-वालुका-पङ्क-धूम-तमो-महातमःप्रभा भूमयो घनाम्बु-
वाताकाश-प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥१॥ तासु त्रिंशत्-पञ्चविंशति-
पञ्चदश-दश-त्रि-पञ्चैनैक-नरक-शतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥२॥
नारका नित्याशुभतर-लेश्या-परिणाम-देह-वेदना-विक्रियाः ॥३॥
परस्परोदीरित-दुःखाः ॥४॥ संक्लिष्टासुरोदीरित-दुःखाश्च प्राक्

चतुर्थ्याः ॥५॥ तेष्वेक-त्रि-सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-त्रयस्त्रिंशत्-
 सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ॥६॥ जम्बूद्वीप-लवणोदादयः
 शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥ द्विद्विर्विष्कम्भाः पूर्व-पूर्व-परिक्षेपिणो
 वलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजन-शतसहस्रविष्कम्भो
 जम्बूद्वीपः ॥९॥ भरत-हैमवत-हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्यवतैरावतवर्षाः
 क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्-महाहिमवन्-निषध-
 नील-रुक्मि-शिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥११॥ हेमार्जुन-तपनीय-वैदूर्य-
 रजत-हैममयाः ॥१२॥ मणि-विचित्र-पार्था उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः
 ॥१३॥ पद्म - महापद्म - तिगिञ्छ - केसरि - महापुण्डरीक - पुण्डरीका
 हृदास्तेषामुपरि ॥१४॥ प्रथमो योजन-सहस्रायामस्तदद्विष्कम्भो हृदः
 ॥१५॥ दशयोजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥१७॥
 तद्-द्विगुण-द्विगुणा हृदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्यः
 श्रीहीर्घृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिक-
 परिषत्काः ॥१९॥ गङ्गासिन्धु - रोहिणोहितास्या - हरिद्विरिकान्ता-
 सीतासीतोदा - नारीनरकान्ता - सुवर्णरूप्यकूला - रक्तारक्तोदाः
 सरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥२१॥ शेषास्त्व-
 परगाः ॥२२॥ चतुर्दशनदी-सहस्र-परिवृता गङ्गा-सिन्ध्वादयो नद्यः
 ॥२३॥ भरतः षड्विंश-पञ्चयोजन-शत-विस्तारः षट् चैकोनविंशति-
 भागा योजनस्य ॥२४॥ तद्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधरवर्षा
 विदेहान्ताः ॥२५॥ उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥२६॥ भरतैरावतयो-
 वृद्धिहासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥२७॥ ताभ्यामपरा
 भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥ एक-द्वि-त्रि-पल्योपमस्थितयो हैमवतक-
 हारि-वर्षक-दैवकुरवकाः ॥२९॥ तथोत्तराः ॥३०॥ विदेहेषु संख्येय-
 कालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः
 ॥३२॥ द्विर्धातिकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ्-
 मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावत-
 विदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरुत्तरकुरुभ्यः ॥३७॥ नृस्थिती परावरे
 त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥३८॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥३९॥
 ॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥२॥ दशाष्ट-
 पञ्च-द्वादश-विकल्पाः कल्पोपन्नपर्यन्ताः ॥३॥ इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंश-
 पारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः
 ॥४॥ त्रायस्त्रिंशलोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥५॥ पूर्वयोर्द्वान्द्राः
 ॥६॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-
 मनःप्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः ॥९॥ भवनवासिनोऽसुर-नाग-
 विद्युत्सुपर्णांगिवात्-स्तनितोदधि-द्वीप-दिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यन्तराः
 किन्नर-किंपुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः ॥११॥

ज्योतिष्काः सूर्यचन्द्रमसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च ॥१२॥ मेरु-
 प्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥ तत्कृतः कालविभागः ॥१४॥
 बहिरवस्थिताः ॥१५॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च
 ॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मेशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-
 ब्रह्मोत्तर-लान्तव-कापिष्ठ-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत-
 प्राणतयो-रारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्ता-
 पराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥ स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-
 विशुद्धीन्द्रियावधि-विषयतोऽधिकाः ॥२०॥ गति-शरीर-परिग्रहाभि-
 मानतो हीनाः ॥२१॥ पीत-पद्म-शुक्ल-लेश्या द्वि-त्रि-शेषेषु ॥२२॥
 प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः ॥२४॥
 सारस्वतादित्यवह्न्यरुण-गर्दतोय-तुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥२५॥
 विजयादिषु द्विचरमाः ॥२६॥ औपपादिक-मनुष्येभ्यः शेषा-
 स्तिर्यग्योनयः ॥२७॥ स्थितिरसुर-नाग-सुपर्ण-द्वीप-शेषाणां सागरोपम-
 त्रिपल्योपमार्ध-हीन-मिता ॥२८॥ सौधर्मेशानयोः सागरोपमे अधिके
 ॥२९॥ सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ॥३०॥ त्रि-सप्त-नवैकादश-
 त्रयोदश-पञ्चदशभिरधिकानि तु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमैकैकेन
 नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥ अपरा
 पल्योपममधिकम् ॥३३॥ परतः परतः पूर्वा पूर्वानन्तरा ॥३४॥
 नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥३५॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥३६॥
 भवनेषु च ॥३७॥ व्यन्तराणां च ॥३८॥ परा पल्योपममधिकम्
 ॥३९॥ ज्योतिष्काणां च ॥४०॥ तदष्टभागोऽपरा ॥४१॥
 लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥४२॥
 ॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः

अजीवकाया धर्माधर्मकाशपुद्गलाः ॥१॥ द्रव्याणि ॥२॥
 जीवाश्च ॥३॥ नित्यवस्थितान्यरूपाणि ॥४॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥५॥
 आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥६॥ निष्क्रियाणि च ॥७॥ असंख्येयाः
 प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम् ॥८॥ आकाशस्यानन्ताः ॥९॥ संख्येया-
 संख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥१०॥ नाणोः ॥११॥ लोकाकाशेऽवगाहः
 ॥१२॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः
 पुद्गलानाम् ॥१४॥ असंख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥१५॥ प्रदेश-
 संहार-विसर्पभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥ गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयो-
 रूपकारः ॥१७॥ आकाशस्यावगाहः ॥१८॥ शरीर-वाङ्-मनःप्राणापानाः
 पुद्गलानाम् ॥१९॥ सुख-दुःख-जीवित-मरणोपग्रहाश्च ॥२०॥
 परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥२१॥ वर्तना-परिणाम-क्रियाः परत्वापरत्वे च
 कालस्य ॥२२॥ स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्द-बन्ध-
 सौक्ष्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायातपोद्योतवन्तश्च ॥२४॥ अणवः
 स्कन्धाश्च ॥२५॥ भेद-सङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदादणुः ॥२७॥

भेदसङ्गताभ्यां चाक्षुषः ॥२८॥ सद् द्रव्यलक्षणम् ॥२९॥ उत्पाद-
व्यय-धौव्ययुक्तं सत् ॥३०॥ तद्वावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥
अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥३२॥ स्निग्धरुक्षत्वाद् बन्धः ॥३३॥ न जघन्य-
गुणानाम् ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥३५॥ द्वचधिकादिगुणानां तु
॥३६॥ बन्धेऽधिकौ परिणामिकौ च ॥३७॥ गुण-पर्ययवद् द्रव्यम्
॥३८॥ कालश्च ॥३९॥ सोऽनन्तसमयः ॥४०॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा
गुणाः ॥४१॥ तद्वावः परिणामः ॥४२॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

अथ षष्ठोऽध्यायः

कायवाड्मनःकर्म योगः ॥१॥ स आस्त्रवः ॥२॥ शुभः
पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥३॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्या-
पथयोः ॥४॥ इन्द्रिय-कषायाव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुःपञ्च-पञ्चविंशति-
संख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥५॥ तीव्र-मन्द-ज्ञाताज्ञात-भावाधिकरण-वीर्य-
विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥६॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥७॥ आद्यं
संरम्भ-समारम्भ-भारम्भ-योग-कृत-कारितानुमत-कषायविशेषैस्त्रिस्त्रि-
स्त्रिशतुश्चैकशः ॥८॥ निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा द्विचतुर्द्वित्रि-
भेदाः परम् ॥९॥ तत्प्रदोष-निह्व-मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता
ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥१०॥ दुःख-शोक-तापाक्रन्दन-वध-
परिदेवनान्यात्म-परोभय-स्थान्यसद्वेद्यस्य ॥११॥ भूतव्रत्यनुकम्पादान-
सरागसंयमादि-योगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥ केवलिश्रुत-
संघधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥१३॥ कषायोदयातीव्र-
परिणामश्चारित्रमोहस्य ॥१४॥ बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्यायुषः
॥१५॥ माया तैर्यग्नेनस्य ॥१६॥ अल्पारम्भ-परिग्रहत्वं मानुषस्य
॥१७॥ स्वभाव-मार्दवं च ॥१८॥ निःशीलब्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥१९॥
सरागसंयम-संयमासंयमाकामनिर्जरा-बालतपांसि दैवस्य ॥२०॥
सम्यक्त्वं च ॥२१॥ योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥
तद्विपरीतं शुभस्य ॥२३॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसंपन्नता शीलब्रतेष्व-
नतीचारोऽभीक्षणज्ञानोपयोग-संवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधि-
वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्ग-
प्रभावना-प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥२४॥ परात्म-निन्दा-
प्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥ तद्विपर्ययो
नीचैर्वृत्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥२६॥ विज्ञकरणमन्तरायस्य ॥२७॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

अथ सप्तमोऽध्यायः

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्वतम् ॥१॥ देशसर्वतो-
ऽणुमहती ॥२॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥३॥ वाङ्मोगुप्ती-

र्यदाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पश्च ॥४॥ क्रोध-लोभ-
 भीरुत्व-हास्य-प्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पश्च ॥५॥ शून्यागार-
 विमोचितावास-परोपरोधाकरण-भैक्ष्यशुद्धि-सधर्माविसंवादाः पश्च
 ॥६॥ स्त्रीरागकथाश्रवण - तन्मनोहराङ्गनिरीक्षण - पूर्वरतानुस्मरण-
 वृष्टेष्टरस-स्वशरीरसंस्कारत्यागाः पश्च ॥७॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय-
 विषयरागद्वेषवर्जनानि पश्च ॥८॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम्
 ॥९॥ दुःखमेव वा ॥९०॥ मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ्यानि च
 सत्त्वगुणाधिक-क्लिश्यमानाविनेयेषु ॥९१॥ जगत्काय-स्वभावौ वा
 संवेगवैराग्यार्थम् ॥९२॥ प्रमत्तयोगात् प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥९३॥
 असदभिधानमनृतम् ॥९४॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥९५॥ मैथुनमब्रह्म
 ॥९६॥ मूर्छा परिग्रहः ॥९७॥ निःशल्यो व्रती ॥९८॥ अगार्यनगारश्च
 ॥९९॥ अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदण्डविरति-सामायिक-
 प्रोषधोपवासोपभोग-परिभोग-परिमाणातिथि-संविभागव्रत-सम्पन्नश्च
 ॥२१॥ मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता ॥२२॥ शङ्का-काङ्क्षा-
 विचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतिचाराः ॥२३॥
 व्रतशीलेषु पश्च पश्च यथाक्रमम् ॥२४॥ बन्धवधच्छेदाति-
 भारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥२५॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेख-
 क्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥२६॥ स्तेनप्रयोग-तदाहृतादान-
 विरुद्धराज्यातिक्रम-हीनाधिकमानोन्मान-प्रतिरूपकव्यवहाराः ॥२७॥
 परविवाह-करणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडाकाम-
 तीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥ क्षेत्रवास्तु-हिरण्यसुवर्ण-धनधान्य-दासीदास-
 कुण्डप्रमाणातिक्रमाः ॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्-व्यतिक्रम-क्षेत्रवृद्धि-
 स्मृत्यन्तराधानानि ॥३०॥ आनयन-प्रेष्यप्रयोग-शब्द-सूपानुपात-
 पुद्गलक्षेषाः ॥३१॥ कन्दर्प-कौत्कुच्य-मौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोप-
 भोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥३२॥ योगदुष्प्रणिधानानादरस्मृत्यनुप-
 स्थानानि ॥३३॥ अप्रत्यवेक्षितप्रमार्जितोत्सर्गादान-संस्तरोपक्रमणा-
 नादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥ सचित्तसम्बन्धसम्मिश्राभिषवदुष्प्रक्वा-
 हाराः ॥३५॥ सचित्तनिक्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः
 ॥३६॥ जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि ॥३७॥
 अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गं दानम् ॥३८॥ विधि-द्रव्य-दातृ-पात्र-
 विशेषात्तद्विशेषः ॥३९॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अथ अष्टमोऽध्यायः

मिथ्यादर्शनाविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्धहेतवः ॥१॥
 सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥२॥
 प्रकृति-स्थित्यनुभव-प्रदेशास्तद्विधयः ॥३॥ आद्यो ज्ञान-दर्शनावरण-
 वेदनीय-मोहनीयायुर्नाम-गोत्रान्तरायाः ॥४॥ पञ्च-नव-द्वचष्टाविंशति-
 चतुर्द्विंचत्वारिंशद्द्वि-पञ्च-भेदा यथाक्रमम् ॥५॥ मति-श्रुतावधि-

मनःपर्यय-केवलानाम् ॥६॥ चक्षुरचक्षुरवधि-केवलानां निद्रा-
 निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला-स्त्यानगृद्धयश्च ॥७॥ सदसद्देवे ॥८॥
 दर्शन-चारित्र-मोहनीयाकषाय-कषाय-वेदनीयाख्यास्त्रि-द्वि-नव-
 षोडश-भेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्यकषाय-कषायौ हास्य-
 रत्यरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुन्नपुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्य-
 प्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान-संज्वलन-विकल्पाश्चैकशः क्रोध-मान-माया-
 लोभाः ॥९॥ नारक-तैर्यग्योन-मानुष-दैवानि ॥१०॥ गति-जाति-
 शरीराङ्गोपाङ्ग - निर्माण - बन्धन-सङ्घात-संस्थान-संहनन-स्पर्शरसगन्ध-
 वर्णानुपूर्व्याऽगुरुलघूपदात - परघातातपोद्योतोच्छ्वास - विहायोगतयः
 प्रत्येकशरीर-त्रस-सुभग-सुस्वर - शुभ - सूक्ष्म - पर्याप्ति - स्थिरादेय-
 यशःकीर्ति-सेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥११॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥१२॥ दान-
 लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणाम् ॥१३॥ आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च
 त्रिंशत्सागरोपम-कोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥१४॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य
 ॥१५॥ विंशतिर्मामिगोत्रयोः ॥१६॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः
 ॥१७॥ अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥१८॥ नामगोत्रयोरष्टौ
 ॥१९॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥२०॥ विपाकोऽनुभवः ॥२१॥ स
 यथानाम ॥२२॥ ततश्च निर्जरा ॥२३॥ नामप्रत्ययाः सर्वतो योग-
 विशेषात् सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेषेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः
 ॥२४॥ सद्देव-शुभायुर्नाम-गोत्राणि पुण्यम् ॥२५॥ अतोऽन्यत्पापम्
 ॥२६॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

अथ नवमोऽध्यायः

आस्ववनिरोधः संवरः ॥१॥ स गुप्ति-समिति-धर्मानुप्रेक्षा-
 परिषहजय-चारित्रैः ॥२॥ तपसा निर्जरा च ॥३॥ सम्यग्योगनिग्रहो
 गुप्तिः ॥४॥ ईर्या-भाषैषणादान-निक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥५॥ उत्तम-
 क्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि धर्मः
 ॥६॥ अनित्याशरण-संसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्व-संवर-निर्जरा-लोक-
 बोधिदुर्लभ-धर्मस्वाख्यातत्त्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥७॥ मार्गाच्यवन-
 निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥८॥ क्षुत्पिपासा-शीतोष्ण-दंशमशक-
 नाग्न्यारति-स्त्री-चर्या-निषद्या-शय्याक्रोश-वध-याचनालाभ-रोग-तृणस्पर्श-
 मल-सत्कारपुरस्कार-प्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥९॥ सूक्ष्मसाम्परायच्छङ्गस्थ-
 वीतरागयोश्चतुर्दश ॥१०॥ एकादश जिने ॥११॥ बादर-साम्पराये
 सर्वे ॥१२॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥१३॥ दर्शन-मोहनान्तराययो-
 रदर्शनालाभौ ॥१४॥ चारित्रमोहे नाग्न्यारति-स्त्री-निषद्याक्रोश-याचना-
 सत्कारपुरस्काराः ॥१५॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकादयो भाज्या
 युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतेः ॥१७॥ सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहार-
 विशुद्धिसूक्ष्मसाम्पराय-यथाख्यातमिति चारित्रम् ॥१८॥ अनशनाव-

मौदर्य-वृत्तिपरिसंख्यान-रसपरित्याग-विविक्तशय्यासन-कायक्लेशा
 बाह्यं तपः ॥१९॥ प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग-
 ध्यानान्युत्तरम् ॥२०॥ नव-चतुर्दश-पञ्च-द्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात्
 ॥२१॥ आलोचन-प्रतिक्रमण-तदुभय-विवेक-व्युत्सर्ग-तपश्छेद-
 परिहारोपस्थापनाः ॥२२॥ ज्ञान-दर्शन-चारित्रोपचाराः ॥२३॥
 आचार्योपाध्याय-तपस्त्वि-शैक्ष्य-ग्लान-गण-कुल-संघ-साधु-मनोज्ञानाम्
 ॥२४॥ वाचना-पृच्छनानुप्रेक्षाम्नाय-धर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्याभ्यन्त-
 रोपध्योः ॥२६॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात्
 ॥२७॥ आर्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि ॥२८॥ परे मोक्षहेतु ॥२९॥
 आर्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥३०॥
 विपरीतं मनोज्ञस्य ॥३१॥ वेदनायाश्च ॥३२॥ निदानं च ॥३३॥
 तदविरत-देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम् ॥३४॥ हिंसानृत-स्तेय-विषय-
 संरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत-देशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापायविपाक-
 संस्थानविचयाय धर्म्यम् ॥३६॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥ परे
 केवलिनः ॥३८॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-व्युपरत-
 क्रियानिवर्तीनि ॥३९॥ त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम् ॥४०॥ एकाश्रये
 सवितर्क-वीचारे पूर्वे ॥४१॥ अवीचारं द्वितीयम् ॥४२॥ वितर्कः
 श्रुतम् ॥४३॥ वीचारोऽर्थ-व्यञ्जन-योग-सङ्कान्तिः ॥४४॥ सम्यग्दृष्टि-
 श्रावक-विरतानन्तवियोजक-दर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्तमोह-
 क्षपक-क्षीणमोह-जिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जराः ॥४५॥ पुलाक-
 वकुश-कुशील-निर्गन्थ-स्नातका निर्गन्थाः ॥४६॥ संयम-श्रुत-
 प्रतिसेवना-तीर्थ-लिङ्ग-लेश्योपपाद-स्थान-विकल्पतः साध्याः ॥४७॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे नवमोऽध्यायः ॥९॥

अथ दशमोऽध्यायः

मोहक्षयाज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच्च केवलम् ॥१॥
 बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्नकर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः ॥२॥
 औपशमिकादि-भव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवल-सम्यक्त्व-ज्ञान-
 दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनन्तरमूर्धं गच्छत्यालोकान्तात् ॥५॥
 पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्व्यवहेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥६॥ आविद्ध-
 कुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥७॥
 धर्मास्तिकायाभावात् ॥८॥ क्षेत्र-काल-गति-लिङ्ग-तीर्थ-चारित्र-
 प्रत्येकबुद्ध-बोधित-ज्ञानावगाहनान्तर-संख्याल्प-बहुत्वतः साध्याः ॥९॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

श्री भक्तामरस्तोत्र पूजा

अनुष्टुप्

चतुर्ज्ञानावरणादि - धातिकर्मप्रधातिनम् ।
महाधर्मप्रकर्तारं, वन्देऽहमादिनायकम् ॥१॥

भक्तामरमहास्तोत्रं, मन्त्रपूजां करोम्यहम् ।
सर्वजीवहितागारं, आदिदेवं नमाम्यहम् ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिदेव ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिदेव ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिदेव ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सुरसुरीनदसंभूत-जीवनैः, सकलतापहरैः सुखकारणैः ।
वृषभनाथ-वृषाङ्क-समन्वितं, शिवकरं प्रयजे हतकिल्विषम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
मलय-चन्दन-मिश्रित-कुंकुमैः सुरभितागत-षट्पदनन्दनैः ।
वृषभनाथ-वृषाङ्क-समन्वितं, शिवकरं प्रयजे हतकिल्विषम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
विमल-जातिसमुद्रभवतण्डुलैः, परमपावनसौख्यदपुञ्जकैः ।
वृषभनाथ-वृषाङ्क-समन्वितं, शिवकरं प्रयजे हतकिल्विषम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
जलज-चंपक-जाति-सुमालती-वकुलपाटलकुन्दसुपुष्पकैः ।
वृषभनाथ-वृषाङ्क-समन्वितं, शिवकरं प्रयजे हतकिल्विषम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय कामबाणविधंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
वटकखज्जक - मण्डुकपायसैर्विविधमोदक - व्यञ्जनसद्रसैः ।
वृषभनाथ-वृषाङ्क-समन्वितं, शिवकरं प्रयजे हतकिल्विषम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
रविकर-द्युति-सन्निभ-दीपकैः प्रबल-मोह-घनान्धनिवारकैः ।
वृषभनाथ-वृषाङ्क-समन्वितं, शिवकरं प्रयजे हतकिल्विषम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
स्वगुरुधूपभरैर्घटनिष्ठितैः, प्रतिदिशं मिलितालि-समूहकैः ।
वृषभनाथ-वृषाङ्क-समन्वितं, शिवकरं प्रयजे हतकिल्विषम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
सरसनिम्बुकलाङ्गलि-दाढिमैः, कदलिपूगकपित्थशुभैः फलैः ।
वृषभनाथ-वृषाङ्क-समन्वितं, शिवकरं प्रयजे हतकिल्विषम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
सलिल-गन्ध-शुभाक्षतपुष्पकैश्चरुसुदीप-सुधूप-फलार्घकैः ।
वृषभनाथ-वृषाङ्क-समन्वितं, शिवकरं प्रयजे हतकिल्विषम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
वरसुगन्धसुतण्डुलपुष्पकैः प्रवर-मोदक-दीपक-धूपकैः ।
फलभरैः परमात्मप्रदत्तकं प्रवियजे जयदं धनदं जिनम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनाष्टचत्वारिंशन्मन्त्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक अर्ध

भक्तामर - प्रणतमौलि - मणिप्रभाणा- ,

मुद्द्योतकं दलित-पापतमो-वितानम् ।

सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा- ,

वालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥१॥

ॐ ह्रीं प्रणतदेव-समूह-मुकुटाग्रमणिप्रभोद्योतकाय महापापान्धकार-
विनाशकाय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

यः संस्तुतः सकलवूयतत्त्वबोधा- ,

दुद्धूत-बुद्धि-पटुभिः सुरलोकनाथैः ।

स्तोत्रैर्जगत्तितयचित्त - हरैरुदारैः ,

स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥

ॐ ह्रीं गणधरचारणसमस्त-ऋषीन्द्रचन्द्रादित्यसुरेन्द्रव्यन्तरेन्द्र-नागेन्द्र-
चतुर्विधमुनीन्द्रस्तवितचरणारविन्दाय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घ० ।

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठ ! ,

स्तोतुं समुद्यतमतिर्विंगत - त्रपोऽहम् ।

बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिष्ट- ,

मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥३॥

ॐ ह्रीं विगतबुद्धिगर्वापहार-सहित-श्रीमानतुङ्गचार्यभक्तिसहिताय
श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र ! शशाङ्ककान्तान् ,

कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।

कल्पान्त - कालपवनोद्धत - नक्र - चक्रं ,

को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥४॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवनगुणसमुद्र-चन्द्रकान्तमणितेजःशरीर-समस्त-सुरनाथस्तुत-
श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश ! ,

कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः ।

प्रीत्याऽत्मवीर्यमविचार्य मृगी मृगेन्द्रं ,

नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥

ॐ ह्रीं समस्तगणधरादि-मुनिवर-प्रतिपालकाय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घ०।

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहास-धाम ,

त्वद्वक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।

यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,

तच्चाप्रचारुकलिका - निकरैकहेतु ॥६॥

ॐ ह्रीं तुच्छभक्तिकार्यबहुसुखदायकाय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घ० ।

त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं ,

पापं क्षणात् क्षय-मुपैति शरीरभाजाम् ।

आक्रान्त - लोक - मलिनीलमशेषमाशु ,

सूर्याशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥७॥

ॐ ह्रीं अनन्तभव-पातक-सर्वविघ्नविनाशकाय स्तुति-सौख्यदायकाय

श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।
मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद- ,
मारभ्यते तनुधियाऽपि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु ,
मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूद-बिन्दुः ॥८॥

ॐ ह्रीं सत्पुरुषचेतोहराय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति० ।
आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्त-दोषं ,
त्वत्सङ्कथाऽपि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥९॥

ॐ ह्रीं जिनपूजनस्तवन-कथाश्रवणेन समस्त-पाप-विनाशकाय जगत्रय-भव्यजीव-
भवविघ्नाशन-समर्थय च श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नात्यद्वृतं भुवन-भूषण ! भूतनाथ ! ,
भूतैर्गुणैर्भूवि भवन्त्तमभिष्टुवन्तः ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा ,
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ? ॥१०॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यगुणमण्डित-समस्तोपमासहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्ध०
दृष्ट्वा भवन्त्तमनिमेषविलोकनीयं ,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पयः शशिकरद्युति दुर्घसिन्धोः ,
क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क इच्छेत् ? ॥११॥

ॐ ह्रीं अनन्तभवसञ्चिताघसमूहविनाशकाय श्रीप्रथमजिनेन्द्राय अर्ध०
यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं ,
निर्मापितस्त्रिभुवनैक - ललामभूत !
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां ,
यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशान्तस्वरूपाय त्रिभुवनतिलकमानाय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्ध०
वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्रहारि ,
निःशेष - निर्जित - जगत्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलङ्क-मलिनं क्व निशाकरस्य ,
यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम् ॥१३॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यविजयरूपातिशयानन्तचन्द्रतेजोजितपुर्जेमानाय
श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।
सम्पूर्ण - मण्डल - शशाङ्क - कलाकलाप- ,
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर ! नाथमेकं ,
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥१४॥

ॐ ह्रीं शुभ्रगुणातिशयरूप-त्रिभुवनजित-जिनेन्द्र-गुणविराजमानाय
श्रीप्रथमजिनेन्द्राय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि- ,
र्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् ।

कल्पान्त - काल - मरुता चलिताचलेन ,
किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ? ॥१५॥

ॐ ह्रीं मेरुवदचलशीलशिरोमणिव्रतोद्यराजमणिडतचतुर्विधवनिता-
विरहितशीलसमुद्राय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

निर्धूम - वर्ति - रपवर्जित - तैलपूरः ,
कृत्स्नं जगत्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां ,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ॥१६॥

ॐ ह्रीं धूम्रस्नेह-वातादि-विघ्नरहिताय त्रैलोक्य-परम-केवल-दीपकाय श्री
प्रथमजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः ,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपञ्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदर - निरुद्ध - महाप्रभावः ,
सूर्यातिशायि-महिमाऽसि मुनीन्द्र ! लोके ॥१७॥

ॐ ह्रीं राहुचन्द्र-पूजित-कर्म-प्रकृति-क्षय-तिमिरावरणज्योतिः-
सूरलोकद्यावलोकितसदोदयादिपरमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नित्योदयं दलित - मोह - महान्धकारं ,
गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्प-कान्ति ,
विद्योतयज्जगदपूर्व - शशाङ्क - बिष्वम् ॥१८॥

ॐ ह्रीं नित्योदयादिरूपराहुना अग्रसिताय त्रिभुवन-सर्वकलासहित-
विराजमानाय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

किं शर्वरीषु शशिनाहि विवस्वता वा ?
युष्मन्मुखेन्दु-दलितेषु तमःसु नाथ ! ।
निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके ,
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभार-नम्रैः ॥१९॥

ॐ ह्रीं चन्द्र-सूर्योदयास्त-रजनी-दिवस-रहित-परम-केवलोदय-सदादीप्ति-
विराजमानाय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं ,
नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं ,
नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥

ॐ ह्रीं हरि-हरादि-ज्ञानरहिताय सर्वज्ञ-परम-ज्योतिर्केवलज्ञान-सहिताय
श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा ,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः ,
कश्चिन्मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि ॥२१॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवन-मनमोहन-जिनेन्द्रसूपान्यदृष्टान्त-रहित-परम-बोधमणिडताय
श्रीआदिपरमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान् ,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं ,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवन-वनितोपमारहित-श्रीजिनवर-मातृजनितजिनेन्द्र-पूर्व-
दिग्भास्करकेवलज्ञानभास्कराय श्रीआदिब्रह्मजिनाय अर्धं निर्वपामीति०

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस- ,
मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं ,
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ॥२३॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्य-पावनादित्यवर्ण-परमाष्टोत्तर-शत-लक्षण-नवशत-व्यञ्जेन-
समुदायैकसहस्राष्टलक्षण-मणिडताय श्रीआदिजिनेन्द्राय अर्ध०

त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं ,
ब्रह्माण - मीश्वर - मनन्त - मनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदित - योगमनेकमेकं ,
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥२४॥
ॐ ह्रीं ब्रह्माविष्णुश्रीकण्ठ-गणपति-त्रिभुवन-
देवसेविताय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति
स्वाहा ।

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात् ,
त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्रय-शङ्करत्वात् ।
धातासि धीर ! शिवमार्गविधेविधानाद् ,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥

ॐ ह्रीं बुद्धिदर्शक-शेषधर-ब्रह्मादिसमस्तानन्त-नामसहिताय
श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति - हराय नाथ ! ,
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय ,
तुभ्यं नमो जिन ! भवोदधि-शोषणाय ॥२६॥

ॐ ह्रीं अधो-मध्योर्ध्व-लोकत्रय-कृताहोरात्रि-नमस्कार-समस्तार्त-
रौद्रविनाशकत्रिभुवनेश्वर-भवोदधि-तरणतारणसमर्थाय श्रीआदिपरमेश्वराय
अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

को विस्मयोऽत्र यदि नामगुणौरशेषै- ,
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश ! ।
दोषैरुपात्त - विविधाश्रय - जात - गर्वैः ,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥

ॐ ह्रीं परमगुणाश्रितैकादि-अवगुणरहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्ध०

उच्चैरशोकतरुसंश्रित - मुन्मयूख- ,
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त - तमोवितानं ,
बिम्बं रवेरिव पयोधर - पार्श्ववर्ति ॥२८॥

ॐ ह्रीं अशोकवृक्षप्रातिहार्यसहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्ध०

सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे ,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं ,
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः ॥२९॥

ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यसहिताय श्रीप्रथमजिनेन्द्राय अर्धं निर्वपामीति०

कुन्दावदात - चलचामर - चारु - शोभं ,
विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम् ।
उद्यच्छशाङ्क - शुचिनिर्झर - वारिधार- ,
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥

ॐ ह्रीं चतुषष्टिचामर-प्रातिहार्यसहिताय श्रीप्रथमजिनेन्द्राय अर्ध०

छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकरप्रतापम् ।
मुक्ताफल - प्रकर - जाल - विवृद्ध-शोभं ,
प्रख्यापयत् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥३१॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रय-प्रातिहार्यसहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति०

गम्भीरतार - रव - पूरित - दिग्विभाग- ,
ख्लैलोक्यलोक - शुभसङ्गम - भूतिदक्षः ।
सद्बर्मराजजय - घोषण- घोषकः सन् ,
खे दुन्दुभिर्धर्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥

ॐ ह्रीं सार्वद्वादश-कोटिवादित्र-प्रातिहार्यसहिताय श्रीपरमादिजिनाय अर्ध०

मन्दार - सुन्दर - नमेरु - सुपारिजात- ,
सन्तानकादि - कुसुमोत्कर-वृष्टिरुदघा ।
गन्धोदबिन्दुशुभ - मन्दमरुतप्रपाता ,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥३३॥

ॐ ह्रीं समस्तपुष्पजातिवृष्टिप्रातिहार्यसहिताय श्रीआदिजिनेन्द्राय अर्ध०

शुम्भत्प्रभा- वलय - भूरि-विभा विभोस्ते ,
लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्विवाकर - निरन्तर - भूरि - संख्या ,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्या ॥३४॥

ॐ ह्रीं कोटि-भास्कर-प्रभामण्डित-भामण्डलप्रातिहार्यसहिताय श्री
परमादिजिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वर्गापवर्ग - गममार्ग - विमार्गणेष्टः ,
सद्बर्म-तत्त्व-कथनैक - पटुख्लिलोक्याः ।
दिव्यधनि-र्भवति ते विशदार्थसर्व- ,
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः ॥३५॥

ॐ ह्रीं सलिलजलधर-पटलगर्जित-ध्वनि-योजनप्रमाण-प्रातिहार्य-सहिताय
श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ॥३५॥

उन्निद्रहेमनवपङ्कज - पुञ्जकान्ति ,
पर्युल्लसन्नखमयूख - शिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्रधत्तः ,
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥

ॐ ह्रीं हेमकमलोपरि-गमन-देवकृतातिशय-सहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय
अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र ! ,

धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य ।

यादृक् प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा ,

तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि ॥३७॥

ॐ ह्रीं धर्मोपदेशसमये समवशरणविभूतिमण्डताय श्रीआदिपरमेश्वराय
अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्च्योतन्मदाविल- विलोल - कपोलमूल- ,

मत्तभ्रमद्भ्रमर - नाद - विवृद्ध - कोपम् ।

ऐरावताभ - मिभ - मुद्धत - मापतन्तं ,

दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३८॥

ॐ ह्रीं मस्तकगलित-रण-सुर-गजेन्द्र-महादुर्घर-भय-विनाशकाय
श्रीजिनादिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

भिन्नेभकुम्भ-गलदुज्ज्वल - शोणिताक्त- ,

मुक्ताफल - प्रकर - भूषित - भूमिभागः ।

बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि ,

नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥३९॥

ॐ ह्रीं महासिंहभयविनाशकाय श्रीयुगादिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति०

कल्पान्तकाल - पवनोद्धत - वह्निकल्पं ,

दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्सुकुलिङ्गम् ।

विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं ,

त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥४०॥

ॐ ह्रीं महाग्नि-विश्वभक्षण-समर्थ-जिन-नाम-जल-विनाशकाय
श्रीआदिब्रह्मणे अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कण्ठ-नीलं ,

क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम् ।

आक्रामति क्रमयुगेण निरस्तशङ्क- ,

स्त्वन्नाम - नागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥४१॥

ॐ ह्रीं रक्तनयन-सर्प-जिन-नागदमन्योषधि-समस्त-भयविनाशनाय
श्रीजिनादिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

वल्लन्तुरङ्ग - गजगर्जित - भीमनाद- ,

माजौ बलं बलवतामरि-भूपतीनाम् ।

उद्यद्विवाकर - मयूख - शिखा - पविद्धं ,

त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥४२॥

ॐ ह्रीं महासंग्रामभयविनाशकाय सर्वाङ्गरक्षणकराय श्रीप्रथमजिनेन्द्राय अर्ध०

कुन्त्ताग्रभिन्न - गजशोणित - वारिवाह- ,

वेगावतार - तरणातुर - योधभीमे ।

युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षा- ,

स्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥

ॐ ह्रीं महारिपुयुद्धे जयदायकाय श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति०

अम्भोनिधौ क्षुभितभीषण - नक्र-चक्र- ,

पाठीनपीठ-भयदोल्पण- वाडवाग्नौ ।

रङ्गतरङ्ग - शिखरस्थित - यानपात्रा- ,
 ऋसं विहाय भवतः स्मरणाद् ब्रजन्ति ॥४४॥
 ॐ ह्रीं महासमुद्रचलित-वात-महादुर्जय-भय-विनाशकाय जिनादिपरमेश्वराय
 अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

उद्धूतभीषण - जलोदर - भारभुग्नाः ,
 शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः ।
 त्वत्पादपङ्कजरजोऽमृत - दिग्धदेहा ,
 मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥४५॥

ॐ ह्रीं दश-प्रकार-ताप-जलधराष्ट्रादश-कृष्ण-सन्निपात-महद्रोग-विनाशकाय
 परमकामदेवरूप-प्रकटाय श्रीजिनेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

आपादकण्ठमुरुशृङ्खल - वेष्टिताङ्गा ,
 गाढं बृहन्निङ्गडकोटिनिघृष्टजङ्घाः ।
 त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः ,
 सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥४६॥

ॐ ह्रीं महाबन्धन-आपाद-कण्ठ-पर्यन्त-वैरिकृतोपद्रव-भय-विनाशकाय
 श्रीआदिजिनेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

मत्तद्विपेन्द्र - मृगराज - दवानलाहि- ,
 संग्राम-वारिधि - महोदर - बन्धनोत्थम् ।
 तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव ,
 यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥

ॐ ह्रीं गजेन्द्र-राक्षस-भूत-पिशाच-शाकिनी-रिपु-परमोपद्रव-भय-विनाशकाय
 श्रीजिनादिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्तोत्रस्तजं तव जिनेन्द्र ! गुणैर्निबद्धां ,
 भक्त्या मया विविधवर्ण-विचित्रपुष्पाम् ।
 धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्तं ,
 तं मानतुङ्गमवशा समपैति लक्ष्मीः ॥४८॥

ॐ ह्रीं पठक-पाठक-श्रोतुश्रद्धावन्मानतुङ्गाचार्यादिसमस्त-जीव-कल्याणकराय
 श्रीआदिपरमेश्वराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।
 वनसुगन्धसुतण्डुलपुष्पकैः प्रवरमोदकदीपकधूपकैः ।
 वरफलैः परमात्मपदं प्रवियजे श्रीआदिपरमेश्वरम् ॥

ॐ ह्रीं अष्टचत्वारिंशत्कमलोपरिस्थितश्रीआदिपरमेश्वराय पूर्णार्घ्यं निर्व० स्वाहा ।

जयमाला

अनुष्टुप्छन्दः

प्रमाणद्वयकर्त्तरं, स्यादस्तिवादवेदकं ।
 द्रव्यतत्त्वनयागारमादिदेवं नमाम्यहं ॥१॥
 त्रोटकछन्दः:

शुभदेश-शुभङ्गर-कौशलकं, पुरुपहृन-मध्य-सरोज-समं ।
 नृप-नाभि-नरेन्द्रसुतं सुधियं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥२॥
 कृत-कारित-मोदन-मोदधरं, मनसा वचसा शुभकार्यपरं ।
 दुरितापहरं चामोद-करं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥३॥
 तव देव सुजन्मदिनं परमं, वरनिर्मित-मङ्गलकाम-करं ।
 कनकग्रिषु पाण्डुकशुद्धवनं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥४॥

व्रतभूषण-भूरिविशेषतनुं, करकङ्कण-कज्जलनेत्रधरं ।
 मुकुटाब्जविराजितशैलघनं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥४॥
 ललितास्यसुराजितचारुमुखं, मरुदेव्युदरोदभवजातसुखं ।
 सुरनाथसुताण्डवनृत्यधनं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥५॥
 वरवस्त्रसुराज्यगजाश्वपदं, रथभृत्यदलं चतुरङ्गदलं ।
 शुभकामिनिभोगसुयोगधनं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥६॥
 गतरागसुरोषविरागकृतिं, सुतपो-बलसाधितमुक्तिसुखं ।
 सुखसागरमध्यसदानिलयं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥७॥
 सुसमोसरणे गतरोगगणं, प्रभुवार-सभामृतवारगणं ।
 कृतकेवलज्ञानविकाशकरं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥८॥
 उपदेश-सुतत्त्वविकाश-करं, कमलाकरलक्षणपूर्णभरं ।
 भवित्रासितकर्मकलङ्कहरं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥९॥
 जिन ! देहि सुमोक्षपदं सुखदं, घनघातिघनाघनवायुपदं ।
 परमोत्सवकारित-जन्मवनं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥१०॥
 जनजाङ्गयहरं परमार्थबलं, परिपूर्णभवोदधिपारगतं ।
 तव रूपस्वरूपसुमूर्तिधरं, प्रणमामि सदा प्रथमादिजिनं ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथपरमतीर्थङ्कराय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

शर्दूलविक्रीडितं छन्दः

देवोऽनेकभवार्जितो गतमहापापप्रदीपानलः,
 देवः सिद्धवधूविशाल-हृदयालङ्कारहारोपमः ।
 देवोऽष्टादशदोषसिन्धुरघटादुर्भेदपश्चाननो,
 भव्यानां विदधातु वाञ्छितफलं श्रीआदिनाथो जिनः॥

इत्याशीर्वादः पुष्टाञ्जलिं क्षिपेत्

भक्तामर माहात्म्य

श्री भक्तामर का पाठ, करो नित प्रात, भक्ति मन लाई,
 सब संकट जायें नशाई ।
 जो ज्ञानमान मतवारे थे, मुनि मानतुंग से हारे थे ।
 उन चतुराई से नृपति लिया बहकाई ॥ सब० १
 मुनि श्री को नृपति बुलाया था, सैनिक जा हुकम सुनाया था ।
 मुनि वीतराग को आज्ञा नहीं सुहाई ॥ सब० २
 उपसर्ग घोर तब आया था, बल पूर्वक पकड़ मंगाया था ।
 हथकड़ी बेड़ियों से तन दिया बंधाई ॥ सब० ३
 मुनि कारागृह भिजवाये थे, अङ्गालिस ताले लगवाये थे ।
 क्रोधित नृप बाहर पहरा दिया बिठाई ॥ सब० ४
 मुनि शान्त भाव अपनाया था, श्री आदिनाथ को ध्याता था ।
 हो ध्यान मग्न भक्तामर दिया बनाई ॥ सब० ५
 सब बन्धन ढूट गए मुनि के, ताले सब स्वयं खुले उनके ।
 कारागृह से आ बाहर दिये दिखाई ॥ सब० ६

राजा नत होकर आया था, अपराध क्षमा करवाया था ।

मुनि के चरणों में अनुपम भक्ति दिखाई ॥ सब०७

जो पाठ भक्ति से करता है, नित ऋषभ-चरण चित धरता है ।

जो ऋद्धि-मंत्र का विधिवत् जाप कराई ॥ सब०८

भय-विघ्न उपद्रव टलते हैं, विपदा के दिवस बदलते हैं ।

सब मन-वांछित हों पूर्ण शान्ति छा जाई ॥ सब०९

जो वीतराग आराधन है, आत्म-उन्नति का साधन है ।

उससे प्राणी का भव-बन्धन कट जाई ॥ सब०१०

‘कौशल’ सु-भक्ति को पहिचानो, संसार-दृष्टि बन्धन जानो ।

लो भक्तामर से आत्म ज्योति प्रकटाई ॥ सब०११

पञ्च बालयति तीर्थकर पूजा

(दोहा)

श्रीजिन पंच अनंग-जित, वासुपूज्य मलि नेमि ।

पारसनाथ सुवीर अति, पूजूं चित धर प्रेम ॥१॥

ॐ ह्रीं पञ्चबालयतितीर्थङ्करसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । ॐ ह्रीं पञ्चबालयतितीर्थङ्करसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । ॐ ह्रीं पञ्चबालयतितीर्थङ्करसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

अष्टक

शुचि शीतल सुरभि सुनीर, लायो भर झारी,

दुख जामन मरन गहीर, याकों परिहारी ।

श्री वासुपूज्य मलि नेमि, पारस वीर अति,

नमुं मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनाथनेमिनाथपार्थनाथमहावीरस्वामिभ्यः पञ्चबालयति-

तीर्थङ्करेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदन केसर कर्पूर, जल में घसि आनौ,

भव तप भंजन सुखपूर, तुमको मैं जानौ ॥ श्री वासु०

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनाथनेमिनाथपार्थनाथमहावीरस्वामिभ्यः पञ्चबालयति-

तीर्थङ्करेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर अक्षत विमल बनाय, सुवरण थाल भरे,

बहु देश देशके लाय, तुमरी भेंट धरे ॥ श्री वासु०

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनाथनेमिनाथपार्थनाथमहावीरस्वामिभ्यः पञ्चबालयति-

तीर्थङ्करेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

यह काम सुभट अति सूर, मन में क्षोभ करौ,

मैं लायौ सुमन हजूर, याकौ वेग हरौ ॥ श्री वासु०

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनाथनेमिनाथपार्थनाथमहावीरस्वामिभ्यः पञ्चबालयति-

तीर्थङ्करेभ्यः कामबाणविनाशनाय पुष्णं निर्वपामीति स्वाहा ।

षट् रस पूरित नैवेद्य, रसना सुखकारी,

द्वय कर्म वेदनी छेद, आनन्द है भारी ॥ श्री वासु०

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनाथनेमिनाथपार्थनाथमहावीरस्वामिभ्यः पञ्चबालयति तीर्थङ्करेभ्यः

क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

धरि दीपक जगमग ज्योति, तुम चरणन आगे,
मम मोहतिमिर क्षय होत, आतम गुण जागे ॥ श्री वासु०
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनाथनेमिनाथपार्थनाथमहावीरस्वामिभ्यः पञ्चबालयति तीर्थङ्करेभ्यो
मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ले दशविधि धूप अनूप, खेऊं गंधमयी,

दशबंध दहन जिन भूप, तुम हो कर्मजयी ॥ श्री वासु०

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनाथनेमिनाथपार्थनाथमहावीरस्वामिभ्यः पञ्चबालयति
तीर्थङ्करेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पिस्ता अरु दाख बदाम, श्रीफल लेय घने,

तुम चरण जजूं गुणधाम, द्यौ सुख मोक्ष तने ॥

श्री वासुपूज्य मलि नेमि, पारस वीर अति,

नमुँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनाथनेमिनाथपार्थनाथमहावीरस्वामिभ्यः पञ्चबालयति-तीर्थङ्करेभ्यो
मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सजि वसुविधि दरब मनोज्ञ, अरघ बनावत हैं,

वसुकर्म अनादि संयोग, ताहि नशावत हैं ।

श्री वासुपूज्य मलि नेमि, पारस वीर अति

नमुँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनाथनेमिनाथपार्थनाथमहावीरस्वामिभ्यः
पञ्चबालयतितीर्थङ्करेभ्योऽनर्धपदप्राप्तयेऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

बालब्रह्मचारी भये, पाँचों श्री जिनराज ।

तिनकी अब जयमालिका, कहूं स्वपर हितकाज ॥

पञ्चरि छन्द

जय जय जय श्री वासुपूज्य, तुम सम जग में नहि और दूज ।
तुम महाशुक्र सुरलोक छार, जब गर्भ मात माहीं पधार ॥
षोडश सपने देखे सुमात, बल अवधि जान तुम जन्म तात ।
अति हर्ष धार दंपति सुजान, बहु दान दियो जाचक जनान ॥
छप्पन कुमारिका कियो आन, तुम मात सेव बहु भक्ति ठान ।
छः मास अगाऊ गर्भ आय, धनपति सुवरन नगरी रचाय ॥
तुम तात महल आँगन मँझार, तिहुँ काल रतन धारा अपार ।
वरषाए षट् नव मास सार, धनि जिन पुरुषन नयनन निहार ॥
जय मल्लिनाथ देवन सुदेव, शत इन्द्र करत तुम चरण सेव ।
तुम जन्मत ही त्रय ज्ञान धार, आनन्द भयो तिहुँ जग अपार ॥
तब ही ले चहुंविधि देव संग, सौर्धर्म इन्द्र आयो उमंग ।
सजि गज ले तुम हरि गोद आप, वन पाँडुक शिल ऊपर सुथाप ॥
क्षीरोदधि तै बहु देव जाय, भरि जलघट हाथों-हाथ लाय ।
करि न्हवन वस्त्र भूषण सजाय, दे मात नृत्य ताँडव कराय ॥
पुनि हर्ष धार हृदय अपार, सब निर्जर रव जय जय उचार ।
तिस अवसर आनन्द हे जिनेश, हम कहिवे समरथ नाहि लेश ॥

जय जादोपति श्री नेमिनाथ, हम नमत सदा जुग जोरि हाथ ।
 तुम ब्याह समय पशुअन पुकार, सुनि तुरत छुड़ाये दया धार ॥
 कर कंकण अरु सिरमौर-बन्द, सो तोड भये छिनमें स्वछन्द ।
 तब ही लौकान्तिक देव आय, वैराग्य-वर्द्धनी थुति कराय ॥
 तत्क्षण शिविका लायो सुरेन्द्र, आरूढ भये ता पर जिनेन्द्र ।
 सो शिविका निजकंधन उठाय, सुर-नर-खग मिल तपवन ठराय ॥
 कचलौंच वस्त्र भूषण उतार, भये जती नगन मुद्रा सुधार ।
 हरि केश लेय रतनन पिटार, सो क्षीर उदधि मार्हीं पधार ॥
 जय पारसनाथ अनाथ नाथ, सुर असुर नमत तुम चरण माथ ।
 जुग नाग जरत कीनो सुरक्षा, यह बात सकल जग में प्रत्यक्ष ॥
 तुम सुरधनु सम लखि जग असार, तप तपत भये तन ममत छार ।
 शठ कमठ कियो उपसर्ग आय, तुम मन सुमेर नहिं डगमगाय ॥
 तुम शुक्लध्यान गहि खड़ग हाथ, अरि च्यारि धातिया कर सुधात ।
 उपजायो केवलज्ञान-भानु, आयो कुबेर हरि वच प्रमाण ॥
 की समवसरण रचना विचित्र, तहाँ खिरत भई वाणी पवित्र ।
 मुनि-सुर-नर-खग-तिर्यंच आय, सुनि निज-निज भाषा बोध पाय ॥
 जय वर्द्धमान अन्तिम जिनेश, पायो न अंत तुम गुण गणेश ।
 तुम च्यारि अघाती करम हान, लियो मोक्ष स्वयं सुख अचलथान ॥
 तब ही सुरपति बल अवधि जान, सब देवन युत बहु हर्ष ठान ।
 सजि निज वाहन आयो सुतीर, जहाँ परमौदारिक तुम शरीर ॥
 निर्वाण महोत्सव कियो भूर, ले मलयागिर चंदन कपूर ।
 बहु द्रव्य सुर्गंधित सरस सार, तामें श्री जिनवर-विपु पधार ॥
 निज अगनिकुमारिन मुकुट नाय, तिहाँ रतनन शुचि ज्वाला उठाय ।
 तस सर माहीं दीनी लगाय, सो भस्म सबन मस्तक चढाय ॥
 अति हर्ष थकी रचि दीप माल, शुभ रतनमयी दश-दिश उजाल ।
 पुनि गीत-नृत्य बाजे बजाय, गुण गाय ध्याय सुरपति सिधाय ॥
 सो थान अबै जग में प्रत्यक्ष, नित होत दीपमाला सुलक्ष ।
 हे जिन तुम गुण महिमा अपार, वसु सम्यक् ज्ञानादिक सु सार ॥
 तुम ज्ञान माहिं तिहुँ लोक दर्व, प्रतिबिम्बित हैं चर-अचर सर्व ।
 लहि आतम अनुभव परम ऋद्धि, भये वीतराग जगमें प्रसिद्ध ॥
 हे बालयती तुम सबन एम, अचरज शिवकान्ता वरी केम ।
 तुम परम शान्ति मुद्रा सुधार, किय अष्ट कर्म रिपु को प्रहार ॥
 हम करत वीनती बार-बार, कर जोर स्व मस्तक धार-धार ।
 तुम भये भवोदधि पार-पार, मोकों सुवेग ही तार-तार ॥
 ‘अरदास’ दास ये पूर-पूर, वसु कर्म-शैल चकचूर-चूर ।
 दुख सहन दास अब शक्ति नाहिं, गहि चरण शरण कीजे निवाह ॥

चौपाई

पाँचों बालयती तीर्थेश, तिनकी यह जयमाल विशेष ।

मन वच काय त्रियोग सम्हार, जे गावत पावत भव पार ॥

ॐ ह्रीं श्रीपञ्चबालयतीर्थकरजिनेन्द्रेभ्यः पूर्णर्घम् ॥

(दोहा)

ब्रह्मचर्य सों नेह धरि, रचियो पूजन ठाठ ।
पाँचों बालयतीन का, कीजे नितप्रति पाठ ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्

.....

गुरु पूजाएँ

सप्तर्षि-पूजा

कविवर मनरंगलाल

छप्पय छन्द

प्रथम नाम सुरमन्यु दुतिय श्रीमन्यु ऋषीश्वर ।
 तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथो वर ॥
 पंचम श्री जयवान विनयलालस षष्ठम भनि ।
 सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्र-धाम गनि ॥
 ये सातों चारण-ऋद्धिधर, करुँ तास पद थापना ।
 मैं पूजूँ मन वच काय करि, जो सुख चाहूँ आपना ॥

ॐ हूँ चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वराः! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।

ॐ हूँ चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वराः! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।

ॐ हूँ चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वराः! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

हरिगीतिका छन्द

शुभतीर्थ उद्भव-जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायकै ।
 भव-तृष्णाकन्द-निकन्द-कारण, शुद्ध घट भरवायकै ॥
 मन्वादि चारण-ऋद्धिधारक, मुनिन की पूजा करुँ ।
 ता करें पातक हरें सारे, सकल आनन्द विस्तरुँ ॥
 ॐ हूँ श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-
 जयमित्रर्षिभ्यो जन्मजारामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखण्ड कदलीनन्द केसर, मन्द मन्द धिसायकै ।
 तसु गन्ध प्रसरित दिग-दिगन्तर, भर कटोरी लायकै ॥ मन्वादि०
 ॐ हूँ श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-
 जयमित्रर्षिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अतिधिवल अक्षत खण्डवर्जित, मिष्ट राजनभोग के ।
 कलधौत-थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभ उपयोग के ॥ मन्वादि०
 ॐ हूँ श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-
 जयमित्रर्षिभ्योऽक्षयपदप्राप्तयेऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

बहुवर्ण सुवरणसुमन आछे, अमल कमल गुलाब के ।
 केतकी चम्पा चारु मरुआ, चुने निज-कर चाव के ॥ मन्वादि०
 ॐ हूँ श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-
 जयमित्रर्षिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 पकवान नाना भाँति चातुर, रचित शुद्ध नये-नये ।
 सदमिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरट के थारा लये ॥ मन्वादि०
 ॐ हूँ श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-
 जयमित्रर्षिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कलधौत-दीपक जड़ित नाना, भरित गोधृत सार सौं ।

अति ज्यलित जगमग-ज्योति जाकी, तिमिरनाशन हार सौं ॥ मन्वादि०
ॐ हूँ श्रीचारणर्दिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-
जयमित्रिष्ठ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दिक् चक्र गन्धित होत जाकर, धूप दश-अंगी कही ।

सो लाय मन-वच-कायशुद्ध, लगाय कर खेऊँ सही ॥ मन्वादि०
ॐ हूँ श्रीचारणर्दिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-
जयमित्रिष्ठ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायकैं ।

द्रावडी दाड़िम चारु पुंगी, थाल भर-भर लायकैं ॥ मन्वादि०
ॐ हूँ श्रीचारणर्दिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-
जयमित्रिष्ठ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना ।

फल ललित आठों द्रव्य-मिश्रित, अर्ध कीजे पावना ॥ मन्वादि०
ॐ हूँ श्रीचारणर्दिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-
जयमित्रिष्ठ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

त्रिभंगी छन्द

वन्दूँ ऋषिराजा, धर्म-जहाजा, निज-पर काजा, करत भले ।

करुणा के धारी, गगन-विहारी, दुख-अपहारी भरम दले ॥

काटत जम-फन्दा भवि-जन-वृन्दा, करत अनन्दा चरणन में ।

जो पूजैं ध्यावैं, मंगल गावैं, फेर न आवैं भव-वन में ॥

पञ्चरि छन्द

जय सुरमनु मुनिराजा महन्त, त्रस-थावर की रक्षा करन्त ।

जय मिथ्या-तम-नाशक पतंग, करुणा-रस-पूरित अंग-अंग ॥१॥

जय जय श्रीमनु अकलंक रूप, पद-सेव करत नित अमर-भूप ।

जय पंच अक्ष जीते महान, तप तपत देह कंचन-समान ॥२॥

जय निचय सप्त तत्त्वार्थ भास, तप-रमा तनों तन में प्रकाश ।

जय विषय-रोध सम्बोध भान, परणति के नाशन अचल ध्यान ॥३॥

जय जयहि॑ं सर्वसुन्दर दयाल, लखि॑ इन्द्रजालवत जगत-जाल ।

जय तृष्णाहारी रमण राम, निज परणति में पायो विराम ॥४॥

जय आनन्दघन कल्याणरूप, कल्याण करत सबकौ अनूप ।

जय मद-नाशन जयवान देव, निरमद विरचित सब करत सेव ॥५॥

जय जयहि॑ं विनयलालस अमान, सब शत्रु-मित्र जानत समान ।

जय कृशित काय तप के प्रभाव, छवि-छटा उड़ति आनन्द दाय ॥६॥

जय मित्र सकल जग के सुमित्र, अनगिनत अधम कीने पवित्र ।

जय चन्द्रवदन राजीव नैन, कबहूँ विकथा बोलत न बैन ॥७॥

जय सातों मुनिवर एक संग, नित गगन-गमन करते अभंग ।

जय आये मथुरापुर मङ्गार, तहँ मरी रोग को अति प्रचार ॥८॥

जय जय तिन चरणनि के प्रसाद, सब मरी देवकृत भई वाद ।
 जय लोक करे निर्भय समस्त, हम नमत सदा नित जोड़ हस्त ॥१॥
 जय ग्रीषम-ऋतु परवत मङ्गार, नित करत अतापन योगसार ।
 जय तृष्णा-परीषह करत जेर, कहुँ रंच चलत नहिं मन-सुमेर ॥१०॥
 जय मूल अठाइस गुणन धार, तप उग्र तपत आनन्दकार ।
 जय वर्षा-ऋतु में वृक्ष-तीर, तहुँ अति शीतल झेलत समीर ॥११॥
 जय शीत-काल चौपट मङ्गार, कै नदी-सरोवर-तट-विचार ।
 जय निवसत ध्यानारुढ़ होय, रंचक नहिं मटकत रोम कोय ॥१२॥
 जय मृतकासन वज्रासनीय, गोदूहन इत्यादिक गनीय ।
 जय आसन नाना भाँति धार, उपसर्ग सहत ममता निवार ॥१३॥
 जय जपत तिहारो नाम कोय, लख पुत्र-पौत्र कुल-वृद्धि होय ।
 जय भरे लक्ष अतिशय भँडार, दारिद्रतनो दुख होय छार ॥१४॥
 जय चोर अग्नि डाकिन पिशाच, अरु ईति-भीति सब नसत साँच ।
 जय तुम सुमरत सुख लहत लोक, सुर असुर नवत पद देत धोक ॥१५॥

रोल छन्द (मात्रा २४)

ये सातों मुनिराज, महातप लछमी धारी ।
 परम पूज्य पद धरैं, सकल जग के हितकारी ॥
 जो मन वच तन शुद्ध, होय सेवै औ ध्यावै ।
 सो जन 'मनरंगलाल', अष्ट ऋद्धिन को पावै ॥
 ॐ हूँ सुरमन्वादिसप्तर्षिभ्यः पूर्णार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।
दोहा

नमन करत चरनन परत, अहो गरीब-निवाज ।
 पंच परावर्तननि तैं, निरवारो ऋषिराज ॥

इत्याशीर्वादः

आचार्य श्री विद्यासागर पूजा

रमेशचन्द्र 'अरुण'

श्री विद्यासागर के चरणों में झुका रहा अपना माथा ।
 जिनके जीवन की हर चर्या बन पड़ी स्वयं ही नवगाथा ॥
 जैनागम का वह सुधा कलश जो बिखराते हैं गली-गली ।
 जिनके दर्शन को पाकर के खिलती मुरझाई हृदय कली ॥
 ॐ हूँ श्रीआचार्यविद्यासागरमुनीन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौष्ठ ।
 ॐ हूँ श्रीआचार्यविद्यासागरमुनीन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ हूँ श्रीआचार्यविद्यासागरमुनीन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।
 सांसारिक विषयों में पड़कर, मैंने अपने को भरमाया ।
 इस रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार नहीं पाया ॥
 तब विद्यासिन्धु के जल कण से, भवकालुष धोने आया हूँ ।
 आना जाना मिट जाय मेरा, यह बन्ध काटने आया हूँ ॥
 ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

क्रोध अनल में जल-जल कर, अपना सर्वस्व लुटाया है ।
निजशान्त स्वरूप न जान सका, जीवनभर इसे भुलाया है ॥
चन्दन सम शीतलता पाने अब, शरण तुम्हारी आया हूँ ।
संसार ताप मिट जाय मेरा, चन्दन वन्दन को लाया हूँ ॥

ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा ।

जड़ को न मैंने जड़ समझा, नहिं अक्षय निधि को पहचाना ।
अपने तो केवल सपने थे, भ्रम और जगत का भटकाना ॥
चरणों में अर्पित अक्षत हैं, अक्षय पद मुझको मिल जावे ।
तब ज्ञान-अरुण की किरणों से, यह हृदयकमल भी खिल जावे ॥

ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा ।

इन विषय भोग की मदिरा पी, मैं बना सदा से मतवाला ।
तृष्णा को तृप्त करें जितनी, उतनी बढ़ती इच्छा ज्वाला ॥
मैं काम भाव विध्वंस हेत, मन सुमन चढ़ाने आया हूँ ।
यह मदन विजेता बन न सके, यह भाव हृदय में लाया हूँ ॥

ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि नि० ।

इस क्षुधा रोग की व्यथा कथा, भव-भव में कहता आया हूँ ।
अति भक्ष अभक्ष्य भखे फिर भी, मनतृप्त नहीं कर पाया हूँ ॥
नैवेद्य समर्पित करके मैं, तृष्णा की भूख मिटाऊँगा ।
अब और अधिक न भटक सकूँ, यह अन्तर बोध जगाऊँगा ॥

ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

मोहान्धकार से व्याकुल हो निज को नहीं मैंने पहचाना ।
मैं रागद्वेष में लिप्त रहा, इस हाथ रहा बस पछताना ॥
यह दीप समर्पित है मुनिवर, मेरा तम दूर भगा देना ।
तुम ज्ञान दीप की बाती से, मम अन्तर दीप जला देना ॥

ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा ।

इन अशुभ कर्म ने धेरा है, मैंने अब तक यह माना था ।
बस पाप कर्म तज पुण्य कर्म को, चाह रहा अपनाना था ॥
शुभअशुभ कर्म सब रिपुदल हैं, मैं इन्हें जलाने आया हूँ ।
इसीलिये तब चरणों में अब, धूप चढ़ाने आया हूँ ॥

ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति०

भोगों को इतना भोगा कि, खुद को ही भोग बना डाला ।
साध्य और साधक का अन्तर, मैंने आज मिटा डाला ॥
मैं चिदानन्द में लीन रहूँ, पूजा का यह फल पाना है ।
पाना था जिसके द्वारा वह मिल बैठा मुझे ठिकाना है ॥

ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति०

जग के वैभव को पाकर मैं, निश दिन कैसा अलमस्त रहा ।
चारों गतियों की ठोकर को, खाने में ही अभ्यस्त रहा ॥
मैं हूँ स्वतन्त्र ज्ञाता दृष्टा, मेरा पर से क्या नाता है ।
कैसे अनर्घ पद पा जाऊँ, यह ‘अरुण’ भावना भाता है ॥

ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति०

जयमाला

हे गुरुवर तेरे गुण गाने, अर्पित हैं जीवन के क्षण क्षण ।
अर्चन के सुमन समर्पित हैं, हरषाये जगती के कण कण ॥१॥

कर्नाटक के सदलगा ग्राम में, मुनिवर तुमने जन्म लिया ।
मल्लप्पा पूज्यपिताश्री को, अरु श्रीमति को कृतकृत्य किया ॥२॥

बचपन के इस विद्याधर में, विद्या के सागर उमड़ पड़े ।
मुनिराज देशभूषण से तुम, ब्रत ब्रह्मचर्य ले निकल पड़े ॥३॥

आचार्य ज्ञानसागर ने सन्, अङ्गसठ में मुनि पद दे डाला ।
अजमेर नगर में हुआ उदित, मानों रवि तम हरने वाला ॥४॥

परिवार तुम्हारा सबका सब, जिन पथ पर चलने वाला है ।
वह भेद ज्ञान की छैनी से, गिरि कर्म काटने वाला है ॥५॥

तुम स्वयं तीर्थ से पावन हो, तुम हो अपने में समयसार ।
तुम स्याद्वाद के प्रस्तोता, वाणी-वीणा के मधुर तार ॥६॥

तुम कुन्दकुन्द के कुन्दन से, कुन्दन सा जग को कर देने ।
तुम निकल पड़े बस इसीलिए, भटके अटकों को पथ देने ॥७॥

वह मन्द मधुर मुस्कान सदा, चेहरे पर बिखरी रहती है ।
वाणी कल्याणी है अनुपम, करुणा के झरने झरते हैं ॥८॥

तुममें कैसा सम्मोहन है, या है कोई जादू टोना ।
जो दर्श तुम्हारे कर जाता, नहि चाहे कभी विलग होना ॥९॥

इस अल्प उम्र में भी तुमने, साहित्य सृजन अति कर डाला ।
श्री-जैन-गीत-गागर में तुमने, मानो सागर भर डाला ॥१०॥

है शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अनजाना ।
स्वर ताल छन्द मैं क्या जानूँ, केवल भक्ति में रम जाना ॥११॥

भावों की निर्मल सरिता में, अवगाहन करने आया हूँ ।
मेरा सारा दुख दर्द हरो, यह अर्घ भेंटने लाया हूँ ॥१२॥

हे तपोमूर्ति! हे आराधक! हे योगीश्वर! हे महासन्त! ।
यह ‘अरुण’ कामना देख सके, युग-युग तक आगामी बसन्त ॥१३॥

ॐ हूँ आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्रायानर्धपदप्राप्तये पूर्णार्धं निर्वपार्मीति स्वाहा ।

श्री सुधासागर पूजा

श्री सुधासागर महाराज तुम्हारे चरणों में बलि-बलि जाऊँ ।
शिवपथ पर चलते राही का शत-शत अभिनन्दन मैं गाऊँ ॥
तिष्ठ-तिष्ठ आओ मम मन में मुझको सुखी बना जाओ ।
भव-वन की इन गलियों में तुम दिनकर बन तम हर जाओ ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौष्ठ् ।

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्र! अत्र मम सम्भितो भव भव वष्ट् ।

पाँचों इन्द्रियों के विषयों में मद मस्त रहा खुद को भूला ।
लवणाकर से इस भरे जगत में राग-द्वेष कर मैं फूला ॥
अतएव सुधा रस पीने को हाथों में जल को लाया हूँ ।
इस जन्म-जरा के मेटन को चरणों में अर्पित करता हूँ ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
संसार बढ़ाकर ही मैंने अपने को अग्नि में डाला ।
जिसमें जल-जलकर मैंने ही अपना निज रूप मिटा डाला ॥
अत एव सुधारस वर्षाकर क्रोधानल को अब शान्त करो ।
मेरा भवताप मिटाकर तुम इस चन्दन को स्वीकार करो ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
इस भव समुद्र से तरने को रत्नत्रय ही यह नौका है ।
जो खण्ड-खण्ड हर पहलू को इक रूप बनाने मौका है ॥
उस अक्षय पद को ही पाने मैं अक्षत तुम्हें चढ़ाता हूँ ।
प्रत्याशी उस पद का बनने मैं सुधा माँगने आया हूँ ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
यह मोह वारुणी पी अनादि से मतवाला बन सदा फिरा ।
चारों गतियों में फिर-फिर कर मैं इच्छा ज्वाला में सदा गिरा ॥
अब कामबाण विध्वंस हेतु ये मनसिज चरणों में लाया ।
इस मन का शासक स्वयं बनूँ श्री सुधा-सिन्धु तुम दो छाया ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।
अब तक अगणित व्यंजन खाकर मैं तन की भूख मिटाता हूँ ।
पर शान्त कभी न हुई तनिक मैं देख इसे पछताता हूँ ॥
नैवेद्य समर्पित करके अब इस भव में गोता ना खाऊँ ।
इस क्षुधा रोग से बचने को मैं सुधा वैद्य को ही ध्याऊँ ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
मोहान्धकार से पीड़ित हो भव वन में दुख भरपूर सहा ।
औ राग-द्वेष की धूप छांव से व्याकुल हो चकचूर रहा ॥
अतएव गुरु यह तम नाशक मैं दीप समर्पित करता हूँ ।
इस सुधा दीप की ज्योति से मैं अन्तर दीप जलाता हूँ ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
यह धधक रही दुख की ज्वाला धरती नभ त्रस्त रहा जिससे ।
बेहोश पड़े संसारी जन कर्मों को करते नित जिससे ॥
इस कर्म पुंज के नाश हेतु चरणों में धूप जलाता हूँ ।
जड़कर्म सभी जल जाए मेरे यह भाव हृदय में लाया हूँ ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
जिसको निज कहकर अपनाया वह स्वार्थं पूर्ण कर दूर खड़ा ।
मैं राग-द्वेष कर आत्म को संसार मार्ग पर घुमा रहा ॥
निज रूप न अब तक समझ सका पूजा का जो अन्तिम फल था ।
जिस मोक्ष सुफल को पाने का यह शुभ प्रतीक तरु का फल था ॥
अत एव तुम्हारे चरणों में अर्पित करता हूँ मैं यह फल ।
हे सुधासिन्धु वह शाश्वत फल मिल जावे हो जिससे सब हल ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल चन्दन अक्षत पुष्प मिला, नैवेद्य दीप ले गुण गाऊँ ।
 कर्मों की धूप बनाकर मैं उस सिद्ध महाफल को पाऊँ ॥
 यह अर्द्ध चढ़ाकर हे मुनिवर मैं अर्द्ध रहित सुख पाऊँगा ।
 उस मूल्य रहित अक्षय पद को पाकर निज को ही ध्याऊँगा ॥
 यह अर्द्ध मुनि क्षण शील रहा निज गुण का अर्द्ध बनाऊँगा ।
 तेरे समान ही बनकर के मैं सुधा-सिन्धु बन जाऊँगा ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय अनर्थपदप्राप्तये अर्द्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा—रत्नत्रय के रूप हो, विद्या गुरु के पूत ।

भव-सागर से तार दो, होवें शिव के भूप ॥

पद्मरि

मुनिराज तुम्हारी पूजन से, संकट-दल सब टल जाते हैं ।

इसलिए समर्पित जयमाला, चरणों में तुम्हें चढ़ाते हैं ॥

बनकर के राही शिवपथ के, हमको भी राह दिखाते हो ।

जिनवाणी के प्रस्तोता बन, आगम से सृष्टी बनाते हो ॥

अब तक भटके हैं हे मुनिवर, विषयों में समय गँवाया है ।

नर जन्म महा दुर्लभ मिलना, जिसको क्षण-क्षण ठुकराया है ॥

हे मुनिवर शिवपथ पर चलकर, तुमने जो रूप सँवारा है ।

यह तीन लोक में अनुपम है, और अन्य न सुख का दाता है ॥

इसलिए किरण बनकर मुनिवर, हम सबको सदा जगाया है ।

जिनवाणी के कदमों पर चल, मुक्ति का मार्ग दिखाया है ॥

तुम सचमुच ही अमृत लेकर, विष वमन कराने आये हो ।

है जीर्ण रोग मम अस्थि में, जिसकी औषध तुम लाये हो ॥

पाकर के विद्या गुरुवर को, तुम विद्या भानु कहलाये ।

है भाग्य सभी हम भव्यों का, जो ऐसे मुनिवर हम पाये ॥

इनकी तो महिमा है न्यारी, जीवन पुस्तक जो सदा खुली ।

जब चाहो सभी पीयूष पियो, हर लो तुम दुख जो अतिभारी ॥

यह भाव भक्ति है कीर्तन है, शब्दों को जोड़ बनाया है ।

निज अन्तर तम की वीणा से, बिन छन्दों के ही गाया है ॥

हे सुधा-सिन्धु! हे तपोपूत, चरणों में मेरा हो प्रणाम ।

बस चन्द्र सूर्य की राहों पर, शाश्वत विचरो बनकर महान् ॥

ॐ हः श्रीसुधासागरमुनीन्द्राय अनर्थपदप्राप्तये जयमालापूर्णर्थं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—गुण गाऊँ उस ज्ञान के, सागर जिनके पास ।

भव-सागर को तैर के, पाऊँ पूर्ण प्रकाश ॥

पुष्पाङ्गलिं क्षिपेत्

श्री जिननामसहस्र-स्तोत्रम्

भगवज्जिनसेनाचार्यविरचितम्

जिनस्तोत्रम् (प्रस्तावना)

स्वयंभुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मनैव तथोद्भूत-वृत्तयेऽचिन्त्य-वृत्तये ॥१॥
नमस्ते जगतांपत्ये लक्ष्मी-भर्ते नमो नमः ।
विदांवर ! नमस्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर ! ॥२॥
काम-शत्रुहणं देवमामनन्ति मनीषिणः ।
त्वामानमत्सुरेण्मौलि-भा-मालाभ्यर्चित-क्रमम् ॥३॥
ध्यान - द्रुघण - निर्भिन्न - घन - घाति - महातरुः ।
अनन्त - भव - सन्तान - जयादासीरनन्तजित् ॥४॥
त्रैलोक्य - निर्जयावाप्त - दुर्दर्प-मतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजं विजित्यासीज्जिन ! मृत्युञ्जयो भवान् ॥५॥
विधूताशेष-संसार-बन्धनो भव्य-बान्धवः ।
त्रि-पुरारिस्त्वमीशोऽसि जन्म-मृत्यु-जरान्तकृत् ॥६॥
त्रिकाल-विषयाशेष-तत्त्व-भेदात्त्रिधोत्थितम् ।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रिनेत्रोऽसि त्वमीशितः ॥७॥
त्वामन्धकान्तकं प्राहुर्महान्धासुर-मर्दनात् ।
अर्धं ते नारयो यस्मादर्ध-नारीश्वरोऽस्यतः ॥८॥
शिवः शिव-पदाध्यासाद् दुरितारि-हरो हरः ।
शङ्करः कृतशं लोके शंभवस्त्वं भवन्सुखे ॥९॥
वृषभोऽसि जगज्ज्येष्ठः पुरुः पुरु-गुणोदयैः ।
नाभेयो नाभि-संभूतेरिक्षवाकु-कुल-नन्दनः ॥१०॥
त्वमेकः पुरुष-स्कन्धस्त्वं द्वे लोकस्य लोचने ।
त्वं त्रिधा बुद्ध-सन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रि-ज्ञान-धारकः ॥११॥
चतुःशरण-माङ्गल्य-मूर्तिस्त्वं चतुरस्त्र-धीः ।
पश्च-ब्रह्ममयो देव ! पावनस्त्वं पुनीहि माम् ॥१२॥
स्वर्गावतरणे तुभ्यं सद्योजातात्मने नमः ।
जन्माभिषेक-वामाय वामदेव ! नमोऽस्तु ते ॥१३॥
सुनिष्क्रान्तावघोराय परं प्रशममीयुषे ।
केवल-ज्ञान-संसिद्धावीशानाय नमोऽस्तु ते ॥१४॥
पुरस्तपुरुषत्वेन विमुक्ति - पद - भागिने ।
नमस्तपुरुषावस्थां भाविनीं तेऽद्य बिभ्रते ॥१५॥
ज्ञानावरण - निर्हासान्नमस्तेऽनन्त - चक्षुषे ।
दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्तेऽनन्त - दृश्यने ॥१६॥

नमो दर्शन-मोहघ्ने क्षायिकामल-दृष्टये ।
 नमश्चारित्र-मोहघ्ने विरागाय महौजसे ॥१७॥

नमस्तेऽनन्त-वीर्याय नमोऽनन्त-सुखात्मने ।
 नमस्तेऽनन्त-लोकाय लोकालोकावलोकिने ॥१८॥

नमस्तेऽनन्त-दानाय नमस्तेऽनन्त-लब्धये ।
 नमस्तेऽनन्त-भोगाय नमोऽनन्तोपभोगिने ॥१९॥

नमः परम-योगाय नमस्तुभ्यमयोनये ।
 नमः परम-पूताय नमस्ते परमर्षये ॥२०॥

नमः परम-विद्याय नमः पर-मतच्छिदे ।
 नमः परम-तत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ॥२१॥

नमः परम-रूपाय नमः परम-तेजसे ।
 नमः परम-मार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥२२॥

परमर्द्धजुषे धाम्ने परम-ज्योतिषे नमः ।
 नमः पारे-तमःप्राप्त-धाम्ने परतरात्मने ॥२३॥

नमः क्षीण-कलङ्काय क्षीण-बन्ध ! नमोऽस्तु ते ।
 नमस्ते क्षीण-मोहाय क्षीण-दोषाय ते नमः ॥२४॥

नमः सुगतये तुभ्यं शोभनां गतिमीयुषे ।
 नमस्तेऽतीन्द्रिय-ज्ञान-सुखायानिन्द्रियात्मने ॥२५॥

काय-बन्धन-निर्मोक्षादकायाय नमोऽस्तु ते ।
 नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ॥२६॥

अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः ।
 नमः परम-योगीन्द्र-वन्दिताङ्गि-द्वयाय ते ॥२७॥

नमः परम-विज्ञान ! नमः परम-संयम !
 नमः परम-दृग्दृष्ट-परमार्थाय तायिने ॥२८॥

नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्ल-लेश्यांशक-स्पृशे ।
 नमो भव्येतरावस्था-व्यतीताय विमोक्षिणे ॥२९॥

संज्यसंज्ञि-द्वयावस्था-व्यतिरिक्तामलात्मने ।
 नमस्ते वीत-संज्ञाय नमः क्षायिक-दृष्टये ॥३०॥

अनाहाराय तृप्ताय नमः परम-भाजुषे ।
 व्यतीताशेष-दोषाय भवाद्ये: पारमीयुषे ॥३१॥

अजराय नमस्तुभ्यं नमस्तेस्तादजन्मने ।
 अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाक्षरात्मने ॥३२॥

अलमास्तां गुण-स्तोत्रमनन्तास्तावका गुणाः ।
 त्वां नाम-स्मृतिमात्रेण पर्युपासिसिषामहे ॥३३॥

एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्या परमया सुधीः ।
पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्रं पाप-शान्तये ॥३४॥

इति जिनसहस्रनामस्तोत्रप्रस्तावना

प्रथमशतकम्

प्रसिद्धाष्ट-सहस्रेष्ठ-लक्षणं त्वां गिरां पतिम् ।
नाम्नामष्ट-सहस्रेण तोष्टुमोऽभीष्ट-सिद्धये ॥१॥

श्रीमान् स्वयंभूर्वृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः ।
स्वयंप्रभः प्रभुर्भौक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥२॥

विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः ।
विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनश्वरः ॥३॥

विश्वदृशा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः ।
विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥४॥

विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः ।
विश्वदृग्विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥५॥

जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः ।
अनन्तजिदचिन्त्यात्मा भव्य-बन्धुरबन्धनः ॥६॥

युगादि-पुरुषो ब्रह्मा पञ्च-ब्रह्ममयः शिवः ।
परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥७॥

स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्म-योनिरयोनिजः ।
मोहारिर्विजयी जेता धर्म-चक्री दयाध्वजः ॥८॥

प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः ।
ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥९॥

सिद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।
सिद्धसिद्धान्तविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥१०॥

सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धर्थरोऽव्ययः ॥११॥

विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥१२॥

इति श्रीमदादिशतम्

द्वितीयशतकम्

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।
पूतात्मा परम-ज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥१॥

श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥२॥

अनन्त-दीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः ।
मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥३॥

निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः ।
 अचल-स्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥४॥
 अग्रणीग्रामणीर्नेता प्रणेता न्याय-शास्त्रकृत् ।
 शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्म-तीर्थकृत् ॥५॥
 वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतु-वृषायुधः ।
 वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभाङ्गो वृषोद्धवः ॥६॥
 हिरण्य-नाभिर्भूतात्मा भूतभृद् भूतभावनः ।
 प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥७॥
 हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोऽभवः ।
 स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः ॥८॥
 सर्वादिः सर्वादिक्सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
 सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित् सर्वलोकजित् ॥९॥
 सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुत् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः ।
 विश्रुतो विश्रुतःपादो विश्रुतीर्षः शुचिश्रवाः ॥१०॥
 सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
 भूत-भव्य-भवद्वर्ता विश्व-विद्या-महेश्वरः ॥११॥
 इति दिव्यादिशतम्

तृतीयशतकम्

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः प्रष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठ-धीः ।
 स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठोऽणिष्ठो गरिष्ठ-गीः ॥१॥
 विश्वभृद् विश्वसृद् विश्वेऽविश्व-नायकः ।
 विश्वासीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ॥२॥
 विभावो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन् ।
 विरागो विरतोऽसङ्गो विविक्तो वीत-मत्सरः ॥३॥
 विनेय - जनता - बन्धुर्विलीनाशेष - कल्मषः ।
 वियोगो योगविद्विद्वान् विधाता सुविधिः सुधीः ॥४॥
 क्षान्तिभाक् पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक् सलिलात्मकः ।
 वायुमूर्तिरसङ्गात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधक् ॥५॥
 सुयज्चा यजमानात्मा सुत्वा सुत्राम-पूजितः ।
 ऋत्विग्यज्ञ-पतिर्यज्यो यज्ञाङ्गममृतं हविः ॥६॥
 व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः ।
 सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥७॥
 मन्त्रविन्मन्त्रवृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तगः ।
 स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वन्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥८॥
 कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृत-क्रतुः ।
 नित्यो मृत्युञ्जयोऽमृत्युरमृतात्मामृतोद्भवः ॥९॥

ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्म-संभवः ।
 महाब्रह्म-पतिर्ब्रह्मेऽ महाब्रह्म-पदेश्वरः ॥१०॥

सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञान-धर्म-दम-प्रभुः ।
 प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराण-पुरुषोत्तमः ॥११॥

इति स्थविषादिशतम्
चतुर्थ-शतकम्

महाशोक-ध्वजोऽशोकः कः स्रष्टा पद्म-विष्टरः ।
 पद्मेशः पद्म-संभूतिः पद्म-नाभिरनुत्तरः ॥१॥

पद्म-योनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।
 स्तवनार्हो हृषीकेशो जित-जेयः कृत-क्रियः ॥२॥

गणाधिपो गण-ज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः ।
 गुणाकरो गुणाभ्योधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ॥३॥

गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्य-गीर्गुणः ।
 शरण्यः पुण्य-वाक्पूतो वरेण्यः पुण्य-नायकः ॥४॥

अगण्यः पुण्य-धीर्गुण्यः पुण्यकृत्पुण्य-शासनः ।
 धर्मारामो गुण-ग्रामः पुण्यापुण्य-निरोधकः ॥५॥

पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीत-कल्मषः ।
 निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥६॥

निर्निमेषो निराहारो निष्क्रियो निरुपप्लवः ।
 निष्कलङ्घो निरस्तैना निर्धूतागा निरास्त्रवः ॥७॥

विशालो विपुल-ज्योतिरतुलोऽचिन्त्य-वैभवः ।
 सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुभुत्सुनय-तत्त्ववित् ॥८॥

एक-विद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः ।
 धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतान्तकः ॥९॥

पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः ।
 त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ॥१०॥

कविः पुराण-पुरुषो वर्षायानृषभः पुरुः ।
 प्रतिष्ठा-प्रसवो हेतुर्भुवनैक-पितामहः ॥११॥

इति महादिशतम्
पञ्चमशतकम्

श्रीवृक्ष-लक्षणः श्लक्षणो लक्षण्यः शुभलक्षणः ।
 निरक्षः पुण्डरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥१॥

सिद्धिदः सिद्ध-संकल्पः सिद्धात्मा सिद्धसाधनः ।
 बुद्ध-बोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्धिकः ॥२॥

वेदाङ्गो वेदविद्वेद्यो जात-रूपो विदांवरः ।
 वेद-वेद्यः स्व-संवेद्यो विवेदो वदतांवरः ॥३॥

अनादि-निधनो व्यक्तो व्यक्तवाग् व्यक्त-शासनः ।
 युगादिकृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥४॥
 अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक् ।
 अनिन्द्रियोऽहमिन्द्राचर्यो महेन्द्र-महितो महान् ॥५॥
 उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भव-तारकः ।
 अगाह्यो गहनं गुह्यं परार्थः परमेश्वरः ॥६॥
 अनन्तर्भिरमेयर्भिरचिन्त्यर्भिः समग्रधीः ।
 प्राग्रथः प्राग्रहरोऽभ्यग्रः प्रत्यग्रोऽग्रघोऽग्रिमोऽग्रजः ॥७॥
 महातपा महातेजा महोदर्को महोदयः ।
 महायशा महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ॥८॥
 महाधैर्यो महावीर्यो महासंपन्नहाबलः ।
 महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥९॥
 महामतिर्महानीतिर्महाक्षान्तिर्महादयः ।
 महाप्राज्ञो महाभागो महानन्दो महाकविः ॥१०॥
 महामहा महाकीर्तिर्महाकान्तिर्महावपुः ।
 महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुणः ॥११॥
 महामहपतिः प्राप्त-महाकल्याण-पञ्चकः ।
 महाप्रभुर्महाप्रातिहार्यधीशो महेश्वरः ॥१२॥

इति श्रीबृक्षादिशतम्

षष्ठशतकम्

महामुनिर्महामौनी महाध्यानो महादमः ।
 महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥१॥
 महाव्रत-पतिर्मह्यो महाकान्ति-धरोऽधिपः ।
 महामैत्री-मयोऽमेयो महोपायो महोमयः ॥२॥
 महाकारुणिको मन्ता महामन्त्रो महायतिः ।
 महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः ॥३॥
 महाध्वरधरो ध्रुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् ।
 महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदयः ॥४॥
 महाकलेशाङ्कुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।
 महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥५॥
 महाभवाङ्मि-संतारी महामोहाद्रि-सूदनः ।
 महागुणाकरः क्षान्तो महायोगीश्वरः शमी ॥६॥
 महाध्यानपतिर्धर्यात-महाधर्मा महाव्रतः ।
 महाकर्मारिहात्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥७॥
 सर्वकलेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः ।
 असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥८॥

सर्व-योगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः ।
 दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वाः ॥१॥
 प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः ।
 प्रक्षीण-बन्धः कामारिः क्षेमकृत् क्षेमशासनः ॥१०॥
 प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्राणतेश्वरः ।
 प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥११॥
 आनन्दो नन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः ।
 कामहा कामदः काम्यः काम-धेनुररिज्यः ॥१२॥

इति महामुन्न्यादिशतम्

सप्तमशतकम्

असंस्कृत-सुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतान्तकृत् ।
 अन्तकृत्कान्तगुः कान्तश्चिन्तामणिरभीष्टदः ॥१॥
 अजितो जित-कामारिरमितोऽमित-शासनः ।
 जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितान्तकः ॥२॥
 जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभि-स्वनः ।
 महेन्द्र-वन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ॥३॥
 नाभेयो नाभिजोऽजातः सुव्रतो मनुरुत्तमः ।
 अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्चानधिकोऽधिगुरुः सुगीः ॥४॥
 सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः ।
 विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥५॥
 क्षेमी क्षेमङ्गरोऽक्षयः क्षेम-धर्म-पतिः क्षमी ।
 अग्राह्यो ज्ञान-निग्राह्यो ध्यान-गम्यो निरुत्तरः ॥६॥
 सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः ।
 श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥७॥
 सत्यात्मा सत्य-विज्ञानः सत्य-वाक्सत्य-शासनः ।
 सत्याशीः सत्य-सन्धानः सत्यः सत्य-परायणः ॥८॥
 स्थेयान्-स्थवीयान्-नेदीयान्-दवीयान्-दूरदर्शनः ।
 अणोरणीयानननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥९॥
 सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।
 सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥१०॥
 सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् ।
 सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता लोकाध्यक्षो दमेश्वरः ॥११॥

इति असंस्कृतादिशतम्

अष्टमशतकम्

बृहद्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदार-धीः ।
 मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरां पतिः ॥१॥

नैक-रूपो नयोत्तुङ्गो नैकात्मा नैक-धर्मकृत् ।
 अविज्ञेयोऽप्रतक्यात्मा कृतज्ञः कृत-लक्षणः ॥२॥
 ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः ।
 पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेम-गर्भः सुदर्शनः ॥३॥
 लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो द्रढीयानिन ईशिता ।
 मनोहरो मनोज्ञाङ्गो धीरो गम्भीर-शासनः ॥४॥
 धर्म-यूपो दया-यागो धर्म-नेमिर्मुनीश्वरः ।
 धर्म-चक्रायुधो देवः कर्महा धर्म-घोषणः ॥५॥
 अमोघवाग्मोघाङ्गो निर्मोऽमोघ-शासनः ।
 सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥६॥
 सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः ।
 अलेपो निष्कलङ्गात्मा वीतरागो गत-स्पृहः ॥७॥
 वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपलो जितेन्द्रियः ।
 प्रशान्तोऽनन्त-धार्मिर्मङ्गलं मलहानयः ॥८॥
 अनीदृगुपमाभूतो दिष्टिर्देवमगोचरः ।
 अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैक-तत्त्वदृक् ॥९॥
 अध्यात्मगप्योऽगप्यात्मा योगविद् योगिवन्दितः ।
 सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकाल-विषयार्थदृक् ॥१०॥
 शङ्करः शंवदो दान्तो दमी क्षान्ति-परायणः ।
 अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ॥११॥
 त्रिजगद्-वल्लभोऽभ्यर्च्य-स्त्रिजगन्मङ्गलोऽदयः ।
 त्रिजगत्पति - पूज्याङ्गिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥१२॥
 इति बृहदादिशतम्

नवमशतकम्

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोक-धाता दृढ-ब्रतः ।
 सर्व-लोकातिगः पूज्यः सर्व-लोकैक-सारथिः ॥१॥
 पुराणः पुरुषः पूर्वः कृत-पूर्वाङ्ग-विस्तरः ।
 आदि-देवः पुराणाद्यः पुरु-देवोऽधिदेवता ॥२॥
 युगमुख्यो युग-ज्येष्ठो युगादि-स्थिति-देशकः ।
 कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥३॥
 कल्याणप्रकृतिर्दीप्र-कल्याणात्मा विकल्मषः ।
 विकलङ्गः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥४॥
 देव-देवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
 जगद्वितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ॥५॥
 चराचर-गुरुर्गप्यो गूढात्मा गूढ-गोचरः ।
 सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलन-सप्रभः ॥६॥
 आदित्यवर्णो भर्माभिः सुप्रभः कनकप्रभः ।
 सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्य-कोटि-सप्त-प्रभः ॥७॥

तपनीय-निभस्तुङ्गे बालार्कार्भोऽनल-प्रभः ।
 संध्याभ्र-बभूर्हेमाभस्तप्त-चामीकरच्छविः ॥८॥
 निष्टप्त-कनकच्छायः कनत्काश्चन-सन्निभः ।
 हिरण्य-वर्णः स्वर्णभः शातकुम्भ-निभ-प्रभः ॥९॥
 द्युम्नाभो जात-रूपाभस्तप्त-जाम्बूनद-द्युतिः ।
 सुधौत-कलधौत-श्रीः प्रदीप्तो हाटक-द्युतिः ॥१०॥
 शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः ।
 शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥११॥
 शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्टः शिवतातिः शिवप्रदः ।
 शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्तिमान् कामितप्रदः ॥१२॥
 श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
 सुस्थिरः स्थावरः स्थास्तुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः ॥१३॥

इति त्रिकालदर्शयादिशतम्

दशमाष्टोत्तरशतम्

दिग्वासा वातरसनो निर्गन्थेशो दिगम्बरः ।
 निष्किञ्चनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥१॥
 तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाद्यिः शील-सागरः ।
 तेजोमयोऽमित-ज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोऽपहः ॥२॥
 जगच्चूडामणिर्दीप्तः शंवान्विज्ञ-विनायकः ।
 कलिघ्नः कर्म-शत्रुघ्नो लोकालोक-प्रकाशकः ॥३॥
 अनिद्रालुरतन्द्रालुर्जगरुकः प्रमामयः ।
 लक्ष्मी-पतिर्जगज्योतिर्धर्मराजः प्रजा-हितः ॥४॥
 मुमुक्षुर्बन्धमोक्षज्ञो जिताक्षो जित-मन्मथः ।
 प्रशान्त-रस-शैलूषो भव्य-पेटक-नायकः ॥५॥
 मूल-कर्ताखिल-ज्योतिर्मलध्नो मूल-कारणः ।
 आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥६॥
 प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विध-भाववित् ।
 सुतनुस्तनु-निर्मुक्तः सुगतो हत-दुर्नयः ॥७॥
 श्रीशः श्री-त्रित-पादाब्जो वीतभी-रभयङ्करः ।
 उत्सन्न-दोषो निर्विज्ञो निश्चलो लोक-वत्सलः ॥८॥
 लोकोत्तरो लोक-पतिर्लोक-चक्षुरपार-धीः ।
 धीर-धीर्बुद्ध-सन्मार्गः शुद्धः सूनृत-पूतवाक् ॥९॥
 प्रज्ञा-पारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः ।
 भदन्तो भद्रकृद् भद्रः कल्प-वृक्षो वर-प्रदः ॥१०॥
 समुन्मूलित-कर्मारिः कर्म-काष्ठाशुशुक्षणिः ।
 कर्मणः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेय-विचक्षणः ॥११॥

अनन्त - शक्तिरच्छेदस्त्रिपुरारि - स्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्रम्बकस्त्र्यक्षः केवल-ज्ञान-वीक्षणः ॥१२॥
समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दया-निधिः ।
सूक्ष्मदर्शी जितानङ्गः कृपालुर्धर्म-देशकः ॥१३॥
शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्य-राशिरनामयः ।
धर्मपालो जगत्पालो धर्म-साम्राज्य-नायकः ॥१४॥

इति दिग्वासाद्यादोत्तरशतम्

उपसंहार

धाम्नांपते ! तवामूनि नामान्यागम-कोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥१॥
गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवागोचरो मतः ।
स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्ट-फलं भजेत् ॥२॥
त्वमतोऽसि जगद्धन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्विषक् ।
त्वमतोऽसि जगद्वाता त्वमतोऽसि जगद्वितः ॥३॥
त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्वि-रूपोपयोगभाक् ।
त्वं त्रिरूपैक-मुक्त्यज्ञं स्वोत्थानन्त-चतुष्टयः ॥४॥
त्वं पञ्च-ब्रह्म-तत्त्वात्मा पञ्च-कल्याण-नायकः ।
षड्भेद-भाव-तत्त्वज्ञस्त्वं सप्त-नय-सङ्घः ॥५॥
दिव्याष्ट-गुण-मूर्तिस्त्वं नव-केवल-लघ्विकः ।
दशावतार-निर्झर्यो मां पाहि परमेश्वर ! ॥६॥
युष्मन्नामावली - दृद्ध्य - विलसत्स्तोत्र - मालया ।
भवन्तं परिवस्यामः प्रसीदानुगृहण नः ॥७॥
इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भावितिकः ।
यः सत्पाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याण-भाजनम् ॥८॥
ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमान् पठतु पुण्यधीः ।
पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥९॥
स्तुत्वेति मघवा देवं चराचर-जगद्गुरुम् ।
ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥१०॥
स्तुतिः पुण्यगुणोत्कीर्तिः स्तोता भव्यः प्रसन्नधीः ।
निष्ठितार्थो भवान् स्तुत्यः फलं नैःश्रेयसं सुखम् ॥११॥

शार्दूलविक्रीडितम्

यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित्,
ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्याता स्वयं कस्यचित् ।
यो नन्तून् नयते नमस्कृतिमलं नन्तव्य-पक्षेक्षणः,
स श्रीमान् जगतां त्रयस्य च गुरुर्देवः पुरुः पावनः ॥१२॥

तं देवं त्रिदशाधिपार्चित-पदं घाति-क्षयानन्तरं,
प्रोत्थानन्त-चतुष्टयं जिनमिनं भव्याब्जिनीनामिनम् ।
मान-स्तम्भ-विलोकनानत-जगन्मान्यं त्रिलोकी-पतिं,
प्राप्ताचिन्त्य-बहिर्विभूतिमनधं भक्त्या प्रवन्दामहे ॥१३॥

इति श्रीमज्जिनसहस्रनामस्तोत्रम्



श्रीआदिनाथाय नमः

भक्तामरस्तोत्रम्

कालजयी महाकाव्य

श्रीमन्मानतुङ्गाचार्य-विरचितम्

वसन्ततिलका

भक्तामर-प्रणतमौलि-मणिप्रभाणा-
मुद्घोतकं दलित-पापतमो-वितानम् ।
सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥१॥

यः संस्तुतः सकलवायतत्त्वबोधा-
दुद्घूत-बुद्धि-पटुभिः सुरलोकनाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्तियचित्त-हरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठ !
स्तोतुं समुद्घतमतिर्विगत-त्रपोऽहम् ।
बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥३॥

वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र ! शशाङ्ककान्तान्,
कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।
कल्पान्त-कालपवनोद्घत-नक्र-चक्रं,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥४॥

सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश !
कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्याऽत्मवीर्यमविचार्य मृगी मृगेन्द्रं,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥
अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहास-धाम,
त्वद्वक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्रचारुकलिका-निकरैकहेतु ॥६॥

त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं,
 पापं क्षणात् क्षय-मुपैति शरीरभाजाम् ।
 आक्रान्त-लोक-मलिनीलमशेषमाशु,
 सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥७॥
 मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद-
 मारभ्यते तनुधियाऽपि तव प्रभावात् ।
 चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु,
 मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूद-बिन्दुः ॥८॥
 आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्त-दोषं,
 त्वत्सङ्क्लथाऽपि जगतां दुरितानि हन्ति ।
 दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव,
 पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥९॥
 नात्यद्भुतं भुवन-भूषण ! भूतनाथ !
 भूतैर्गुणौर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः ।
 तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
 भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ? ॥१०॥
 दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं,
 नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।
 पीत्वा पयः शशिकरद्युति दुग्धसिन्धोः,
 क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क इच्छेत् ? ॥११॥
 यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,
 निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललामभूत !
 तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
 यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥
 वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्रहारि,
 निःशेष-निर्जित-जगत्त्रितयोपमानम् ।
 बिम्बं कलङ्क-मलिनं क्व निशाकरस्य,
 यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम् ॥१३॥
 सम्पूर्ण-मण्डल-शशाङ्क-कलाकलाप-
 शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति ।
 ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर ! नाथमेकं,
 कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥१४॥
 चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि-
 नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् ।
 कल्पान्त-काल-मरुता चलिताचलेन,
 किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ? ॥१५॥
 निर्धूम-वर्तिरपवर्जित-तैलपूरः,
 कृत्स्नं जगत्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।

गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
 दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ॥१६॥
 नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः,
 स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
 नाम्भोधरोदर-निरुद्ध-महाप्रभावः,
 सूर्यातिशायि-महिमाऽसि मुनीन्द्र ! लोके ॥१७॥
 नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारं,
 गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम् ।
 विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्प-कान्ति,
 विद्योतयज्जगदपूर्व-शशाङ्क-बिम्बम् ॥१८॥
 किं शर्वरीषु शशिनाहि विवस्वता वा ?
 युष्मन्मुखेन्दु-दलितेषु तमःसु नाथ ! ।
 निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके,
 कार्यं कियज्जलधरैर्जलभार-नम्रैः ॥१९॥
 ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
 नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
 तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं,
 नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥
 मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा,
 दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
 किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
 कश्चिन्मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि ॥२१॥
 स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
 नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
 सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं,
 प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥
 त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
 मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
 त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
 नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ॥२३॥
 त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं,
 ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
 योगीश्वरं विदित-योगमनेकमेकं,
 ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥२४॥
 बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्-
 त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्रय-शङ्करत्वात् ।
 धातासि धीर ! शिवमार्गविधेर्विधानाद्,
 व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति-हराय नाथ !
 तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।
 तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
 तुभ्यं नमो जिन ! भवोदधि-शोषणाय ॥२६॥
 को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषैस्
 त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश ! ।
 दोषैरुपात्त-विविधाश्रय-जात-गर्वेः,
 स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥
 उच्चैरशोकतरुसंश्रित- मुन्मयूख-
 माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।
 स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त-तमोवितानं,
 बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्वर्वति ॥२८॥
 सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे,
 विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
 बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं,
 तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः ॥२९॥
 कुन्दावदात-चलचामर-चारु-शोभं,
 विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम् ।
 उद्यच्छशाङ्क-शुचिनिर्झर-वारिधार-
 मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥
 छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त-
 मुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकरप्रतापम् ।
 मुक्ताफल-प्रकर-जाल-विवृद्ध-शोभं,
 प्रख्यापयत् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥३१॥
 गम्भीरतार-रव-पूरित-दिग्विभागस्
 त्रैलोक्यलोक-शुभसङ्गम-भूतिदक्षः ।
 सब्धर्मराजजय-घोषण-घोषकः सन्,
 खे दुन्दुभिर्धर्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥
 मन्दार-सुन्दर-नमेरु-सुपारिजात-
 सन्तानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टिरुद्घा ।
 गन्धोदबिन्दुशुभ-मन्दमरुत्रपाता,
 दिव्या दिवः पतति ते वचसां तर्तिर्वा ॥३३॥
 शुभ्मत्प्रभा-वलय-भूरि-विभा विभोस्ते,
 लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती ।
 प्रोद्यद्विवाकर-निरन्तर-भूरि-संख्या,
 दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्या ॥३४॥

स्वर्गापवर्ग-गममार्ग-विमार्गणेष्टः,
 सद्ब्र्म-तत्त्व-कथनैक-पटुल्लिलोक्याः ।
 दिव्यध्वनि-र्भवति ते विशदार्थसर्व-
 भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः ॥३५॥
 उन्निद्रहेमनवपङ्कज-पुञ्ज-कान्ति,
 पर्युल्लसन्नखमयूख-शिखाभिरामौ ।
 पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्रधत्तः,
 पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥
 इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र !
 धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य ।
 यादृक् प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
 तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि ॥३७॥
 श्च्योतन्मदाविल-विलोल-कपोलमूल-
 मत्तभ्रमद्भ्रमर-नाद-विवृद्ध-कोपम् ।
 ऐरावताभमिभमुद्घतमापतन्तं,
 दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३८॥
 भिन्नेभकुम्भ-गलदुज्ज्वल-शोणिताकृत-
 मुक्ताफल-प्रकर-भूषित-भूमिभागः ।
 बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि,
 नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥३९॥
 कल्पान्तकाल-पवनोद्धत-वह्निकल्पं,
 दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्सुकुलिङ्गम् ।
 विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं,
 त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥४०॥
 रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कण्ठ-नीलं,
 क्रोधोद्धतं फणिनमुत्कणमापतन्तम् ।
 आक्रामति क्रमयुगेण निरस्तशङ्कस्
 त्वन्नाम-नागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥४१॥
 वल्नात्तुरङ्ग-गजगर्जित-भीमनाद-
 माजौ बलं बलवतामरि-भूपतीनाम् ।
 उद्यद्विवाकरमयूखशिखापविद्धं,
 त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥४२॥
 कुन्ताग्रभिन्न-गजशोणित-वारिवाह-
 वेगावतार-तरणातुर-योधभीमे ।
 युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षास्
 त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥

अम्भोनिधौ क्षुभितभीषण-नक्र-चक्र-
 पाठीनपीठ-भयदोल्वण- वाडवाग्नौ ।
 रङ्गत्तरङ्ग-शिखरस्थित-यानपात्रास्
 त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् ब्रजन्ति ॥४४॥

 उद्धूतभीषण-जलोदर-भारभुग्नाः,
 शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः ।
 त्वत्पादपङ्कजरजोऽमृत-दिग्धदेहा,
 मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥४५॥

 आपादकण्ठमुरुशृङ्खल-वेष्टिताङ्गा,
 गाढं बृहन्निगडकोटिनिधृष्टजङ्घाः ।
 त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
 सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥४६॥

 मत्तद्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि-
 संग्राम-वारिधि-महोदर-बन्धनोत्थम् ।
 तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
 यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥

 स्तोत्रस्त्रजं तव जिनेन्द्र ! गुणैर्निबद्धां,
 भक्त्या मया विविध-वर्ण-विचित्रपुष्पाम् ।
 धर्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्तं,
 तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥४८॥

महावीराष्टक-स्तोत्रम्

कविवर भागचन्द्र
 शिखरिणीछन्दः
 यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः,
 समं भान्ति ध्रौव्य-व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिताः ।
 जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन-परो भानुरिव यो,
 महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥१॥

 अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्द-रहितं,
 जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ।
 स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला,
 महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥२॥

 नमन्नाकेन्द्राली-मुकुट-मणि-भा-जाल-जटिलं,
 लसत्पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनुभृताम् ।
 भवज्चाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि,
 महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥३॥

 यदर्चा-भावेन प्रमुदित-मना दर्दुर इह,
 क्षणादासीत्स्वर्गी गुण-गण-समृद्धः सुख-निधिः ।

लभन्ते सद्भक्ताः शिव-सुख-समाजं किमु तदा,
 महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥४॥
 कनत्स्वर्णभासोऽप्यपगत-तनुज्ञान-निवहो,
 विचित्रात्माप्येको नृपति-वर-सिद्धार्थ-तनयः ।
 अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोऽद्भुत-गति-
 महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥५॥
 यदीया वाग्ङ्मा विविध-नय-कल्लोल-विमला,
 बृहज्ञानाभ्योभिर्जगति जनतां या स्नपयति ।
 इदानीमप्येषा बुध-जन-मरालैः परिचिता,
 महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥६॥
 अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवन-जयी काम-सुभटः,
 कुमारावस्थायामपि निज-बलाद्येन विजितः ।
 स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशम-पद-राज्याय स जिनो,
 महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥७॥
 महामोहातङ्क-प्रशमन-पराकस्मिक-भिषङ्,
 निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमा-मङ्गलकरः ।
 शरण्यः साधूनां भव-भय-भृतामुत्तमगुणो,
 महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥८॥
 अनुष्टुप्छन्दः
 महावीराष्ट्रं स्तोत्रं भक्त्या ‘भागेन्दुना’ कृतम् ।
 यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥९॥

छह ढाला

(कविवर दौलतरामजी कृत)

मंगलाचरण (सोरठा)

तीन भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता ।
शिवस्वरूप शिवकार, नमहुँ त्रियोग सम्हारिकै ॥

पहली ढाल

चौपैः (१५ मात्रा)

जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहैं दुख तैं भयवन्त ।
 तातैं दुखहारी सुखकार, कहैं सीख गुरु करुणा धार ॥१॥
 ताहि सुनो भवि मन थिर आन, जो चाहो अपनो कल्याण ।
 मोह-महामद पियो अनादि, भूल आप को भरमत वादि ॥२॥
 तास भ्रमण की है बहु कथा, पै कछु कहूँ कही मुनि यथा ।
 काल अनन्त निगोद मङ्गार, बीत्यो एकेन्द्री तन धार ॥३॥
 एक स्वास में अठदश बार, जन्म्यो मर्यो भर्यो दुखभार ।
 निकसि भूमि जल पावक भयो, पवन प्रत्येक वनस्पति थयो ॥४॥
 दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणी, त्यों पर्याय लही त्रसतणी ।
 लट पिपील अलि आदि शरीर, धर-धर मर्यो सही बहुपीर ॥५॥

कबहूँ पंचेन्द्रिय पशु भयो, मन बिन निपट अज्ञानी थयो ।
 सिंहादिक सैनी है क्रूर, निबल पशु हति खाये भूर ॥६॥
 कबहूँ आप भयो बलहीन, सबलनि करि खायो अति दीन ।
 छेदन भेदन भूख पियास, भारवहन हिम आतप त्रास ॥७॥
 वध बन्धन आदिक दुःख घने, कोटि जीभतैं जात न भने ।
 अति संक्लेश-भावतैं मर्यो, घोर श्रभ्रसागर में पर्यो ॥८॥
 तहाँ भूमि परसत दुःख इसो, बिछू सहस डसैं नहि तिसो ।
 तहाँ राधशोणित वाहिनी, कृमिकुल कलित देहदाहिनी ॥९॥
 सेमर तरु दल-जुत असिपत्र, असि ज्यौं देह विदारैं तत्र ।
 मेरुसमान लोह गलि जाय, ऐसी शीत उष्णता थाय ॥१०॥
 तिल-तिल करैं देह के खण्ड, असुर भिड़ावैं दुष्ट प्रचण्ड ।
 सिन्धुनीरतैं प्यास न जाय, तो पण एक न बूँद लहाय ॥११॥
 तीन लोक को नाज जु खाय, मिटै न भूख कणा न लहाय ।
 ये दुःख बहु सागरलैं सहै, करमजोग तैं नरगति लहै ॥१२॥
 जननी उदर वस्यौ नव मास, अंग-स्कुचतैं पाई त्रास ।
 निकसत जे दुःख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर ॥१३॥
 बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणी रत रह्यो ।
 अर्धमृतक सम बूढ़ापनो, कैसे रूप लखै आपनो ॥१४॥
 कभी अकाम-निर्जरा करै, भवनत्रिक में सुरतन धरै ।
 विषयचाह-दावानल दह्यो, मरत विलाप करत दुःख सह्यो ॥१५॥
 जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुःख पाय ।
 तहतैं चय थावर-त्तन धरै, यों परिवर्तन पूरे करै ॥१६॥

दूसरी ढाल (पद्धरि छन्द)

ऐसे मिथ्यादृगज्ञानचरण, वश भ्रमत भरत दुख जन्ममरण ।
 तातैं इनको तजिये सुजान, सुन तिन संक्षेप कहूँ बखान ॥१॥
 जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधैं तिन माँहि विपर्ययत्व ।
 चेतन को है उपयोगरूप, विनमूरत चिन्मूरत अनूप ॥२॥
 पुद्गल नभ धर्म अर्धर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल ।
 ताकों न जान विपरीत मान, करि करैं देह में निज पिछान ॥३॥
 मैं सुखी दुखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव ।
 मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन ॥४॥
 तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान ।
 रागादि प्रगट जे दुःख दैन, तिन ही को सेवत गिनत चैन ॥५॥
 शुभ अशुभ बंध के फल मँझार, रति अरति करै निजपद विसार ।
 आतमहित हेतु विरागज्ञान, ते लखै आपको कष्टदान ॥६॥

रोकी न चाह निज शक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय ।
 याही प्रतीतिजुत कछुक ज्ञान, सो दुःखदायक अज्ञान जान ॥७॥
 इन जुत विषयनि में जो प्रवृत्त, ताको जानों मिथ्याचरित् ।
 यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अब जे गृहीत सुनिये सु तेह ॥८॥
 जो कुगुरु कुदेव कुर्धम सेव, पोषे चिर दर्शनमोह एव ।
 अन्तर रागादिक धरैं जेह, बाहर धन अम्बरतैं सनेह ॥९॥
 धरैं कुलिंग लहि महत भाव, ते कुगुरु जन्मजल उपल नाव ।
 जे रागद्वेष मल करि मलीन, वनिता गदादिजुत चिह्न चीन ॥१०॥
 ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव, शठ करत न तिन भवभ्रमण छेव ।
 रागादि भावहिंसा समेत, दर्वित त्रस थावर मरण खेत ॥११॥
 जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुर्धम, तिन सरधै जीव लहै अशर्म ।
 याकूँ गृहीत मिथ्यात्व जान, अब सुन गृहीत जो है अज्ञान ॥१२॥
 एकान्तवाद दूषित समस्त, विषयादिक पोषक अप्रशस्त ।
 कपिलादि-रचित श्रुत को अभ्यास, सो है कुबोध बहु देन त्रास ॥१३॥
 जो ख्याति लाभ पूजादि चाह, धरि करन विविधविध देहदाह ।
 आतम-अनातम के ज्ञानहीन, जे जे करनी तन करन छीन ॥१४॥
 ते सब मिथ्याचारित्र त्याग, अब आतम के हित पन्थ लाग ।
 जगजालभ्रमण को देहु त्याग, अब दौलत निज आतम सुपाग ॥१५॥

तीसरी ढाल

(नरेन्द्र/जोगीरासा छन्द)

आतम को हित है सुख सो सुख, आकुलता बिन कहिये ।
 आकुलता शिव माँहिं न तातैं, शिवमग लाग्यौ चहिये ॥
 सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरन शिव-मग सो दुविध विचारो ।
 जो सत्यारथ-रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो ॥१॥
 परद्रव्यनतैं भिन्न आप में, रुचि सम्यक्त्व भला है ।
 आपरूप को जानपनो सो, सम्यज्ञान कला है ॥
 आपरूप में लीन रहे थिर, सम्यक-चारित सोई ।
 अब व्यवहार मोक्ष-मग सुनिये, हेतु नियत को होई ॥२॥
 जीव अजीव तत्त्व अरु आस्त्रव, बन्ध रु संवर जानो ।
 निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्यों का त्यों सरधानो ॥
 है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप बखानो ।
 तिनको सुन सामान्य-विशेषैं, दृढ़ प्रतीति उर आनो ॥३॥
 बहिरातम अन्तर-आतम, परमातम जीव त्रिधा है ।
 देह-जीव को एक गिनै, बहिरातम तत्त्व मुधा है ॥
 उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के, अन्तर आतम ज्ञानी ।
 द्विविध संग बिन शुध-उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी ॥४॥
 मध्यम अन्तर आतम हैं जे, देशव्रती अनगारी ।
 जघन कहे अविरत समदृष्टि, तीनों शिव-मगचारी ॥

सकल-निकल परमात्म द्वैविध, तिनमें घाति निवारी ।
 श्री अरहंत सकल परमात्म, लोकालोक निहारी ॥५॥

ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्म-मल वर्जित सिद्ध महन्ता ।
 ते हैं निकल अमल परमात्म, भोगें शर्म अनन्ता ॥
 बहिरात्मता हेय जानि तजि, अन्तर-आत्म हूजै ।
 परमात्म को ध्याय निरन्तर, जो निज आनन्द पूजै ॥६॥

चेतनता बिन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं ।
 पुद्गल पंच वरन रस गन्ध दो, फरस वसू जाके हैं ॥
 जिय पुद्गल को चलन सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी ।
 तिष्ठत होय अर्धम सहाई, जिन बिन मूर्ति निरूपी ॥७॥

सकल द्रव्य को वास जास में, सो आकाश पिछानो ।
 नियत वर्तना निशि-दिन सो, व्यवहार काल परिमानो ॥
 यों अजीव अब आख्य सुनिये, मन-वच-काय त्रियोगा ।
 मिथ्या अविरति अरु कषाय, परमाद सहित उपयोगा ॥८॥

ये ही आत्म के दुःख कारण, तातैं इनको तजिये ।
 जीव प्रदेश बँधे विधि-सौं, सो बन्धन कबहुँ न सजिये ॥
 शम-दमतैं जो कर्म न आवें, सो संवर आदरिये ।
 तप-बलतैं विधि झरन निर्जरा, ताहि सदा आचरिये ॥९॥

सकल कर्म तैं रहित अवस्था, सो शिव घिर सुखकारी ।
 इहि विधि जो सरधा तत्त्वन की, सो समकित व्यौहारी ॥
 देव जिनेन्द्र, गुरु परिग्रह बिन, धर्म दयाजुत सारो ।
 यहू मान समकित को कारण, अष्ट अंगजुत धारो ॥१०॥

वसु मद टारि निवारि त्रिशठता, षट् अनायतन त्यागो ।
 शंकादिक वसु दोष बिना, संवेगादिक चित पागो ॥
 अष्ट अंग अरु दोष पचीसों, अब संक्षेप हु कहिये ।
 बिन जाने तैं दोष-गुनन को, कैसे तजिये गहिये ॥११॥

जिन-वच में शंका न धारि वृष, भव-सुख-वांछा भानै ।
 मुनि-तन मलिन न देख घिनावै, तत्त्व कुतत्त्व पिछानै ॥
 निज-गुण अरु पर-औगुण ढांकै, वा निज धर्म बढ़ावै ।
 कामादिक कर वृषतैं चिगते, निजपर को सु दिढ़ावै ॥१२॥

धर्मासों गौ-वच्छ प्रीति सम, कर जिन-धर्म दिपावै ।
 इन गुनतैं विपरीत दोष वसु, तिनको सतत खिपावै ॥
 पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय तो न मद ठानै ।
 मद न रूप को, मद न ज्ञान को, धन-बल को मद भानै ॥१३॥

तप को मद न मद जु प्रभुता को, करै न सो निज जानै ।
 मद धारै तो यही दोष वसु, समकित को मल ठानै ॥

कुगुरु कुदेव कुवृष सेवक की, नहिं प्रशंस उचरै है ।
 जिन मुनि जिनश्रुत बिन कुगुरादिक तिन्हैं न नमन करै है ॥१४॥
 दोष-रहित गुण-सहित सुधी जे, सम्यदर्श सजे हैं ।
 चरितमोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजे हैं ॥
 गेही पै, गृह में न रचे ज्यों, जलतैं भिन्न कमल है ।
 नगर-नारि को प्यार यथा, कादे में हेम अमल है ॥१५॥
 प्रथम नरक बिन षट् भू ज्योतिष, वान भवन षँड नारी ।
 थावर विकलत्रय पशु में नहि, उपजत समकित धारी ॥
 तीन लोक तिहुँ काल माँहि नहि, दर्शन सम सुखकारी ।
 सकल धरम को मूल यही, इस बिन करनी दुःखकारी ॥१६॥
 मोक्षमहल की परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान-चरित्रा ।
 सम्यकता न लहै सो दर्शन, धारौ भव्य पवित्रा ॥
 'दौल' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै ।
 यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहि होवै ॥१७॥

चौथी ढाल

दोहा

सम्यक श्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यग्ज्ञान ।
 स्वपर अर्थ बहु धर्मजुत, जो प्रगटावन भान ॥१॥

रोला

सम्यक् साथै ज्ञान होय, पै भिन्न अराधौ ।
 लक्षण श्रद्धा जान, दुहू-में भेद अबाधौ ॥
 सम्यक् कारण जान, ज्ञान कारज है सोई ।
 युगपद् होते हू, प्रकाश दीपकतैं होई ॥२॥
 तास भेद दो हैं परोक्ष, परतछि तिन माँहीं ।
 मति श्रुत दोय परोक्ष, अक्ष-मन-तैं उपजाहीं ॥
 अवधिज्ञान मनपर्जय, दो हैं देश प्रतच्छ ।
 द्रव्य क्षेत्र परिमाण लिये, जानैं जिय स्वच्छ ॥३॥
 सकल द्रव्य के गुन अनन्त, परजाय अनन्ता ।
 जानै एकै काल प्रगट, केवलि भगवन्ता ॥
 ज्ञान समान न आन, जगत में सुख को कारण ।
 इह परमामृत जन्म-जरा-मृतु रोग निवारण ॥४॥
 कोटि जन्म तप तर्पैं, ज्ञान बिन कर्म झरैं जे ।
 ज्ञानी के छिन माँहि, त्रिगुप्ति-तैं सहज टरैं ते ॥
 मुनिव्रत धार अनन्त बार, ग्रीवक उपजायौ ।
 पै निज आत्म ज्ञान बिना, सुख लेश न पायौ ॥५॥

तातैं जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजै ।
 संशय विभ्रम मोह त्याग, आपौ लख लीजै ॥
 यह मानुष परजाय, सुकुल सुनिवौ जिनवानी ।
 इहविधि गये न मिलें, सुमणि ज्यों उदधि समानी ॥६॥

धन समाज गज बाज, राज तो काज न आवै ।
ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावै॥
तास ज्ञान को कारण, स्व-पर विवेक बखान्यो ।
कोटि उपाय बनाय, भव्य ताको उर आन्यो ॥७॥

जे पूरब शिव गये, जाहिं अब आगे जैहें ।
सो सब महिमा ज्ञानतनी, मुनिनाथ कहै हैं॥
विषय चाह दव दाह, जगत जन अरनि दज्जावै ।
तास उपाय न आन, ज्ञान घनघान बुझावै ॥८॥

पुण्य-पाप फल माँहिं, हरख बिलखौ मत भाई ।
यह पुद्गल परजाय, उपजि विनसै थिर थाई॥
लाख बात की बात, यहै निश्चय उर लावो ।
तोरि सकल जग दन्द फन्द, निज आतम ध्यावो ॥९॥

सम्यग्ज्ञानी होय बहुरि, दृढ़ चारित लीजै ।
एकदेश अरु सकलदेश, तस भेद कहीजै॥
त्रसहिंसा को त्याग, वृथा थावर न संहारै ।
पर-वधकार कठोर निन्द्य, नहिं वयन उचारै ॥१०॥

जल मृतिका बिन और, नाहि कछु गहै अदत्ता ।
निज वनिता बिन सकल, नारि-सौं रहै विरत्ता ॥
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै ।
दशदिशि गमन प्रमान ठान, तसु सीम न नाखै ॥११॥

ताहूँ-में फिर ग्राम, गली गृह बाग बजारा ।
गमनागमन प्रमान, ठान अन सकल निवारा ॥
काहू की धन-हानि, किसी जय-हार न चिन्तै ।
देय न सो उपदेश, होय अघ वनिज कृषीतै ॥१२॥

कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै ।
असि धनु हल हिंसोपकरन, नहि दे जस लाधै ॥
राग-द्वेष करतार कथा, कबहूँ न सुनीजै ।
औरहु अनरथदण्ड, हेतु अघ तिन्हें न कीजै ॥१३॥

धर उर समता भाव, सदा सामायिक करिये ।
परव चतुष्टय माँहि, पाप तजि प्रोषध धरिये ॥
भोग और उपभोग, नियम करि ममत निवारै ।
मुनि को भोजन देय, फेर निज करहि अहारै ॥१४॥

बारह व्रत के अतीचार, पन पन न लगावै ।
मरण समय संन्यास धारि, तसु दोष नशावै ॥
यौं श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावै ।
तहंतैं चय नर जन्म पाय, मुनि है शिव जावै ॥१५॥

पाँचवीं ढाल
(बारह भावना)

सर्थी/चाल छन्द

मुनि सकलब्रती बड़भागी, भव-भोगन-तैं वैरागी ।
वैराग्य उपावन माई, चिन्त्यो अनुप्रेक्षा भाई ॥१॥

इन चिन्तत समसुख जागै, जिमि ज्वलन पवन के लागै ।
जब ही जिय आतम जानै, तब ही जिय शिवसुख ठानै ॥२॥

जोवन गृह गो धन नारी, हय गय जन आज्ञाकारी ।
इन्द्रीय भोग छिन थाई, सुरधनु चपला चपलाई ॥३॥

सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि काल दले ते ।
मणि मन्त्र तन्त्र बहु होई, मरते न बचावै कोई ॥४॥

चहुँगति दुःख जीव भरे हैं, परिवर्तन पंच करे हैं ।
सब विधि संसार असारा, यामैं सुख नाहिं लगारा ॥५॥

शुभ-अशुभ करम फल जेते, भोगै जिय एकहि तेते ।
सुत दारा होय न सीरी, सब स्वारथ के हैं भीरी ॥६॥

जल पय ज्यों जिय तन मेला, पै भिन्न-भिन्न नहि भेला ।
तौ प्रगट जुदे धन धामा, क्यों है इक मिलि सुत रामा ॥७॥

पल रुधिर राध मल थैली, कीकस वसादि-तैं मैली ।
नव द्वार बहें घिनकारी, अस देह करै किम यारी ॥८॥

जो योगन की चपलाई, तातैं है आस्रव भाई ।
आस्रव दुखकार घनेरे, बुधिवन्त तिन्हें निरवेरे ॥९॥

जिन पुण्य-पाप नहि कीना, आतम अनुभव चित दीना ।
तिन ही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके ॥१०॥

निज काल पाय विधि झरना, तासों निज काज न सरना ।
तप करि जो कर्म खपावै, सोई शिवसुख दरसावै ॥११॥

किनहूँ न कर्यो न धरै को, षट्ट्रव्यमयी न हरै को ।
सो लोक माँहि बिन समता, दुख सहै जीव नित भ्रमता ॥१२॥

अन्तिम ग्रीवक-लौं की हद, पायो अनन्त बिरियाँ पद ।
पर सम्यग्ज्ञान न लाध्यौ, दुर्लभ निज में मुनि साध्यौ ॥१३॥

जे भाव मोह-तैं न्यारे, दृग ज्ञान व्रतादिक सारे ।
सो धर्म जबै जिय धारै, तब ही सुख अचल निहारै ॥१४॥

सो धर्म मुनिन करि धरिये, तिनकी करतूति उचरिये ।
ताको सुनिये भवि प्रानी, अपनी अनुभूति पिछानी ॥१५॥

छठी ढाल
(हरिगीतिका)

षट्काय जीव न हनन-तैं, सब विधि दरव हिंसा टरी ।
रागादि भाव निवारि-तैं, हिंसा न भावित अवतरी ॥

जिनके न लेश मृषा न जल, मृण हू बिना दीयौ गहै ।
अठदश सहस विधि शीलधर चिद्ब्रह्म में नित रमि रहै ॥१॥

अन्तर चतुर्दश भेद बाहिर, संग दशधा-तैं टलैं ।
परमाद तजि चउ कर मही लखि, समिति ईर्या तैं चलैं ॥
जग सुहितकर सब अहितहर, श्रुति सुखद सब संशय हरैं ।
भ्रम-रोग हर जिनके वचन, मुख-चन्द्र-तैं अमृत झरैं ॥२॥

छ्यालीस दोष बिना सुकुल, श्रावक तणे घर अशन को ।
लें तप बढ़ावन हेत नहिं तन, पोषते तजि रसन को ॥
शुचि ज्ञान संज्ञम उपकरण, लखि कैं गहैं लखि कैं धरैं ।
निर्जन्तु थान विलोकि तन मल, मूत्र श्लेषम परिहरैं ॥३॥

सम्यक प्रकार निरोधि मन-वच-काय आतम ध्यावते ।
तिन सुथिर-मुद्रा देखि मृगगन, उपल खाज खुजावते ॥
रस रूप गन्ध तथा फरस अरु, शब्द शुभ असुहावने ।
तिन में न राग विरोध, पंचेन्द्रिय जयन पद पावने ॥४॥

समता सम्हारैं थुति उचारैं, वन्दना जिनदेव को ।
नित करैं, श्रुतिरति करैं प्रतिक्रम तजैं तन अहमेव को ॥
जिनके न न्हौन न दन्तधोवन, लेश अम्बर आवरन ।
भू माँहिं पिछली रयनि में, कछु शयन एकाशन करन ॥५॥

इक बार दिन में लें अहार, खड़े अलप निज-पान में ।
कचलोंच करत न डरत परिषह-सों लगे निजध्यान में ॥
अरि-मित्र महल-मसान कंचन-काँच निन्दन-थुतिकरन ।
अर्धावितारन असि-प्रहारन, में सदा समता धरन ॥६॥

तप तपैं द्वादश, धरैं वृष दश, रतनत्रय सेवैं सदा ।
मुनि साथ में वा एक विचरैं, चहैं नहिं भवसुख कदा ॥
यों है सकलसंज्ञम चरित, सुनिये स्वरूपाचरन अब ।
जिस होत प्रगटै आपनी निधि, मिटै पर की प्रवृत्ति सब ॥७॥

जिन परम पैनी सुबुधि छैनी, डारि अन्तर भेदिया ।
वरणादि अरु रागादितैं, निज भाव को न्यारा किया ॥
निज माँहि निज के हेतु, निज कर आपको आपै गह्यो ।
गुन गुनी ज्ञाता ज्ञान झेय, मँझार कछु भेद न रह्यो ॥८॥

जहाँ ध्यान ध्याता ध्येय को, न विकल्प वच भेद न जहाँ ।
चिद्भाव कर्म चिदेश करता, चेतना किरिया तहाँ ॥
तीनों अभिन्न अखिन्न शुध, उपयोग की निश्चल दशा ।
प्रगटी, जहाँ दृग-ज्ञान-ब्रत, ये तीनधा एकै लशा ॥९॥

परमान-नय-निक्षेप कौ, न उद्योत अनुभव में दिखै ।
दृग-ज्ञान-सुख-बलमय सदा, नहि आन भाव जु मो विखै ॥
मैं साध्यसाधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनि-तैं ।
चितपिण्ड चण्ड अखण्ड सुगुन-करण्ड च्युत पुनि कलनि-तैं ॥१०॥

यों चिन्त्य निज में थिर भये, तिन अकथ जो आनन्द लह्यो ।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा, अहमिन्द्र के नाहीं कह्यो ॥
तब ही शुकल ध्यानाग्नि करि चउधाति-विधि-कानन दह्यो ।
सब लख्यौ केवलज्ञान करि, भवि लोक को शिवमग कह्यो ॥११॥

पुनि घाति शेष अधाति-विधि छिन माँहि अष्टम भू बसैं ।
वसु-कर्म विनशै सुगुण वसु, सम्यक्त्व आदिक सब लसैं ॥
संसार खार अपार, पारावार तरि तीरहि गये ।
अविकार अकल अरूप शुध, चिद्रूप अविनाशी भये ॥१२॥

निज माँहि लोक अलोक, गुण-परजाय प्रतिबिम्बित थये ।
रहि हैं अनन्तानन्त काल, यथा तथा शिव परिणये ॥
धनि धन्य हैं जे जीव नरभव, पाय यह कारज किया ।
तिन ही अनादि भ्रमन पंच प्रकार, तजि वर सुख लिया ॥१३॥

मुख्योपचार दुभेद यों, बड़भागि रत्नत्रय धरैं ।
अरु धरेंगे ते शिव लहैं, तिन, सुजस-जल जग-मल हरैं ॥
इमि जानि, आलस हानि, साहस ठानि यह सिख आदरो ।
जब-लैं न रोग जरा गहै, तब-लैं झटिति निज हित करो ॥१४॥

यह राग-आग दहै सदा, तातैं समामृत सेइये ।
चिर भजे विषय-कषाय अब तो, त्याग निजपद बेइये ॥
कहा रच्यौ पर-पद में, न तेरो पद यहै, क्यों दुख सहै ।
अब ‘दौल’ होउ सुखी, स्वपद रचि, दाव मत चूकौ यहै ॥१५॥

दोहा

इक नव वसु इक वर्ष की, तीज शुकल वैशाख ।
कर्यो तत्त्व उपदेश यह, लखि ‘बुधजन’ की भाख ॥१॥
लघुधी तथा प्रमादतैं, शब्द अर्थ की भूल ।
सुधी सुधार पढ़ो सदा, जो पावो भवकूल ॥२॥



भक्तामर स्तोत्र (भाषा)

अनुवादक पं. हेमराज

दोहा

आदिपुरुष आदीश जिन, आदि सुविधि करतार ।

धरम-धुरंधर परमगुरु, नमों आदि अवतार ॥

चौपई (१५ मात्रा)

सुर-नत-मुकुट रतन-छवि करैं, अंतर पाप-तिमिर सब हरैं ।
जिनपद वन्दों मन वच काय, भव-जल-पतित-उधरन-सहाय ॥१॥
श्रुत-परग इंद्रादिक देव, जाकी धुति कीनी कर सेव ।
शब्द मनोहर अरथ विशाल, तिस प्रभु की वरनों गुन-माल ॥२॥

विबुध-वंद्य-पद मैं मतिहीन, हो निलज्ज थुति-मनसा कीन ।
 जल-प्रतिबिंब बुद्ध को गहै, शशि-मंडल बालक ही चहै ॥३॥

गुन-समुद्र तुम गुन अविकार, कहत न सुर-गुरु पावैं पार ।
 प्रलय-पवन-उद्धत जल-जन्तु, जलधि तिरै को भुज बलवन्तु ॥४॥

सो मैं शक्तिहीन थुति करूँ, भक्ति-भाव-वश कछु नहि डरूँ ।
 ज्यों मृगि निज-सुत पालन हेत, मृगपति सन्मुख जाय अचेत ॥५॥

मैं शठ सुधी हँसन को धाम, मुझ तव भक्ति बुलावै राम ।
 ज्यों पिक अंब-कली परभाव, मधु-ऋतु मधुर करै आराव ॥६॥

तुम जस जंपत जन छिनमाँहि, जनम-जनम के पाप नशाहि ।
 ज्यों रवि उगै फटै ततकाल, अलिवत नील निशा-तम-जाल ॥७॥

तव प्रभावतैं कहूँ विचार, होसी यह थुति जन-मन-हार ।
 ज्यों जल कमलपत्र-पै परै, मुक्ताफल की दुति विस्तरै ॥८॥

तुम गुन-महिमा हत-दुख-दोष, सो तो दूर रहो सुख-पोष ।
 पाप-विनाशक है तुम नाम, कमल-विकाशी ज्यों रवि-धाम ॥९॥

नहि अचंभ जो होहि तुरन्त, तुमसे तुम गुण वरणत सन्त ।
 जो अधीन को आप समान, करै न सो निंदित धनवान ॥१०॥

इकट्क जन तुमको अविलोय, अवर-विषैं रति करै न सोय ।
 को करि क्षीर-जलधि जल पान, क्षार नीर पीवै मतिमान ॥११॥

प्रभु तुम वीतराग गुण-लीन, जिन परमाणु देह तुम कीन ।
 हैं तितने ही ते परमानु, यातैं तुम सम रूप न आनु ॥१२॥

कहूँ तुम मुख अनुपम अविकार, सुर-नर-नाग-नयन-मनहार ।
 कहाँ चन्द्र-मण्डल-सकलंक, दिन मैं ढाक-पत्र सम रंक ॥१३॥

पूरन चन्द्र-ज्योति छबिवंत, तुम गुन तीन जगत लंघंत ।
 एक नाथ त्रिभुवन आधार, तिन विचरत को करै निवार ॥१४॥

जो सुर-तिय विभ्रम आरम्भ, मन न डिग्यो तुम तो न अचंभ ।
 अचल चलावै प्रलय समीर, मेरु-शिखर डगमगै न धीर ॥१५॥

धूमरहित बाती गत-नेह, परकाशै त्रिभुवन-धर एह ।
 वात-गम्य नाहीं परचण्ड, अपर दीप तुम बलो अखंड ॥१६॥

छिपहु न लुपहु राहु की छांहि, जग परकाशक हो छिनमाँहि ।
 घन अनवर्त दाह विनिवार, रविन्तैं अधिक धरो गुणसार ॥१७॥

सदा उदित विदलित मनमोह, विघटित मेघ राहु अविरोह ।
 तुम मुख-कमल अपूरब चन्द, जगत-विकाशी जोति अमंद ॥१८॥

निश-दिन शशि-रवि को नहि काम, तुम मुखचन्द हरै तम धाम ।
 जो स्वभावतैं उपजै नाज, सजल मेघ-तैं कौनहु काज ॥१९॥

जो सुबोध सोहै तुम माहिं, हरि-हर आदिक में सो नाहि ।
जो दुति महा-रतन में होय, काच-खंड पावै नहिं सोय ॥२०॥

नाराचछन्द

सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया ।
स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया ॥
कछू न तोहि देखके जहाँ तुही विशेखिया ।
मनोग चित्त-चोर और भूलहू न पेखिया ॥२१॥

अनेक पुत्रवंतिनी नितंबिनी सपूत हैं ।
न तो समान पुत्र और मातृत्वं प्रसूत हैं ॥
दिशा धरंत तारिका अनेक कोटि को गिनै ।
दिनेश तेजवंत एक पूर्व ही दिशा जनै ॥२२॥

पुरान हो पुमान हो पुनीत पुण्यवान हो ।
कहैं मुनीश! अंधकार-नाश को सुभान हो ॥
महंत तोहि जानके न होय वश्य कालके ।
न और मोहि मोखपंथ देय तोहि टालके ॥२३॥

अनन्त नित्य चित्त की अगम्य रम्य आदि हो ।
असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो ॥
महेश! कामकेतु योग ईश योग ज्ञान हो ।
अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संतमान हो ॥२४॥

तु ही जिनेश! बुद्ध है सुबुद्धि के प्रमानतैं ।
तु ही जिनेश! शंकरो जगत्रये विधानतैं ॥
तु ही विधात है सही सुमोखपंथ धारतैं ।
नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थ के विचारतैं ॥२५॥

नमो करूँ जिनेश! तोहि आपदा निवार हो ।
नमो करूँ सुभूरि भूमि-लोक के सिंगार हो ॥
नमो करूँ भवाद्यनीर-राशि-शोष-हेतु हो ।
नमो करूँ महेश! तोहि मोखपंथ देतु हो ॥२६॥

चौपैर्ड १५ मात्रा

तुम जिन पूरन गुन-गन भरे, दोष गर्वकरि तुम परिहरे ।
और देव-गण आश्रय पाय, स्वप्न न देखे तुम फिर आय ॥२७॥

तरु अशोक-तल किरन उदार, तुम तन शोभित है अविकार ।
मेघ निकट ज्यों तेज फुरंत, दिनकर दिपै तिमिर निहनंत ॥२८॥

सिंहासन मणि-किरण-विचित्र, तापर कंचन-वरन पवित्र ।
तुम तन शोभित किरन-विथार, ज्यों उदयाचल रवि तम-हार ॥२९॥

कुंद-पुहुप-सित-चमर ढुरंत, कनक-वरन तुम तन शोभंत ।
ज्यों सुमेरु-तट निर्मल कांति, झरना झरै नीर उमगांति ॥३०॥
ऊँचे रहें सूर दुति लोप, तीन छत्र तुम दिपैं अगोप ।
तीन लोक की प्रभुता कहैं, मोती-झालर सों छबि लहैं ॥३१॥

दुंदुभि-शब्द गहर गंभीर, चहुँ दिशि होय तुम्हारै धीर ।
 त्रिभुवन-जन शिव-संगम करै, मानूँ जय जय रव उच्चरै ॥३२॥
 मंद पवन गंधोदक इष्ट, विविध कल्पतरु पुहुप-सुवृष्ट ।
 देव करैं विकसित दल सार, मानों द्विज-पंकति अवतार ॥३३॥
 तुम तन-भामंडल जिनचन्द, सब दुतिवंत करत है मन्द ।
 कोटि शंख रवि तेज छिपाय, शशि निर्मल निशि करे अछाय ॥३४॥
 स्वर्ग-मोख-मारग-संकेत, परम-धरम उपदेशन हेत ।
 दिव्य वचन तुम खिरें अगाध, सब भाषा-गर्भित हित साध ॥३५॥

दोहा

विकसित-सुवरन-कमल-दुति, नख-दुति मिलि चमकाहिं ।
 तुम पद पदवी जहुँ धरो, तहुँ सुर कमल रचाहिं ॥३६॥
 ऐसी महिमा तुम विषै, और धरै नहिं कोय ।
 सूरज में जो जोत है, नहिं तारा-गण होय ॥३७॥

षट्पद (छप्पय)

मद-अवलिप्त-कपोल-मूल, अलि-कुल झंकारै ।
 तिन सुन शब्द प्रचंड, क्रोध उद्घत अति धारै ॥
 काल-वरन विकराल, कालवत सन्मुख आवै ।
 ऐरावत सो प्रबल, सकल जन भय उपजावै ॥
 देखि गयंद न भय करै, तुम पद-महिमा लीन ।
 विपति-रहित संपति-सहित, वरतैं भक्त अदीन ॥३८॥

 अति मद-मत्त-गयंद, कुंभ-थल नखन विदारै ।
 मोती रक्त समेत, डारि भूतल सिंगारै ॥
 बांकी दाढ़ विशाल, वदन में रसना लोलै ।
 भीम भयानक रूप, देख जन थरहर डोलै ॥
 ऐसे मृग-पति पग-तलैं, जो नर आयो होय ।
 शरण गये तुम चरण की, बाधा करै न सोय ॥३९॥

प्रलय-पवनकर उठी आग जो तास पटंतर ।
 बमैं फुलिंग शिखा उतंग पर जलैं निरंतर ॥
 जगत समस्त निगल्ल भस्म कर दैगी मानों ।
 तडतडाट दव-अनल जोर चहुँ-दिशा उठानों ॥
 सो इक छिन में उपशमै नाम-नीर तुम लेत ।
 होय सरोवर परिनमै विकसित कमल समेत ॥४०॥

कोकिल-कंठ-समान श्याम-तन क्रोध जलन्ता ।
 रक्त-नयन फुंकार मार विष-कण उगलंता ॥
 फण को ऊंचो करे वेग ही सन्मुख धाया ।
 तव जन होय निशंक देख फणपति को आया ॥
 जो चापै निज पगतलैं व्यापै विष न लगार ।
 नाग-दमनि तुम नाम की है जिनके आधार ॥४१॥

जिस रनमाँहि भयानक रव कर रहे तुरंगम ।
घन से गज गरजाहि मत्त मानों गिरि जंगम ॥
अति कोलाहल माँहि बात जहँ नाहिं सुनीजै ।
राजन को परचंड, देख बल धीरज छीजै ॥
नाथ तिहारे नामतैं अघ छिनमाँहिं पलाय ।
ज्यों दिनकर परकाशतैं अन्धकार विनशाय ॥४२॥

मारै जहाँ गयंद कुंभ हथियार विदारै ।
उमगै रुधिर प्रवाह वेग जलसम विस्तारै ॥
होय तिरन असमर्थ महाजोधा बलपूरे ।
तिस रन में जिन तोर भक्त जे हैं नर सूरे ॥
दुर्ज्य अरिकुल जीत के जय पावै निकलंक ।
तुम पद पंकज मन बसैं ते नर सदा निशंक ॥४३॥

नक्र चक्र मगरादि मच्छकरि भय उपजावै ।
जामैं बड़वा अग्नि दाहतैं नीर जलावै ॥
पार न पावैं जास थाह नहिं लहिये जाकी ।
गरजै अतिगंभीर, लहर की गिनति न ताकी ॥
सुख सों तिरैं समुद्र को, जे तुम गुन सुमराहिं ।
लोल कलोलन के शिखर, पार यान ले जाहिं ॥४४॥

महा जलोदर रोग, भार पीड़ित नर जे हैं ।
वात पित्त कफ कुष्ट, आदि जो रोग गहै हैं ॥
सोचत रहें उदास, नाहिं जीवन की आशा ।
अति घिनावनी देह, धरैं दुर्गंध निवासा ॥
तुम पद-पंकज-धूल को, जो लावैं निज अंग ।
ते नीरोग शरीर लहि, छिन में होय अनंग ॥४५॥

पांव कंठते जकर बांध, सांकल अति भारी ।
गाढ़ी बेड़ी पैर माँहि, जिन जांघ बिदारी ॥
भूख प्यास चिंता शरीर दुख जे विललाने ।
सरन नाहिं जिन कोय भूपके बंदीखाने ॥
तुम सुमरत स्वयमेव ही बंधन सब खुल जाहि ।
छिन में ते संपति लहैं, चिंता भय विनसाहि ॥४६॥

महामत्त गजराज और मृगराज दवानल ।
फणपति रण परचंड नीरनिधि रोग महाबल ॥
बंधन ये भय आठ डरपकर मानों नाशै ।
तुम सुमरत छिनमाहि अभय थानक परकाशै ॥
इस अपार संसार में शरन नाहिं प्रभु कोय ।
यातैं तुम पदभक्त को भक्ति सहाई होय ॥४७॥

यह गुनमाल विशाल नाथ तुम गुनन सँवारी ।
 विविध वर्णमय पुहुप ग्रूथ मैं भक्ति विथारी ॥
 जे नर पहिरें कंठ भावना मन में भावैं ।
 'मानतुंग' ते निजाधीन शिवलक्ष्मी पावैं ॥

दोहा

भाषा भक्तामर कियो, हेमराज हित हेत ।
 जे नर पढ़ें सुभाव सों, ते पावैं शिवखेत ॥४८॥

~~~

## स्वयम्भू-स्तोत्र (भाषा)

पं. द्यानतराय

चौपृश (१५ मात्रा)

राजविषें जुगलनि सुख कियो, राज त्याग भवि शिवपद लियो ।  
 स्वयम्भोध स्वयम्भू भगवान, वन्दौं आदिनाथ गुणखान ॥१॥  
 इन्द्र छीर-सागर-जल लाय, मेरु न्हवाये गाय बजाय ।  
 मदन-विनाशक सुख करतार, वन्दौं अजित अजित-पदकार ॥२॥  
 शुकलध्यान करि करम विनाशि, धाति-अधाति सकल दुखराशि ।  
 लह्यो मुक्तिपद सुख अविकार, वन्दौं सम्भव भव-दुख टार ॥३॥  
 माता पच्छिम रयन मँझार, सुपने सोलह देखे सार ।  
 भूप पूछि फल सुनि हरषाय, वन्दौं अभिनन्दन मन लाय ॥४॥  
 सब कुवादवादी सरदार, जीते स्याद्वाद-धुनि धार ।  
 जैन-धर्म-परकाशक स्वाम, सुमतिदेव-पद करहुँ प्रनाम ॥५॥  
 गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगर-शोभा अधिकाय ।  
 बरसे रतन पंचदश मास, नमों पदमप्रभ सुख की रास ॥६॥  
 इन्द्र फनिन्द नरिन्द्र त्रिकाल, वानी सुनि-सुनि होहिं खुस्याल ।  
 द्वादश सभा ज्ञान-दातार, नमों सुपारसनाथ निहार ॥७॥  
 सुगुन छियालिस हैं तुम माँहि, दोष अठारह कोऊ नाहि ।  
 मोह-महातम-नाशक दीप, नमों चन्द्रप्रभ राख समीप ॥८॥  
 द्वादशविध तप करम विनाश, तेरह भेद चरित परकाश ।  
 निज अनिच्छ भवि-इच्छक-दान, वन्दौं पुहुपदन्त मन आन ॥९॥  
 भवि-सुखदाय सुरग तैं आय, दशविध धरम कह्यो जिनराय ।  
 आप समान सबनि सुख देह, वन्दौं शीतल धर्म-सनेह ॥१०॥  
 समता-सुधा कोप-विष-नाश, द्वादशांग वानी परकाश ।  
 चार-संघ-आनंद-दातार, नमों श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥११॥  
 रतनत्रय चिर मुकुट विशाल, शोभै कण्ठ सुगुन-मनि-माल ।  
 मुक्ति-नार-भरता भगवान, वासुपूज्य वन्दौं धर ध्यान ॥१२॥  
 परम समाधि-स्वरूप जिनेश, ज्ञानी ध्यानी हित-उपदेश ।  
 कर्म नाशि शिव-सुख-विलसन्त, वन्दौं विमलनाथ भगवन्त ॥१३॥

अन्तर-बाहिर परिग्रह डारि, परम दिग्म्बर-व्रत को धारि ।  
 सर्व-जीव हित-राह दिखाय, नमों अनन्त वचन-मनलाय ॥१४॥  
 सात तत्त्व पंचासतिकाय, अरथ नमों छ-दरब बहुभाय ।  
 लोक अलोक सकल परकाश, वन्दैं धर्मनाथ अविनाश ॥१५॥  
 पंचम चक्रवरति निधि-भोग, कामदेव द्वादशम मनोग ।  
 शान्तिकरन सोलम जिनराय, शान्तिनाथ वन्दैं हरखाय ॥१६॥  
 बहु थुति करे हरष नहिं होय, निन्दे दोष गहें नहिं कोय ।  
 शीलवान परब्रह्मस्वरूप, वन्दैं कुन्तुनाथ शिव-भूप ॥१७॥  
 द्वादश-गण पूजैं सुखदाय, थुति वन्दना करैं अधिकाय ।  
 जाकी निज-थुति कबहुँ न होय, वन्दैं अर-जिनवर पद दोय ॥१८॥  
 पर-भव रतनत्रय-अुनराग, इह भव ब्याह-समय वैराग ।  
 बाल-ब्रह्म-पूरन-व्रत-धार, वन्दैं मल्लिनाथ जिनसार ॥१९॥  
 बिन उपदेश स्वयं वैराग, थुति लौकान्त करै पग लाग ।  
 नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहिं, वन्दैं मुनिसुव्रत व्रत देहिं ॥२०॥  
 श्रावक विद्यावन्त निहार, भगति-भाव-सौं दियो अहार ।  
 बरसी रतन-राशि ततकाल, वन्दैं नमि प्रभु दीन-दयाल ॥२१॥  
 सब जीवन की बन्दी छोर, राग-द्वेष द्वै बन्धन तोर ।  
 राजमति तजि शिव-तिय सों मिले, नेमिनाथ वन्दैं सुखनिले ॥२२॥  
 दैत्य कियो उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयो फनिधार ।  
 गयो कमठ शठ मुख कर श्याम, नमों मेरुसम पारस स्वाम ॥२३॥  
 भव-सागर-तैं जीव अपार, धरम-पोत में धरे निहार ।  
 डूबत काढ़े दया विचार, वर्धमान वन्दैं बहु बार ॥२४॥

दोहा

चौबीसौं पद कमल जुग, वन्दैं मन-वच-काय ।  
 ‘द्यानत’ पढ़े सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥२५॥

~~~~~

निर्वाण-काण्ड (भाषा)

भैया भगवतीदास

दोहा

वीतराग वन्दैं सदा, भाव सहित सिर-नाय ।
 कहुँ काण्ड निर्वाण की, भाषा सुगम बनाय ॥
 चौपाई (१५ मात्रा)
 अष्टापद आदीश्वर स्वामि, वासुपूज्य चम्पापुरि नामि ।
 नेमिनाथ स्वामी गिरनार, वन्दैं भाव-भगति उर धार ॥१॥
 चरमतीर्थकर चरमशरीर, पावापुरि स्वामी महावीर ।
 शिखर सम्मेद जिनेसुर बीस, भावसहित वन्दैं निश-दीस ॥२॥

वरदत्तराय रु इन्द मुनिन्द, सायरदत्त आदि गुणवृन्द ।
 नगर तारवर मुनि उठकोडि, वन्दौं भावसहित कर जोडि ॥३॥
 श्रीगिरनार शिखर विष्वात, कोडि बहतर अरु सौ सात ।
 शम्बु प्रद्युम्न कुमर द्वै भाय, अनिरुध आदि नमूँ तसु पाय ॥४॥
 रामचन्द्र के सुत द्वै वीर, लाडनरिन्द आदि गुणधीर ।
 पाँच कोडि मुनि मुक्ति मङ्घार, पावागिरि वन्दौं निरधार ॥५॥
 पाण्डव तीन द्रविड-राजान, आठ कोडि मुनि मुक्ति पयान ।
 श्रीशत्रुंजयगिरि के सीस, भावसहित वन्दौं निश-दीस ॥६॥
 जे बलभद्र मुक्ति में गये, आठ कोडि मुनि औरहु भये ।
 श्रीगजपन्थ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूँ तिहुँ काल ॥७॥
 राम हणू सुग्रीव सुडील, गव गवाख्य नील महानील ।
 कोडि निन्याणव मुक्ति पयान, तुंगीगिरि वन्दौं धरि ध्यान ॥८॥
 नंग-अनंग कुमार सुजान, पाँच कोडि अरु अर्ध प्रमान ।
 मुक्ति गये सोनागिरि-शीस, ते वन्दौं त्रिभुवनपति ईस ॥९॥
 रावण के सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवा-तट सार ।
 कोटि पंच अरु लाख पचास, ते वन्दौं धरि परम हुलास ॥१०॥
 रेवानदी सिद्धवरकूट, पश्चिम दिशा देह जहँ छूट ।
 द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठ कोडि वन्दौं भव-पार ॥११॥
 बड़वानी बड़नयर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग ।
 इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते वन्दौं भव-सायर-तर्ण ॥१२॥
 सुवरणभद्र आदि मुनि चार, पावागिरि-वर-शिखर मङ्घार ।
 चेलना-नदी-तीर के पास, मुक्ति गये वन्दौं नित तास ॥१३॥
 फलहोडी बड़गाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिरि रूप ।
 गुरुदत्तादि मुनीसुर जहाँ, मुक्ति गये वन्दौं नित तहाँ ॥१४॥
 बाल महाबाल मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय ।
 श्रीअष्टापद मुक्ति मङ्घार, ते वन्दौं नित सुरत सँभार ॥१५॥
 अचलापुर की दिश ईसान, तहाँ मेढगिरि नाम प्रधान ।
 साढ़े तीन कोडि मुनिराय, तिनके चरण नमूँ चित लाय ॥१६॥
 वंसस्थल वन के ढिग होय, पश्चिम दिशा कुन्धुगिरि सोय ।
 कुलभूषण दिशभूषण नाम, तिनके चरणनि करूँ प्रणाम ॥१७॥
 जसरथ राजा के सुत कहे, देश कलिंग पाँच सौ लहे ।
 कोटिशिला मुनि कोडि प्रमान, वन्दन करूँ जोरि जुगपान ॥१८॥
 समवसरण श्रीपाश्वर्जिनन्द, रेसिन्दीगिरि नयनानन्द ।
 वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते वन्दौं नित धरम-जिहाज ॥१९॥
 (मथुरापुर पवित्र उद्यान, जम्बूस्वामी जी निर्वान ।
 चरम केवली पंचमकाल, ते वन्दौं नित धरम जिहाज ॥)

तीन लोक के तीरथ जहाँ, नित-प्रति वन्दन कीजै तहाँ ।
 मन-वच-कायसहित सिर नाय, वन्दन करहिं भविक गुणगाय ॥२०॥
 संवत सतरह सौ इकताल, आश्विन सुदि दशमी सुविशाल ।
 ‘भैया’ वन्दन करहिं त्रिकाल, जय निर्वाणकाण्ड गुणमाल ॥२१॥

भावनाएँ

वैराग्य भावना

(कविवर भूधरदास)
 दोहा

बीज राख फल भोगवै, ज्यों किसान जग माँहिं ।
 त्यों चक्री नृप सुख करै, धर्म विसारै नाहिं ॥१॥
 जोगीरासा वा नरेन्द्र छन्द

इह विधि राज करै नरनायक, भोगै पुण्य विशालो ।
 सुख-सागर में रमत निरंतर, जात न जान्यो कालो ॥
 एक दिवस शुभ कर्म-संजोगे क्षेमंकर मुनि वंदे ।
 देखि शिरीगुरु के पदपंकज, लोचन अलि आनन्दे ॥२॥
 तीन प्रदक्षिण दे शिर नायो, कर पूजा थुति कीनी ।
 साधु समीप विनय कर बैठ्यो, चरनन में दिठि दीनी ॥
 गुरु उपदेश्यो धर्म-शिरोमणि, सुन राजा वैरागे ।
 राज रमा वनितादिक जे रस, ते रस बेरस लागे ॥३॥
 मुनि-सूरज कथनी किरणावलि लगत भरम बुधि भागी ।
 भव-तन-भोग स्वरूप विचार्यो, परम धरम अनुरागी ॥
 इह संसार महावन भीतर, भरमत ओर न आवै ।
 जामन-मरन-जरा-दव दाझै, जीव महादुख पावै ॥४॥

कबहूँ जाय नरक थिति भुंजै, छेदन भेदन भारी ।
 कबहूँ पशु परजाय धरै तहौं, वध बंधन भयकारी ॥
 सुरगति में परसंपति देखें, राग उदय दुख होई ।
 मानुष योनि अनेक विपत्तिमय, सर्व सुखी नहि कोई ॥५॥
 कोई इष्ट-वियोगी बिलखै, कोई अनिष्ट-संयोगी ।
 कोई दीन-दरिद्री विगूचै, कोई तन के रोगी ॥
 किसही घर कलिहारी नारी, कै वैरी सम भाई ।
 किसही के दुख बाहिर दीखें, किसही उर दुचिताई ॥६॥

कोई पुत्र बिना नित झूरै, होय मरै तब रोवै ।
 खोटी संतति सों दुख उपजै, क्यों प्राणी सुख सोवै ॥
 पुण्य उदय जिनके तिनको भी, नाहि सदा सुख साता ।
 यो जगवास जथारथ देखें, सब दीखै दुखदाता ॥७॥
 जो संसार-विषें सुख हो तौ, तीर्थझुर क्यों त्यागै ।
 काहे कों शिव साधन करते, संजम सों अनुरागै ॥

देह अपावन अथिर घिनावन, यामें सार न कोई ।
सागर के जल सौं शुचि कीजे, तो भी शुद्ध न होई॥८॥

सात कुधातुमई मल-मूरत, चर्म लपेटी सोहै ।
अंतर देखत या सम जग में, अवर अपावन को है? ॥
नव-मल-द्वार स्वर्वैं निशि-वासर, नाम लिये घिन आवै ।
व्याधि-उपाधि अनेक जहाँ तहाँ, कौन सुधी सुख पावै ॥९॥

पोषत तो दुख दोष करै अति, सोषत सुख उपजावै ।
दुर्जन-देह-स्वभाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावै ॥
राचन-जोग स्वरूप न याको, विरचन-जोग सही है ।
यह तन पाय महा तप कीजे, यामें सार यही है ॥१०॥

भोग बुरे भव रोग बढ़ावैं, वैरी हैं जग जी के ।
बेरस होहिं विपाक समय अति, सेवत लागें नीके ॥
वज्र अग्नि विष से विषधर से, ये अधिके दुखदाई ।
धर्म-रतन के चोर चपल अति, दुर्गति-पंथ सहाई ॥११॥

मोह-उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जानै ।
ज्यों कोई जन खाय धतुरा, सो सब कंचन मानै ॥
ज्यों ज्यों भोग संजोग मनोहर, मन-वांछित जन पावै ।
तृष्णा नागिन त्यों-त्यों डंके, लहर जहर की आवै ॥१२॥

मैं चक्रीपद पाय निरंतर, भोगे भोग घनेरे ।
तौ भी तनक भये नहि पूरन, भोग मनोरथ मेरे ॥
राजसमाज महा अघ-कारण, वैर बढ़ावन-हारा ।
वेश्यासम लछमी अति चंचल, याका कौन पत्यारा ॥१३॥
मोह महा-सिपु वैर विचार्यो, जग-जिय संकट डारे ।
घर-कारागृह वनिता बेड़ी, परिजन जन रखवारे ॥
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरण तप, ये जियके हितकारी ।
ये ही सार असार और सब, यह चक्री चित धारी ॥१४॥
छोड़े चौदह रत्न नवों निधि, अरु छोड़े संग साथी ।
कोटि अठारह घोड़े छोड़े, चौरासी लख हाथी ॥
इत्यादिक संपति बहुतेरी, जीरण-तृण सम त्यागी ।
नीति-विचार नियोगी सुत कों, राज दियो बड़भागी ॥१५॥
होय निशल्य अनेक नृपति संग, भूषण वसन उतारे ।
श्री गुरु चरण धरी जिनमुद्रा, पंच महाब्रत धारे ॥
धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धनि यह धीरज भारी ।
ऐसी संपत्ति छोड़ बसे वन, तिन पद धोक हमारी ॥१६॥

दोहा

परिग्रहपोट उतार सब, लीनो चारित पंथ ।

निज स्वभाव में थिर भये, वज्रनाभि निरग्रंथ ॥

बारह भावना

कविवर भूधरदास

दोहा

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार ।
 मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार ॥
 दल बल देवी देवता, मात-पिता परिवार ।
 मरती बिरियाँ जीव को, कोई न राखनहार ॥
 दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान ।
 कहूँ न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान ॥
 आप अकेला अवतरै, मरै अकेला होय ।
 यूँ कबहूँ इस जीव को, साथी सगा न कोय ॥
 जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपनो कोय ।
 घर सम्पत्ति पर, प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ॥
 दिपै चाम चादरमढ़ी, हाड़ पींजरा देह ।
 भीतर या सम जगत में, अवर नहीं धिन-गेह ॥

सोरठा

मोह-नींद के जोर, जगवासी घूमैं सदा ।
 कर्म-चोर चहुँ ओर, सरवस लूटैं सुध नहीं ॥
 सतगुरु देय जगाय, मोह-नींद जब उपशमै ।
 तब कछु बनहिं उपाय, कर्म-चोर आवत रुकैं ॥

दोहा

ज्ञान-दीप तप-तेल भर, घर शोधै भ्रम छोर ।
 या विध बिन निकसैं नहीं, पैठे पूरब चोर ॥
 पंच महाब्रत संचरण, समिति पंच परकार ।
 प्रबल पंच इन्द्री-विजय, धार निर्जरा सार ॥
 चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष-संठान ।
 तामें जीव अनादि तैं, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥
 धन कन कंचन राजसुख, सबहिं सुलभकर जान ।
 दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान ॥
 जाँचे सुर-तरु देय सुख, चिन्तत चिन्ता-रैन ।
 बिन जाँचै बिन चिन्तये, धर्म सकल सुख दैन ॥

~~~~~

## बारह भावना

### मंगतराय

दोहा

वंदूँ श्री अरहंत-पद, वीतराग-विज्ञान ।  
 वरणूँ बारह भावना, जगजीवन हित जान ॥१॥

### विष्णुपद छन्द

कहाँ गये चक्री जिन जीता, भरत खण्ड सारा ।  
 कहाँ गये वह राम-रु-लक्ष्मण, जिन रावण मारा ॥  
 कहाँ कृष्ण रुक्मणि सतभामा, अरु संपति सगरी ।  
 कहाँ गये वह रंगमहल अरु, सुवरन की नगरी ॥२॥  
 नहीं रहे वह लोभी कौरव, जूझ मरे रन में ।  
 गये राज तज पांडव वन को, अग्नि लगी तन में ॥  
 मोह-नींद से उठ रे चेतन, तुझे जगावन को ।  
 हो दयाल उपदेश करें गुरु, बारह भावन को ॥३॥

### १. अथिर भावना

सूरज चाँद छिपै निकलै ऋतु, फिर फिर कर आवै ।  
 प्यारी आयु ऐसी बीतै, पता नहीं पावै ॥  
 पर्वत-पतित नदी-सरिता-जल बहकर नहि हट्टा ।  
 स्वास चलत यों घटै काठ ज्यों, आरे सों कट्टा ॥४॥  
 ओस-बूँद ज्यों गलै धूप में, वा अंजुलि पानी ।  
 छिन-छिन यौवन छीन होत है क्या समझै प्रानी ॥  
 इंद्रजाल आकाशनगर सम जग-संपति सारी ।  
 अथिर रूप संसार विचारो सब नर अरु नारी ॥५॥

### २. अशरण भावना

काल-सिंह ने मृग-चेतन को धेरा भव-वन में ।  
 नहीं बचावनहारा कोई यों समझो मन में ॥  
 मंत्र-तंत्र सेना धन-संपति, राज-पाट छूटै ।  
 वश नहि चलता काल लुटेरा, काय-नगरि लूटै ॥६॥  
 चक्ररत्न हलधर सा भाई, काम नहीं आया ।  
 एक तीर के लगत कृष्ण की विनश गई काया ॥  
 देव धर्म गुरु शरण जगत में, और नहीं कोई ।  
 भ्रम से फिरै भटकता चेतन, यूँ ही उमर खोई ॥७॥

### ३. संसार भावना

जनम-मरन अरु जरा-रोग से, सदा दुखी रहता ।  
 द्रव्य-क्षेत्र अरु काल-भाव-भव-परिवर्तन सहता ॥  
 छेदन-भेदन नरक पशुगति, वध-बंधन सहना ।  
 राग-उदय से दुख सुरगति में, कहाँ सुखी रहना ॥८॥  
 भोगि पुण्य फल हो इक इंद्री, क्या इसमें लाली ।  
 कुतवाली दिनचार वही फिर, खुरपा अरु जाली ॥  
 मानुष-जन्म अनेक विपत्तिमय, कहाँ न सुख देखा ।  
 पंचम गति सुख मिलै शुभाशुभ को मेटो लेखा ॥९॥

### ४. एकत्व भावना

जनमै मरै अकेला चेतन, सुख-दुख का भोगी ।  
 और किसी का क्या इक दिन, यह देह जुदी होगी ॥

कमला चलत न पैड जाय, मरघट तक परिवारा ।  
 अपने-अपने सुख को रोवें, पिता पुत्र दारा ॥१०॥  
 ज्यों मेले में पंथीजन मिल नेह फिरैं धरते ।  
 ज्यों तरुवर पै रैन बसेरा पंछी आ करते ॥  
 कोस कोई दो कोस कोई फिर थक-थक कर हारें ।  
 जाय अकेला हंस संग में, कोई न पर मारें ॥११॥

#### ५. अन्यत्व भावना

मोह-रूप मृग-तृष्णा जग में, मिथ्या जल चमकै ।  
 मृग चेतन नित भ्रम में उठ-उठ, दौड़ें थक-थककै ॥  
 जल नहिं पावै प्राण गमावै, भटक-भटक मरता ।  
 वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नहीं करता ॥१२॥

तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड़ तू ज्ञानी ।  
 मिले अनादि यतनतैं बिछुड़ै, ज्यों पय अरु पानी ॥  
 रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेद ज्ञान करना ।  
 जौ-लों पौरुष थकै न तौ-लों उद्यम-सों चरना ॥१३॥

#### ६. अशुचि भावना

तू नित पोखै यह सूखे ज्यों, धोवै त्यों मैली ।  
 निश-दिन करै उपाय देह का, रोग-दशा फैली ॥  
 मात-पिता रज-वीरज मिलकर, बनी देह तेरी ।  
 मांस हाड नश लहु राध की, प्रगट व्याधि धेरी ॥१४॥

काना पौँडा पड़ा हाथ यह चूसै तो रोवै ।  
 फलै अनंत जु धर्म ध्यान की, भूमि-विषें बोवै ॥  
 केसर चंदन पुष्प सुगंधित, वस्तु देख सारी ।  
 देह परसतें होय अपावन, निशदिन मल जारी ॥१५॥

#### ७. आस्रव भावना

ज्यों सरजल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मन को ।  
 दर्वित जीव प्रदेश गै है जब, पुद्गल भरमन को ॥  
 भावित आस्रव भाव शुभाशुभ, निशदिन चेतन को ।  
 पाप-पुण्य के दोनों करता, कारण बंधन को ॥१६॥

पन-मिथ्यात योग-पंद्रह द्वादश-अविरति जानो ।  
 पंच रु बीस कषाय मिले सब, सत्तावन मानो ॥  
 मोह-भाव की ममता टारें, पर परिणति खोते ।  
 करैं मोख का यतन निरास्रव, ज्ञानी जन होते ॥१७॥

#### ८. संवर भावना

ज्यों मोरी में डाट लगावै, तब जल रुक जाता ।  
 त्यों आस्रव को रोकै संवर, क्यों नहि मन लाता ॥  
 पंच महाव्रत समिति गुप्तिकर वचन-काय-मन को ।  
 दशविध-धर्म परीषह-बाइस, बारह भावन को ॥१८॥

यह सब भाव सत्तावन मिलकर, आस्त्रव को खोते ।  
सुपन दशा से जागे चेतन, कहाँ पड़े सोते ॥  
भाव शुभाशुभ रहित शुद्ध-भावन संवर पावै ।  
डॉट लगत यह नाव पड़ी मङ्गधार पार जावै ॥१९॥

### ९. निर्जरा भावना

ज्यों सरवर जल रुका सूखता, तपन पड़े भारी ।  
संवर रोकै कर्म, निर्जरा है सोखनहारी ॥  
उदयभोग सविपाक समय, पक जाय आम डाली ।  
दूजी है अविपाक पकावै, पालविषै माली ॥२०॥

पहली सबकें होय नहीं कुछ, सरै काज तेरा ।  
दूजी करै जू उद्यम करकै, मिटै जगत फेरा ॥  
संवर सहित करो तप प्रानी, मिलै मुकत रानी ।  
इस दुलहिन की यही सहेली, जानै सब ज्ञानी ॥२१॥

### १०. लोकभावना

लोक अलोक अकाश माँहि थिर, निराधार जानो ।  
पुरुषरूप कर-कटी भये षट्-द्रव्यनसों मानो ॥  
इसका कोई न करता हरता, अमिट अनादी है ।  
जीव रु पुद्गल नाचै यामै, कर्म उपाधी है ॥२२॥

पाप-पुण्य सों जीव जगत में, नित सुख-दुख भरता ।  
अपनी करनी आप भरै शिर, औरन के धरता ॥  
मोह कर्म को नाश, मेटकर सब जग की आसा ।  
निज पद में थिर होय लोक के, शीश करो वासा ॥२३॥

### ११. बोधि-दुर्लभभावना

दुर्लभ है निगोद से थावर, अरु त्रसगति पानी ।  
नरकाया को सुरपति तरसै, सो दुर्लभ प्रानी ॥  
उत्तम देश सुसंगति दुर्लभ, श्रावक कुल पाना ।  
दुर्लभ सम्यक् दुर्लभ संयम, पंचम गुणठाना ॥२४॥

दुर्लभ रत्नत्रय आराधन दीक्षा का धरना ।  
दुर्लभ मुनिवर के ब्रत पालन, शुद्ध भाव करना ॥  
दुर्लभ से दुर्लभ है चेतन, बोधि ज्ञान पावै ।  
पाकर केवलज्ञान नहीं फिर, इस भव में आवै ॥२५॥

### १२. धर्मभावना

एकान्तवाद के धारी जग में दर्शन बहुतेरे ।  
कल्पित नाना युक्ति बनाकर ज्ञान हरें मेरे ॥  
हो सुछन्द सब पाप करें सिर करता के लावैं ।  
कोई छिनक कोई करता से, जग में भटकावैं ॥२६॥

वीतराग सर्वज्ञ दोष बिन, श्रीजिन की वानी ।  
सप्त तत्व का वर्णन जामें, सबको सुखदानी ॥  
इनका चिंतवन बार-बार कर, श्रद्धा उर धरना ।  
'मंगत' इसी जतन तैं इक दिन, भवसागर तरना ॥२७॥

## सामायिक पाठ

### भावना बत्तीसी

प्रेम भाव हो सब जीवों से, गुणी जनों में हर्ष प्रभो ।  
करुणा स्रोत बहे दुखियों पर, दुर्जन में मध्यस्थ विभो ॥१॥  
यह अनन्त बल शील आत्मा, हो शरीर से भिन्न प्रभो ।  
ज्यों होती तलवार म्यान से, वह अनन्त बल दो मुझको ॥२॥  
सुख-दुख बैरी-बन्धुवर्ग में काँच कनक में समता हो ।  
वन-उपवन प्रासाद कुटी में, नहीं खेद नहि ममता हो ॥३॥  
जिस सुन्दरतम पथ पर चलकर, जीते मोह मान मन्मथ ।  
वह सुन्दर पथ ही प्रभु मेरा, बना रहे अनुशीलन पथ ॥४॥  
एकेन्द्रिय आदिक प्राणी की, यदि मैंने हिंसा की हो ।  
शुद्ध हृदय से कहता हूँ वह, निष्फल हो दुष्कृत्य प्रभो ॥५॥  
मोक्षमार्ग प्रतिकूल प्रवर्तन, जो कुछ किया कषायों से ।  
विपथ गमन सब कालुष मेरे, मिट जावें सद्भावों से ॥६॥  
चतुर वैद्य विष विक्षत करता, त्यों प्रभु! मैं भी आदि उपान्त ।  
अपनी निन्दा आलोचन से, करता हूँ पापों को शान्त ॥७॥  
सत्य अहिंसादिक ब्रत में भी, मैंने हृदय मलीन किया ।  
ब्रत विपरीत प्रवर्तन करके, शीलाचरण विलीन किया ॥८॥  
कभी वासना की सरिता का, गहन सलिल मुझ पर छाया ।  
पी-पीकर विषयों की मदिरा, मुझमें पागलपन आया ॥९॥  
मैंने छली और मायावी, हो असत्य आचरण किया ।  
परनिन्दा गाली चुगली जो, मुँह पर आया वमन किया ॥१०॥  
निरभिमान उज्ज्वल मानस हो, सदा सत्य का ध्यान रहे ।  
निर्मल जल की सरिता सदृश, हिय में निर्मल ज्ञान बहे ॥११॥  
मुनि चक्री शक्री के हिय में, जिस अनन्त का ध्यान रहे ।  
गाते वेद पुराण जिसे वह, परम देव मम हृदय रहे ॥१२॥  
दर्शन-ज्ञानस्वभावी जिसने, सब विकार ही वमन किये ।  
परम ध्यान गोचर परमात्म, परम देव मम हृदय रहे ॥१३॥  
जो भव-दुख का विघ्नसक है, विश्व विलोकी जिसका ज्ञान ।  
योगी जन के ध्यान गम्य वह, बसे हृदय में देव महान ॥१४॥  
मुक्तिमार्ग का दिग्दर्शक है, जनम-मरण से परम अतीत ।  
निष्कलंक त्रैलोक्यदर्शी वह, देव रहे मम हृदय समीप ॥१५॥

निखिल विश्व के वशीकरण वे, राग रहे न द्वेष रहे ।  
 शुद्ध अतीन्द्रिय ज्ञानस्वरूपी, परम देव मम हृदय रहे ॥१६॥  
 देख रहा जो निखिल विश्व को, कर्म कलंक विहीन विचित्र ।  
 स्वच्छ विनिर्मल निर्विकार वह, देव करे मम हृदय पवित्र ॥१७॥  
 कर्म-कलंक अछूत है जिनसे, तम-समूह ज्यों सूर्य-प्रकाश ।  
 मोह तिमिर को भेद चला जो, परम शरण मुझको वह आप्त ॥१८॥  
 जिसकी दिव्य ज्योति के आगे, फीका पड़ता सूर्य प्रकाश ।  
 स्वयं ज्ञानमय स्व-पर प्रकाशी, परम शरण मुझको वह आप्त ॥१९॥  
 जिसके ज्ञान रूप दर्पण में, स्पष्ट झलकते सभी पदार्थ ।  
 आदि अन्त से रहित शान्त शिव, परम शरण मुझको वह आप्त ॥२०॥  
 जैसे अग्नि जलाती तरु को, तैसे नष्ट हुए स्वयमेव ।  
 भय-विषाद-चिन्ता नहीं जिनको, परम शरण मुझको वह देव ॥२१॥  
 तृण-चौकी-शिल-शैल-शिखर नहिं, आत्म समाधि के आसन ।  
 संस्तर, पूजा, संघ-सम्मिलन, नहीं समाधि के साधन ॥२२॥  
 इष्ट वियोग अनिष्ट योग में, विश्व मनाता है मातम ।  
 हेय सभी हैं विषयवासना, उपादेय निर्मल आतम ॥२३॥  
 बाह्य जगत कुछ भी नहीं मेरा, और न बाह्य जगत का मैं ।  
 यह निश्चय कर छोड़ बाह्य को, मुक्ति हेतु नित स्वस्थ रमें ॥२४॥  
 अपनी निधि तो अपने मैं है, बाह्य वस्तु मैं व्यर्थ प्रयास ।  
 जग का सुख तो मृग तृष्णा है, झूठे हैं उसके पुरुषार्थ ॥२५॥  
 अक्षय है शाश्वत है आत्मा, निर्मल ज्ञानस्वभावी है ।  
 जो कुछ बाहर है, सब पर है, कर्माधीन विनाशी है ॥२६॥  
 तन से जिसका ऐक्य नहीं हो, सुत-तिय-मित्रों से कैसे ।  
 चर्म दूर होने पर तन से, रोम समूह रहे कैसे ॥२७॥  
 महाकष्ट पाता जो करता, पर पदार्थ जड़-देह संयोग ।  
 मोक्ष महल का पथ है सीधा, जड़-चेतन का पूर्ण वियोग ॥२८॥  
 जो संसार पतन के कारण, उन विकल्प-जालों को छोड़ ।  
 निर्विकल्प निर्द्वन्द्व आत्मा, फिर-फिर लीन उसी मैं हो ॥२९॥  
 स्वयं किये जो कर्म शुभाशुभ, फल निश्चय ही वे देते ।  
 करे आप, फल देय अन्य तो स्वयं किये निष्फल होते ॥३०॥  
 अपने कर्म सिवाय जीव को, कोई न फल देता कुछ भी ।  
 ‘पर देता है’ यह विचार तज थिर हो, छोड़ प्रमाद बुद्धि ॥३१॥  
 निर्मल, सत्य, शिवं सुन्दर है, अमितगति वह देव महान ।  
 शाश्वत निज मैं अनुभव करते, पाते निर्मल पद निर्वाण ॥३२॥  
 इन बत्तीस पदों से कोई, परमात्म को ध्याते हैं ।  
 साची सामायिक को पाकर, भवोदधि तर जाते हैं ॥३३॥

## भावना बत्तीसी

(पद्मानुवाद—क्षुल्लक ध्यानसागर)

मेरा आत्म सब जीवों पर मैत्री भाव करे,  
गुणगणमणित भव्य जनों पर प्रमुदित भाव धरे ।  
दीन दुखी जीवों पर स्वामी! करुणाभाव करे,  
और विरोधी के ऊपर नित समताभाव धरे ॥१॥

तुम प्रसाद से हो मुझमें वह शक्ति नाथ! जिससे,  
अपने शुद्ध अतुल बलशाली चेतन को तन से ।  
पृथक् कर सकूँ पूर्णतया मैं ज्यों योद्धा रण में,  
खींचे निज तलवार म्यान से रिपु सन्मुख क्षण में ॥२॥

छोड़ा है सबमें अपनापन मैंने मन मेरा,  
बना रहे नित सुख में दुःख में समता का डेरा ।  
शत्रु-मित्र में, मिलन-विरह में, भवन और वन में,  
चेतन को जाना न पड़े फिर नित नूतन तन में ॥३॥

अन्धकार नाशक दीपक-सम अडिग चरण तेरे,  
अहो! विराजे रहें हमेशा उर में ही मेरे ।  
हों मुनीश! वे घुले हुए-से या कीलित जैसे,  
अथवा खुदे हुए से हों या प्रतिबिम्बित जैसे ॥४॥

हो प्रमाद-वश जहाँ-तहाँ यदि मैंने गमन किया,  
एकेन्द्रिय-आदिक जीवों को घायल बना दिया ।  
पृथक् किया या भिड़ा दिया हो अथवा दबा दिया,  
मिथ्या हो दुष्कृत वह मेरा प्रभुपद शीश किया ॥५॥

चल विरुद्ध शिव-पथ के मैंने जो दुर्मति होके,  
होके वश में दुष्ट इन्द्रियों और कषायों के ।  
खण्डित की जो चरित-शुद्धि वह दुष्कृत निष्फल हो,  
मेरा मन भी दुर्भावों को तजकर निर्मल हो ॥६॥

मन्त्र शक्ति से वैद्य उतारे ज्यों अहि-विष सारा,  
त्यों अपनी निन्दा-गर्हा वा आलोचन द्वारा ।  
मन वच तन से या कषाय से संचित अघ भारी,  
भव दुख कारण नष्ट करूँ मैं होकर अविकारी ॥७॥

धर्म-क्रिया में मुझे लगा जो कोई अघकारी,  
अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतीचार या अनाचार भारी ।  
कुमति, प्रमाद-निमित्तक उसका प्रतिक्रमण करता,  
प्रायश्चित्त बिना पापों को कौन, कहाँ हरता? ॥८॥

चित्त शुद्धि की विधि की क्षति को अतिक्रमण कहते,  
शीलबाड़ के उल्लंघन को व्यतिक्रमण कहते ।  
त्यक्त विषय के सेवन को प्रभु! अतीचार कहते,  
विषयासक्तपने को जग में अनाचार कहते ॥९॥

शास्त्र-पठन में मेरे द्वारा यदि जो कहीं-कहीं,  
प्रमाद से कुछ अर्थ, वाक्य, पद, मात्रा छूट गयी ।  
सरस्वती मेरी उस त्रुटि को कृपया क्षमा करें,  
और मुझे कैवल्यधाम में माँ अविलम्ब धरे ॥१०॥

वांछित फलदात्री चिन्तामणि सदृश मात! तेरा,  
वन्दन करने वाले मुझको मिले पता मेरा ।  
बोधि, समाधि, विशुद्ध भावना, आत्मसिद्धि मुझको,  
मिले और मैं पा जाऊँ माँ! मोक्ष-महासुख को ॥११॥  
सब मुनिराजों के समूह भी जिनका ध्यान करें,  
सुरों-नरों के सारे स्वामी जिन गुणगान करें ।  
वेद, पुराण, शास्त्र भी जिनके गीतों के डेरे,  
वे देवों के देव विराजें उर में ही मेरे ॥१२॥

जो अनन्त-दृग्-ज्ञान-स्वरूपी सुख-स्वभाव वाले,  
भव के सभी विकारों से भी जो रहे निराले ।  
जो समाधि के विषयभूत हैं परमात्म नामी,  
वे देवों के देव विराजें मम उर में स्वामी ॥१३॥

जो भव दुख का जाल काट कर उत्तम-सुख वरते,  
अखिल-विश्व के अन्तःस्थल का अवलोकन करते ।  
जो निज में लवलीन हुये प्रभु ध्येय योगियों के,  
वे देवों के देव विराजें मम उर के होके ॥१४॥

मोक्षमार्ग के जो प्रतिपादक सब जग उपकारी,  
जन्म मरण के संकटादि से रहित निर्विकारी ।  
त्रिलोकदर्शी दिव्य-शरीरी सब कलंकनाशी,  
वे देवों के देव रहे मम उर में अविनाशी ॥१५॥

आलिंगित हैं जिनके द्वारा जग के सब प्राणी,  
वे रागादिक दोष न जिनके सर्वोत्तम ध्यानी ।  
इन्द्रिय-रहित परम-ज्ञानी जो अविचल अविनाशी,  
वे देवों के देव रहें मम उर के ही वासी ॥१६॥

जग-कल्पाणी परिणति से जो व्यापक गुण-राशी,  
भावी-सिद्ध, विबुद्ध, जिनेश्वर, कर्म-पाश-नाशी ।  
जिसने ध्येय बनाया उसके सकल-दोष-हारी,  
वे देवों के देव रहें मम उर में अविकारी ॥१७॥

कर्म कलंक दोष भी जिनको कभी न छू पाते,  
ज्यों रवि के सन्मुख न कभी भी तम समूह आते ।  
नित्य निरंजन जो अनेक हैं और एक भी हैं,  
उन अरहंतदेव की मैंने सुखद शरण ली है ॥१८॥  
जगत्प्रकाशक जिनके रहते सूर्य प्रभाधारी,  
किंचित् भी ना शोभा पाता जिनवर अविकारी ।

निज आतम में हैं जो सुस्थित ज्ञान-प्रभाशाली,  
 उन अरहंतदेव की मैंने सुखद शरण पा ली ॥१९॥  
 जिनका दर्शन पा लेने पर प्रकट झलक आता,  
 अखिल विश्व से भिन्न आतमा जो शाश्वत ज्ञाता ।  
 शुद्ध, शान्त, शिवरूप आदि या अन्तविहीन बली,  
 उन अरहंतदेव की मुझको अनुपम शरण मिली ॥२०॥  
 जो मद, मदन, ममत्व, शोक, भय, चिन्ता, दुख, निद्रा,  
 जीत चुके हैं निज-पौरुष से कहती जिन-मुद्रा ।  
 ज्यों दावानल तरु-समूह को शीघ्र जला देता,  
 उन अरहंत देव की मैं भी सुखद शरण लेता ॥२१॥  
 ना पलाल पाषाण न धरती हैं संस्तर कोई,  
 ना विधिपूर्वक रचित काठ का पाटा भी कोई ।  
 कारण, इन्द्रिय वा कषाय-रिपु जीते जो ध्यानी,  
 उसका आतम ही शुचि-संस्तर माने सब ज्ञानी ॥२२॥  
 ना समाधि का साधन संस्तर न ही लोक-पूजा,  
 ना मुनि-संघों का सम्मेलन या कोई दूजा ।  
 इसीलिए हे भद्र! सदा तुम आतमलीन बनो,  
 तज बाहर की सभी वासना कुछ ना कहो-सुनो ॥२३॥  
 पर-पदार्थ कोई ना मेरे थे, होंगे, ना हैं,  
 और कभी उनका त्रिकाल में हो पाऊँगा मैं ।  
 ऐसा निर्णय करके पर के चक्कर को छोड़ो,  
 स्वस्थ रहो नित भद्र! मुक्ति से तुम नाता जोड़ो ॥२४॥  
 तुम अपने में अपना दर्शन करने वाले हो,  
 दर्शन-ज्ञानमयी शुद्धात्म पर से न्यारे हो ।  
 जहाँ कहीं भी बैठे मुनिवर अविचल मन-धारी,  
 वहीं समाधि लगे उनकी जो उनको अति-प्यारी ॥२५॥  
 नित एकाकी मेरा आतम नित अविनाशी है,  
 निर्मल दर्शन-ज्ञानस्वरूपी स्व-पर-प्रकाशी है ।  
 देहादिक या रागादिक जो कर्म-जनित दिखते,  
 क्षणभंगुर हैं वे सब मेरे कैसे हो सकते? ॥२६॥  
 जहाँ देह से नहीं एकता जो जीवनसाथी,  
 वहाँ मित्र सुत वनिता कैसे हों मेरे साथी ।  
 इस काया के ऊपर से यदि चर्म निकल जाये,  
 रोमछिद्र तब कैसे इसके बीच ठहर पाये ॥२७॥  
 भव वन में संयोगों से यह संसारी-प्राणी,  
 भोग रहा है कष्ट अनेकों कह न सके वाणी ।  
 अतः त्याज्य है मन वच तन से वह संयोग सदा,  
 उसको, जिसको इष्ट हितैषी मुक्ति विगत-विपदा ॥२८॥

भव वन में पड़ने के कारण हैं विकल्प सारे,  
उनका जाल हटाकर पहुँचों शिवपुर के द्वारे ।  
अपने शुद्धात्म का दर्शन तुम करते-करते,  
लीन रहो परमात्म-तत्त्व में दुःखों को हरते ॥२९॥

किया गया जो कर्म पूर्व में स्वयं जीव द्वारा,  
उसका ही फल मिले शुभाशुभ अन्य नहीं चारा ।  
औरों के कारण यदि प्राणी सुख-दुख को पाता,  
तो निज-कर्म अवश्य स्वयं ही निष्फल हो जाता ॥३०॥

अपने अर्जित कर्म बिना इस प्राणी को जग में,  
कोई अन्य न सुख-दुख देता कहीं किसी डग पै ।  
ऐसा अडिग विचार बनाकर तुम निज को मोड़ो,  
'अन्य मुझे सुख-दुख देता है' ऐसी हठ छोड़ो ॥३१॥

परमात्म सबसे न्यारे हैं, अतिशय अविकारी,  
सन्त अमितगति से बन्दित हैं शम-दम-समधारी ।  
जो भी भव्य मनुज प्रभुवर को नित उर में लाते,  
वे निश्चित ही उत्तम वैभव मोक्ष महल पाते ॥३२॥

दोहा

जो ध्याता जगदीश को, ले यह पद बत्तीस ।  
अचल-चित्त होकर वही, बने अचलपद ईश ॥३३॥

## मेरी भावना

### पण्डित जुगलकिशोर मुख्तार

जिसने राग-द्वेष-कामादिक जीते सब जग जान लिया,  
सब जीवों को मोक्षमार्ग का निस्पृह हो उपदेश दिया ।  
बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो,  
भक्ति-भाव से प्रेरित हो यह चित्त उसी में लीन रहो ॥१॥

विषयों की आशा नहीं जिनके, साम्यभाव-धन रखते हैं,  
निज-पर के हित-साधन में जो निश-दिन तत्पर रहते हैं ।  
स्वार्थत्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं,  
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुख-समूह को हरते हैं ॥२॥

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे,  
उन ही जैसी चर्या में यह चित्त सदा अनुरक्त रहे ।  
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूँ,  
पर-धन-वनिता पर न लुभाऊँ, सन्तोषामृत पिया करूँ ॥३॥

अहंकार का भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ,  
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या-भाव धरूँ ।  
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूँ,  
बने जहाँ तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूँ ॥४॥

मैत्रीभाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे,  
दीन-दुखी जीवों पर मेरे उर से करुणा-स्रोत बहे ।  
दुर्जन-कूर-कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवै,  
साम्यभाव रक्खूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावै ॥५॥

गुणी जनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवै,  
बने जहाँ तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावै ।  
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवै,  
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावै ॥६॥

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावै,  
लाखों वर्षों तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावै ।  
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवै,  
तो भी न्याय-मार्ग से मेरा कभी न पद डिगने पावै ॥७॥

होकर सुख में मग्न न फूलें, दुख में कभी न घबरावै,  
पर्वत नदी श्मशान भयानक अटवी से नहि भय खावै ।  
रहे अडोल-अकम्प निरन्तर यह मन दृढ़तर बन जावै,  
इष्ट-वियोग-अनिष्टयोग में सहन-शीलता दिखलावै ॥८॥

सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावै,  
वैर-पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावै ।  
घर-घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावै,  
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज-जन्म फल सब पावै ॥९॥

ईति-भीति व्यापै नहि जग में, वृष्टि समय पर हुआ करै,  
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजा का किया करै ।  
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करै,  
परम अहिंसा-धर्म जगत में फैल सर्व-हित किया करै ॥१०॥

फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर ही रहा करे,  
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहिं कोई मुख से कहा करे ।  
बनकर सब 'युगवीर' हृदय से देशोन्नति रत रहा करे,  
वस्तु-स्वरूप-विचार खुशी से सब दुख-संकट सहा करे ॥११॥

~~~~~

समाधिमरण-पाठ (छोटा)

द्यानतरायज्ञी

गौतम स्वामी वन्दों नामी मरण समाधि भला है ।
मैं कब पाऊँ निश-दिन ध्याऊँ गाऊँ वचन कला है ॥
देव-धर्म-गुरु प्रीति महावृढ़ सप्त व्यसन नहिं जाने ।
त्यागे बाइस अभक्ष्य संयमी बारह ब्रत नित ठाने ॥१॥

चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी त्रस न विराधे ।
बनिज करै परद्रव्य हरे नहिं छहों करम इमि साधे ॥
पूजा शास्त्र गुरुन की सेवा संयम तप चहु दानी ।
पर-उपकारी अल्प-अहारी सामायिक-विधि ज्ञानी ॥२॥

जाप जपै तिहुँ योग धरै दृढ़ तन की ममता टारै ।
 अन्त समय वैराग्य सम्हरै ध्यान समाधि विचारै ॥
 आग लगै अरु नाव डुबै जब धर्म विघ्न है आवे ।
 चार प्रकार अहार त्याग के मंत्र सु मन में ध्यावै ॥३॥

रोग असाध्य जहाँ बहु देखै कारण और निहारे ।
 बात बड़ी है जो बनि आवै भार भवन को डारै ॥
 जो न बनै तो घर में रहकरि सब सों होय निराला ।
 मात-पिता-सुत-तिय को सौंपे, निज परिग्रह अहि काला ॥४॥

कुछ चैत्यालय कुछ श्रावकजन कुछ दुखिया धन देई ।
 क्षमा-क्षमा सबही सों कहिके मन की शल्य हनेई ॥
 शत्रुन-सों मिल निज कर जोरै मैं बहु कीन बुराई ।
 तुमसे प्रीतम को दुख दीने ते सब बकसो भाई ॥५॥

धन धरती जो मुख सों माँगै सबको दे सन्तोषै ।
 छहों काय के प्राणी ऊपर करुणा भाव विशेषै ॥
 ऊँच-नीच घर बैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पय ले ।
 दूधाधारी क्रम-क्रम तजिके छाछ अहार गहै ले ॥६॥

छाछ त्यागि के पानी राखे पानी तजि संथारा ।
 भूमि माँहिं फिर आसन माँडै साधर्मी ढिंग प्यारा ॥
 जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवाणी पढ़िये ।
 यों कहि मौन लेय संन्यासी पंच परमपद गहिये ॥७॥

चौ आराधन मन में ध्यावै बारह भावन भावै ।
 दशलक्षणमय धर्म विचारै रत्नत्रय मन त्यावै ॥
 ऐंतीस सोलह षट् पन चार अरु दुइ इक वरन विचारै ।
 काया तेरी दुख की ढेरी ज्ञानमयी तूँ सारै ॥८॥

अजर-अमर निज गुण सों पूरै परमानन्द सुभावै ।
 आनन्द कन्द चिदानन्द साहब तीन जगतपति ध्यावै ॥
 क्षुधा तृष्णादिक होय परीषह सहै भाव सम राखै ।
 अतीचार पाँचों सब त्यागै ज्ञान सुधारस चाखै ॥९॥

हाङ्ग-मांस सब सूखि जाय जब धरम लीन तन त्यागै ।
 अद्भुत पुण्य उपाय सुरग में सेज उठै ज्यों जागै ॥
 तहँ ते आवै शिवपद पावै विलसै सुक्ख अनन्तो ।
 'ध्यानत' यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥१०॥

समाधिमरण-पाठ (बड़ा)

(मृत्युमहोत्सव पाठ)

(सूरचन्दजी)

नरेन्द्र छन्द

बन्दौं श्री अरहंत परम गुरु, जो सबको सुखदाई ।
इस जग में दुख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई ॥
अब मैं अरज करूँ प्रभु तुमसे, कर समाधि उर माहिं ।
अन्त समय में यह वर मागूँ, सो दीजै जगराई ॥१॥

भव-भव में तनधार नये मैं, भव-भव शुभ संग पायो ।
भव-भव में नृपरिद्धि लई मैं, मात-पिता सुत थायो ॥
भव-भव में तन पुरुष तनों धर, नारी हूँ तन लीनों ।
भव-भव में मैं हुवो नपुँसक, आतम गुण नहि चीनों ॥२॥

भव-भव में सुर पदवी पाई, ताके सुख अति भोगे ।
भव-भव में गति नरकतनी धर, दुख पायो विधि योगे ॥
भव-भव में तिर्यच योनि धर, पाये दुख अति भारी ।
भव-भव में साधर्माजन कौ, संग मिल्यौ हितकारी ॥३॥

भव-भव में जिन पूजन कीनी, दान सुपात्रहि दीनो ।
भव-भव में मैं समवसरण में, देख्यो जिनगुण भीनो ॥
एती वस्तु मिली भव-भव में, सम्यक गुण नहि पायो ।
ना समाधियुत मरण कियो मैं, तातैं जग भरमायो ॥४॥

काल अनादि भयो जग भ्रमते, सदा कुमरणहि कीनो ।
एक बार हूँ सम्यकयुत मैं, निज आतम नहि चीनो ॥
जो निज पर को ज्ञान होय तो, मरण समय दुख काई ।
देह विनाशी मैं निजभासी, ज्योति स्वरूप सदाई ॥५॥

विषय कषायनि के वश होकर, देह आपनो जान्यौ ।
कर मिथ्या सरथान हिये विच, आतम नाहि पिछान्यौ ॥
यो कलेश हिय धार मरणकर, चारों गति भरमायौ ।
सम्यकदर्शन-ज्ञान-चरन ये, हिरदे में नहि लायौ ॥६॥

अब या अरज करूँ प्रभु सुनिये, मरण समय यह मांगों ।
रोग जनित पीड़ा मत हूवो, अरु कषाय मत जागो ॥
ये मुझ मरण समय दुखदाता, इन हर साता कीजै ।
जो समाधियुत मरण होय मुझ, अरु मिथ्यामद छीजै ॥७॥

यह तन सात कुधातमई है, देखत ही घिन आवै ।
चर्मलपेटी ऊपर सोहै, भीतर विष्टा पावै ॥
अतिरुग्न्ध अपावन-सों यह, मूरख प्रीति बढ़ावै ।
देह विनाशी, यह अविनाशी नित्य स्वरूप कहावै ॥८॥

यह तन जीर्ण कुटीसम आतम! यातैं प्रीति न कीजै ।
नूतन महल मिलै जब भाई, तब यामें क्या छीजै ॥

मृत्यु भये से हानि कौन है, याको भय मत लावो ।
समता से जो देह तजोगे, तो शुभतन तुम पावो ॥१॥

मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इस अवसर के माँहीं ।
जीरन तन से देत नयो यह, या सम साहू नाहीं ॥
या सेती इस मृत्यु समय पर, उत्सव अति ही कीजै ।
कलेश भाव को त्याग सयाने, समता भाव धरीजै ॥१०॥

जो तुम पूरब पुण्य किये हैं, तिनको फल सुखदाई ।
मृत्यु मित्र बिन कौन दिखावै, स्वर्ग सम्पदा भाई ॥
राग द्वेष को छोड़ सयाने, सात व्यसन दुखदाई ।
अन्त समय में समता धारो, परभव पंथ सहाई ॥११॥

कर्म महादुठ वैरी मेरो, ता सेती दुख पावै ।
तन पिंजरे में बंद कियो मोहि, यासों कौन छुड़ावै ॥
भूख तृषा दुख आदि अनेकन, इस ही तन में गाढ़े ।
मृत्युराज अब आय दयाकर, तन पिंजर सों काढ़े ॥१२॥

नाना वस्त्राभूषण मैंने, इस तन को पहिराये ।
गन्ध-सुगन्धित अतर लगाये, घट्रस अशन कराये ॥
रात-दिना मैं दास होय कर, सेव करी तन केरी ।
सो तन मेरे काम न आयो, भूल रह्यो निधि मेरी ॥१३॥

मृत्युराज को शरन पाय, तन नूतन ऐसो पाऊँ ।
जामें सम्यकरतन तीन लहि, आठों कर्म खपाऊँ ।
देखो तन सम और कृतची, नाहि सु या जगमाँहीं ।
मृत्यु समय में ये ही परिजन, सब ही हैं दुखदाई ॥१४॥

यह सब मोह बढ़ावन हारे, जिय को दुर्गति दाता ।
इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता ॥
मृत्यु कल्पद्रुम पाय सयाने, माँगो इच्छा जेती ।
समता धरकर मृत्यु करो तो, पावो सम्पति तेती ॥१५॥

चौ-आराधन सहित प्राण तज, तो ये पदवी पावो ।
हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थधर, स्वर्ग मुकति में जावो ॥
मृत्यु कल्पद्रुम सम नहि दाता, तीनों लोक मँझारे ।
ताको पाय कलेश करो मत, जन्म जवाहर हारे ॥१६॥

इस तन में क्या राचै जियरा, दिन-दिन जीरन हो है ।
तेज कान्ति बल नित्य घटत है, या सम अधिर सु को है ॥
पाँचों इन्द्री शिथिल भई अब, स्वास शुद्ध नहि आवै ।
ता पर भी ममता नहि छोड़ै, समता उर नहि लावे ॥१७॥

मृत्युराज उपकारी जिय को, तनसों तोहि छुड़ावै ।
नातर या तन बन्दीगृह में, पर्यों पर्यों बिल्लावै ॥
पुद्गल के परमाणु मिलकैं, पिण्डरूप तन भासी ।
यही मूरती मैं अमूरती, ज्ञान जोति गुण खासी ॥१८॥

रोग शोक आदिक जो वेदन, ते सब पुद्गल लारे ।
 मैं तो चेतन व्याधि बिना नित, हैं सो भाव हमारे ॥
 या तन सों इस क्षेत्र सम्बन्धी, कारण आन बन्धौ है ।
 खानपान दे याको पोष्यो, अब समभाव ठन्यौ है ॥१९॥
 मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान बिन, यह तन अपनो जान्यो ।
 इन्द्रीभोग गिने सुख मैंने, आपो नाहि पिछान्यो ॥
 तन विनशनतैं नाश जानि निज, यह अयान दुखदाई ।
 कुटुम आदि को अपनो जान्यो, भूल अनादी छाई ॥२०॥
 अब निज भेद जथारथ समझ्यो, मैं हूँ ज्योतिस्वरूपी ।
 उपजै विनसै सो यह पुद्गल, जान्यौ याको रूपी ॥
 इष्टुनिष्ट जेते सुख दुख हैं, सो सब पुद्गल सागे ।
 मैं जब अपनो रूप विचारों, तब वे सब दुख भागे ॥२१॥
 बिन समता तनुनंत धरे मैं, तिनमें ये दुख पायौ ।
 शस्त्र घाततैनन्त बार मर, नाना योनि भ्रमायौ ॥
 बार अनन्त ही अग्नि माँहि जर, मूवो सुमति न लायो ।
 सिंह व्याघ्र अहिनन्तबार मुझ, नाना दुःख दिखायो ॥२२॥
 बिन समाधि ये दुःख लहे मैं, अब उर समता आई ।
 मृत्युराज को भय नहि मानों, देवै तन सुखदाई ॥
 यातैं जब लग मृत्यु न आवै, तब लग जप-तप कीजै ।
 जप-तप बिन इस जग के माँहीं, कोई भी ना सीजै ॥२३॥
 स्वर्ग सम्पदा तप-सों पावै, तप-सों कर्म नसावै ।
 तप ही सों शिवकामिनि पति है, यासों तप चित लावै ॥
 अब मैं जानी समता बिन मुझ, कोऊ नाहि सहाई ।
 मात-पिता सुत बाँधव तिरिया, ये सब हैं दुखदाई ॥२४॥
 मृत्यु समय में मोह करें, ये तातैं आरत हो है ।
 आरत-तैं गति नीची पावै, यों लख मोह तज्यो है ॥
 और परिश्रह जेते जग में तिनसों प्रीत न कीजै ।
 परभव में ये संग न चालैं, नाहक आरत कीजै ॥२५॥
 जे-जे वस्तु लखत हैं ते पर, तिनसों नेह निवारो ।
 परगति में ये साथ न चालैं, ऐसो भाव विचारो ॥
 परभव में जो संग चलै तुझ, तिन सों प्रीत सु कीजै ।
 पश्च पाप तज समता धारो, दान चार विध दीजै ॥२६॥
 दशलक्षण मय धर्म धरो उर, अनुकम्पा चित लावो ।
 षोडशकारण नित्य चिन्तवो, द्वादश भावन भावो ॥
 चारों परवी प्रोषध कीजै, अशन रात को त्यागो ।
 समता धर दुरभाव निवारो, संयम सों अनुरागो ॥२७॥

अन्त समय में यह शुभ भावहि, होवैं आनि सहाई ।
स्वर्ग मोक्षफल तोहि दिखावैं, ऋद्धि देहि अधिकाई ॥
खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उर में समता लाके ।
जा सेती गति चार दूर कर, बसो मोक्षपुर जाके ॥२८॥

मन थिरता करके तुम चिंतौ, चौ-आराधन भाई ।
ये ही तोकों सुख की दाता, और हितू कोउ नाहीं ॥
आगें बहु मुनिराज भये हैं, तिन गहि थिरता भारी ।
बहु उपसर्ग सहे शुभ भावन, आराधन उर धारी ॥२९॥

तिनमें कछु इक नाम कहूँ मैं, सो सुन जिय चित लाके ।
भाव सहित वन्दौं मैं तासों, दुर्गति होय न ताके ॥
अरु समता निज उर में आवै, भाव अधीरज जावै ।
यों निशदिन जो उन मुनिवर को, ध्यान हिये विच लावै ॥३०॥

धन्य-धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसे धीरज धारी ।
एक श्यालनी जुग बच्चाजुत पाँव भख्यो दुखकारी ॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥३१॥

धन्य-धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्री ने तन खायो ।
तो भी श्रीमुनि नेक डिगे नहि, आतम सों हित लायो ॥यह०॥३२
देखो गजमुनि के शिर ऊपर, विप्र अग्नि बहु बारी ।
शीश जले जिम लकड़ी तिनको, तो भी नाहि चिगारी ॥यह०॥३३

सनतकुमार मुनी के तन में, कुष्ठ वेदना व्यापी ।
छिन्न-भिन्न तन तासों हूवो, तब चिंतो गुण आपी ॥यह०॥३४
श्रेणिक सुत गंगा में डूबो, तब जिननाम चितारो ।
धर सलेखना परिग्रह छाँड़ो, शुद्ध भाव उर धारो ॥यह०॥३५
समन्तभद्र मुनिवर के तन में, क्षुधा वेदना आई ।
तो दुख में मुनि नेक न डिगियो, चिंतो निजगुण भाई ॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥३६॥

ललित घटादिक तीस दोय मुनि, कौशाम्बी तट जानो ।
नद्दी में मुनि बहकर मूवे, सो दुख उन नहिं मानो ॥यह०॥३७
धर्मघोष मुनि चम्पानगरी, बाह्य ध्यान धर ठाड़ो ।
एक मास की कर मर्यादा, तृष्णा दुःख सह गाढ़ो ॥यह०॥३८
श्रीदत्त मुनि को पूर्व जन्म को, वैरी देव सु आके ।
विक्रिय कर दुख शीत तनो सो, सह्यो साधु मन लाके ॥यह०॥३९
वृषभसेन मुनि उष्णशिला पर, ध्यान धरो मन लाई ।
सूर्य घाम अरु उष्ण पवन की, वेदन सहि अधिकाई ॥यह०॥४०

अभयघोष मुनि काकन्दीपुर, महावेदना पाई ।
 वैरी चण्ड ने सब तन छेदो, दुख दीनो अधिकार्झ ॥यह०॥४१
 विद्युच्चर ने बहु दुख पायो, तौ भी धीर न त्यागी ।
 शुभ भावन सों प्राण तजे निज, धन्य और बड़भागी ॥यह०॥४२
 पुत्र चिलाती नामा मुनि को, वैरी ने तन घातो ।
 मोटे-मोटे कीट पड़े तन, ता पर निज गुण रातो ॥यह०॥४३
 दण्डक नामा मुनि की देही बाणन कर अरि भेदी ।
 ता पर नेक डिंगे नहि वे मुनि, कर्म महारिपु छेदी ॥यह०॥४४
 अभिनन्दन मुनि आदि पाँचसौ, धानी पेलि जु मारे ।
 तो भी श्रीमुनि समताधारी, पूरब कर्म विचारे ॥यह०॥४५
 चाणक मुनि गोधर के माँहीं, मूँद अगिनि परजालो ।
 श्रीगुरु उर समभाव धारकै, अपनो रूप सम्हालो ॥यह०॥४६
 सात शतक मुनिवर दुख पायो, हथनापुर में जानो ।
 बलि ब्राह्मणकृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहि मानो ॥यह०॥४७
 लोहमयी आभूषण गढ़ के, ताते कर पहराये ।
 पाँचों पाण्डव मुनि के तन में, तौ भी नाहि चिगाये ॥यह०॥४८
 और अनेक भये इस जग में, समता रस के स्वादी ।
 वे ही हमको हों सुखदाता, हर हैं टेव प्रमादी ॥
 सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरन-तप, ये आराधन चारों ।
 ये ही मोंको सुख की दाता, इन्हें सदा उर धारों ॥४९॥
 यों समाधि उर माँहीं लावो, अपनो हित जो चाहो ।
 तज ममता अरु आठों मद को, जोति स्वरूपी ध्यावो ॥
 जो कोई नित करत पयानो, ग्रामान्तर के काजै ।
 सो भी शकुन विचारै नीके, शुभ शुभ कारण साजै ॥५०॥
 मात-पितादिक सर्व कुटुम मिल, नीके शकुन बनावै ।
 हलदी धनिया पुंगी अक्षत, दूध दही फल लावै ॥
 एक ग्राम जाने के कारण, करैं शुभाशुभ सारे ।
 जब परगति को करत पयानो, तब नहिं सोचो प्यारे ॥५१॥
 सर्वकुटुम जब रोवन लागै, तोहि रुलावैं सारे ।
 ये अपशकुन करैं सुन तोकौं, तू यों क्यों न विचारे ॥
 अब परगति को चालत बिरियाँ, धर्म ध्यान उर आनो ।
 चारों आराधन आराधो मोह तनो दुख हानो ॥५२॥
 है निःशल्य तजो सब दुविधा, आतमराम सुध्यावो ।
 जब परगति को करहु पयानो, परमतत्त्व उर लावो ॥
 मोह जाल को काट पियारे, अपनो रूप विचारो ।
 मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, यों उर निश्चय धारो ॥५३॥

मृत्यु महोत्सव पाठ को, पढ़ो सुनो बुधिवान ।
सरथा धर नित सुख लहो, 'सूरचन्द्र' शिवथान ॥५४॥
पञ्च उभय नव एक नभ, संवत् सो सुखदाय ।
आश्विन श्यामा सप्तमी, कहो पाठ मन लाय ॥५५॥



समाधि भावना

दिन-रात मेरे स्वामी! मैं भावना ये भाऊँ ।
देहान्त के समय में तुमको न भूल जाऊँ ॥

शत्रु अगर कोई हों, संतुष्ट उनको कर दूँ ।
समता का भाव धरकर, सबसे क्षमा कराऊँ ॥

दिन-रात मेरे ॥१॥

त्यागूँ आहार-पानी औषध विचार अवसर ।
टूटे नियम न कोई दृढ़ता हृदय में लाऊँ ॥

दिन-रात मेरे ॥२॥

जागें नहीं कषायें, नहिं वेदना सतावे ।
तुमसे ही लौ लगी हो, दुर्ध्यान को भगाऊँ ॥

दिन-रात मेरे ॥३॥

आत्म स्वरूप अथवा आराधना विचारूँ ।
अरहंत सिद्ध साधू रटना यही लगाऊँ ॥

दिन-रात मेरे ॥४॥

धरमात्मा निकट हों, चरचा धरम सुनावें ।
वो सावधान रक्खें, गाफिल न होने पाऊँ ॥

दिन-रात मेरे ॥५॥

जीने की हो न वांछा, मरने की हो न इच्छा ।
परिवार-मित्र-जन से, मैं राग को हटाऊँ ॥

दिन-रात मेरे ॥६॥

भोगे जो भोग पहले, उनका न होवे सुमरन ।
मैं राज्य-संपदा या, पद इन्द्र का न चाहूँ ॥

दिन-रात मेरे ॥७॥

रत्नत्रयी का पालन, हो अंत में समाधि ।
शिवराम प्रार्थना यह, जीवन सफल बनाऊँ ॥

दिन-रात मेरे ॥८॥



आत्म-कीर्तन

सहजानन्द वर्णी

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता द्रष्टा आत्मराम ॥ टेक ॥

मैं वह हूँ जो है भगवान, जो मैं हूँ वह है भगवान ।
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यह राग-वितान ॥१॥

मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति-सुख-ज्ञान-निधान ।
 किन्तु आशवश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान ॥२॥
 सुख-दुख-दाता कोई न आन, मोह-राग-रुष दुख की खान ।
 निज को निज, पर को पर जान, फिर दुख का नहि लेश निदान ॥३॥
 जिन, शिव, ईश्वर, ब्रह्मा, राम, विष्णु, बुद्ध, हरि जिनके नाम ।
 राग त्यागि पहुँचूँ निज धाम, आकुलता का फिर क्या काम ॥४॥
 होता स्वयं जगत-परिणाम, मैं जग का करता क्या काम ।
 दूर हटो पर-कृत परिणाम, ‘सहजानन्द’ रहूँ अभिराम ॥५॥



भावना गीत

भावना दिन-रात मेरी, सब सुखी संसार हो ।
 सत्य संयम शील का, व्यवहार हर घर द्वार हो ॥ भावना०
 धर्म का प्रचार हो, और देश का उद्धार हो ।
 और ये उजड़ा हुआ, भारत चमन गुलजार हो ॥ भावना०
 ज्ञान के अभ्यास से, जीवों का पूर्ण विकास हो ।
 धर्म के परचार से, हिंसा का जग में ह्वास हो ॥ भावना०
 शान्ति अरु आनन्द का, हर एक घर में वास हो ।
 वीर वाणी पर सभी, संसार का विश्वास हो ॥ भावना०
 रोग अरु भय शोक होवे, दूर हे परमात्मा ।
 कर सके कल्याण ज्योति, सब जगत की आत्मा ॥ भावना०



तुम से लागी लगन

(माणिकलाल पाटनी ‘पंकज’)

तुम से लागी लगन, ले लो अपनी शरण, पारस प्यारा,
 मेटो मेटो जी संकट हमारा ॥ टेक ॥
 निशदिन तुम को जपूँ, पर से नेहा तजूँ,
 जीवन सारा, तेरे चरणों में बीते हमारा ॥१॥
 अर्थसेन के राजदुलारे, वामादेवी के सुत प्राण प्यारे,
 सबसे नेहा तोड़ा, जग से मुँह को मोड़ा, संयम धारा ॥ मेटो० २
 इन्द्र और धरणेन्द्र भी आये, देवी पद्मावती मङ्गल गाये,
 आशा पूरो सदा, दुख नहि पावे कदा, सेवक थारा ॥ मेटो० ३
 जग के दुख की तो परवा नहीं है, स्वर्गसुख की भी चाह नहीं है,
 मेटो जामन-मरण, होवे ऐसा यतन, पारस प्यारा ॥ मेटो० ४
 लाखों बार तुम्हें शीश नवाऊँ, जग के नाथ तुम्हें कैसे पाऊँ,
 ‘पंकज’ व्याकुल भया, दर्शन बिन ये जिया, लागे खारा ॥ मेटो० ५



आलोचना पाठ

(कवि जौहरिलाल)

दोहा

वंदों पांचों परम-गुरु, चौबीसों जिनराज ।
करुँ शुद्ध आलोचना, शुद्धि करन के काज ॥१॥

सखीछन्द

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी ।
तिनकी अब निर्वृति काजा, तुम सरन लही जिनराजा ॥२॥

इक वे ते चउ इंद्री वा, मनरहित सहित जे जीवा ।
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदइ है घात विचारी ॥३॥

समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ ।
कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं ॥४॥

शत आठ जु इमि भेदनतैं, अघ कीने परछेदनतैं ।
तिनकी कहुँ कौलों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी ॥५॥

विपरीत एकांत विनय के, संशय अज्ञान कुनय के ।
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहि जाय कहीने ॥६॥

कुगुरन की सेवा कीनी, केवल अदया करि भीनी ।
या विधि मिथ्यात बढ़ायो, चहुँगति-मधि दोष उपायो ॥७॥

हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, परवनिता-सों दृग जोरी ।
आरंभ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो ॥८॥

सपरस रसना ग्रानन को, चखु कान विषय-सेवन को ।
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने ॥९॥

फल पंच उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चित चाये ।
नहि अष्ट मूलगुण-धारी, विसयन सेये दुखकारी ॥१०॥

दुइबीस अभख जिन गाये, सो भी निस-दिन भुंजाये ।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों करि उदर भरायो ॥११॥

अनन्तानु जु बंधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो ।
संज्वलन चौकरी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये ॥१२॥

परिहास अरति रति शोग, भय ज्लानि तिवेद संयोग ।
पनबीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम ॥१३॥

निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई ।
फिर जागि विषय-वन धायो, नानाविधि विष-फल खायो ॥१४॥

कियेहार निहार विहारा, इनमें नहिं जतन विचारा ।
बिन देखी धरी उठाई, बिन शोधी वस्तु जु खाई ॥१५॥

तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकलप उपजायो ।
कछु सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्या मति छाय गयी है ॥१६॥

मरजादा तुम छिग लीनी, ताहूमें दोष जु कीनी ।
भिन-भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञानविषे सब पड़ये ॥१७॥

हा हा! मैं दुठ अपराधी, त्रस-जीवन-राशि विराधी ।
 थावर की जतन न कीनी, उर में करुना नहि लीनी ॥१८॥
 पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागां चिनाई ।
 पुनि बिन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखातैं पवन विलोल्यो ॥१९॥
 हा हा! मैं अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी ।
 ता मधि जीवन के खंदा, हम खाये धरि आनंदा ॥२०॥
 हा हा! परमाद बसाई, बिन देखे अगनि जलाई ।
 ता मधि जे जीव जु आये, ते हू परलोक सिधाये ॥२१॥
 बीध्यो अन राति पिसायो, ईधन बिन सोधि जलायो ।
 झाड़ ले जागां बुहारी, चिंटी आदिक जीव बिदारी ॥२२॥
 जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी ।
 नहि जल-थानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई ॥२३॥
 जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि-कुल बहु घात करायो ।
 नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये ॥२४॥
 अग्नादिक शोध कराई, तामैं जु जीव निसराई ।
 तिनका नहि जतन कराया, गलियारे धूप डराया ॥२५॥
 पुनि द्रव्य कमावन काज, बहु आरँभ हिंसा साज ।
 किये तिसनावश अघ भारी, करुना नहिं रंच विचारी ॥२६॥
 इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता ।
 संतति चिरकाल उपाई, वानी-तैं कहिय न जाई ॥२७॥
 ताको जु उदय अब आयो, नानाविध मोहि सतायो ।
 फल भुंजत जिय दुख पावै, वच-तैं कैसे करि गावै ॥२८॥
 तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी ।
 हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है ॥२९॥
 जो गांवपती इक होवे, सो भी दुखिया दुख खोवै ।
 तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी ॥३०॥
 द्रोपदि को चीर बढ़ायो, सीता प्रति कमल रचायो ।
 अंजन से किये अकामी, दुख मेट्यो अंतरजामी ॥३१॥
 मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो विरद सम्हारो ।
 सब दोषरहित करि स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी ॥३२॥
 इंद्रादिक पद नहि चाहूँ, विषयनि में नाहि लुभाऊँ ।
 रागादिक दोष हरीजै, परमात्म निज-पद दीजै ॥३३॥
 दोहा
 दोषरहित जिनदेव जी, निजपद दीज्यो मोय ।
 सब जीवन के सुख बढ़ै, आनंद मंगल होय ॥३४॥
 अनुभव माणिक पारखी, ‘जौहरि’ आप जिनन्द ।
 ये ही वर मोहि दीजिये, चरन शरन आनन्द ॥३५॥

श्रावक प्रतिक्रमण

हे जिनेन्द्र ! हे देवाधिदेव ! हे वीतरागी सर्वज्ञ हितोपदेशी अरिहन्त प्रभु ! मैं पापों के प्रक्षालन के लिए, पापों से मुक्त होने के लिए, आत्मोत्थान के लिए, आत्म जागरण के लिए प्रतिक्रमण करता हूँ । (इस प्रकार प्रतिज्ञा करके एक आसन से बैठकर प्रतिक्रमण प्रारम्भ करें ।)

पापी, दुरात्मा, जड़बुद्धि, मायावी, लोभी और राग-द्वेष से मलिन चित्तवाले मैंने जो दुष्कर्म किया है, उसे हे तीन लोक के अधिपति ! हे जिनेन्द्र देव ! निरन्तर समीचीन मार्ग पर चलने की इच्छा करने वाला मैं आज आपके पादमूल में निन्दापूर्वक उसका त्याग करता हूँ ।

हाय ! मैंने शरीर से दुष्ट कार्य किया है, हाय ! मैंने मन से दुष्ट विचार किया है, हाय ! मैंने मुख से दुष्ट वचन बोला है, उसके लिए मैं पश्चात्ताप करता हुआ भीतर ही भीतर जल रहा हूँ ।

निन्दा और गर्हा से युक्त होकर द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावपूर्वक किये गये अपराधों की शुद्धि के लिए मैं मन, वचन और काय से प्रतिक्रमण करता हूँ ।

समस्त संसारी जीवों की सर्व योनियाँ (जातियाँ) चौरासी लाख हैं एवं सर्व संसारी जीवों के सर्व कुल एक सौ साढ़े निन्यानवे (१९९-१/२) लाख करोड़ होते हैं, इनमें स्थित जीवों की विराधना की हो एवं इनके प्रति होने वाले राग-द्वेष से जो पाप लगे हों तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ । (तत्सम्बन्धी मेरा दुष्कृत मिथ्या हो ।)

जो एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय तथा पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक और त्रसकायिक जीव हैं, इनका जो उत्तापन, परितापन, विराधन और उपघात किया हो, कराया हो और करने वाले की अनुमोदना की हो तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

सूक्ष्म, बादर-पर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक जीवों में से किसी भी जीव की विराधना की हो - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

एकान्त, विपरीत, संशय, वैनियिक और अज्ञान - इन पांच प्रकार के मिथ्यामार्ग और उनके सेवकों की मन से प्रशंसा की हो - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

जिनदर्शन, जलगालन, रात्रिभोजनत्याग, पाँच उदुम्बर त्याग, मध्य त्याग, मांस त्याग, मधुत्याग और जीवदया पालन - इन आठ श्रावक के मूलगुणों में अतिचार के द्वारा जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

हे भगवन् ! मूलगुणों के अन्तर्गत जिनदर्शन व्रत पालन में प्रमाद किया हो, अविनय से दर्शन किया हो तथा दर्शन या पूजन करते समय मन, वचन, काय की शुद्धि नहीं रखी हो, जिनदर्शन व्रत पालन करते हुये जिनमार्ग में शंका की हो, शुभाचरण पालन कर संसार-सुख की वांछा की हो, धर्मात्माओं के मलिन शरीर को देखकर ग्लानि की हो, मिथ्यामार्ग और उसके सेवकों की मन से प्रशंसा तथा वचन से स्तुति की हो, इत्यादि अतिचार-अनाचार दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

हे नाथ ! मूलगुणों के अन्तर्गत जलगालन व्रत पालन में प्रमाद किया हो, जल छानने के ४८ मिनट बाद उसे फिर नहीं छानकर उसी का उपयोग किया हो, प्रमाण से छोटे, इकहरे, मलिन जीर्ण एवं सहिद्र वस्त्र से जल छाना हो । गर्म पानी की मर्यादा समाप्त हो जाने पर उसका उपयोग किया हो, छानने से शेष बचे जल को और जीवानी को यथास्थान (कड़े वाली बाल्टी से कुओं में) न पहुँचाया हो उसे नाली आदि में डाल दिया हो, तथा जीवानी की सुरक्षा या पानी छानने की विधि में प्रमाद किया हो इत्यादि अनाचार मुझे लगे हों तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

हे देवाधिदेव ! मूलगुणों के अन्तर्गत रात्रि भोजन त्याग व्रत में रात्रि के बने भोजन का, सूर्योदय से ४८ मिनट के भीतर या सूर्यास्त के एक मुहूर्त पूर्व तथा औषधि के निमित्त रात्रि को रस, फल आदि का सेवन किया हो, कराया हो या करते हुए की अनुमोदना की हो, तज्जन्य अन्य भी अतिचार-अनाचार दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

हे करुणा के सागर ! मूलगुणों के अन्तर्गत पंच-उदुम्बर फल त्याग व्रत में सूखे अथवा औषधि निमित्त उदुम्बर फलों का, सर्व साधारण वनस्पति का, अदरक-मूली-आलू आदि अनन्तकायिक वनस्पति का, त्रस जीवों के आश्रयभूत वनस्पति का, बिना फाइ किये सेमफली आदि एवं अनजाने फलों का सेवन किया हो, कराया हो या करने वालों की अनुमोदना की हो, इत्यादि अतिचार-अनाचार दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

हे दया के सागर ! मूलगुणों के अन्तर्गत मध्यत्याग व्रत में मर्यादा के बाहर का अचार, मुरब्बा आदि सर्व प्रकार के सन्धानों का, एक दिन व एक रात्रि व्यतीत हुए दही, छाछ, काँजी आदि का, आसवों एवं अर्कों का तथा भांग, नागफेन, धतूरा, पोस्त का छिलका, चरस और गंजा आदि नशीले पदार्थों का स्वयं सेवन किया हो, कराया हो या सेवन करने वालों की अनुमोदना की हो तथा अन्य और भी जो अतिचार-अनाचारजन्य दोष लगे हों-तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

हे करुणा के सागर ! मूलगुणों के अन्तर्गत मांस त्यागव्रत में चमड़े के बेल्ट, पर्स, जूता-चप्पल, घड़ी का पट्टा आदि का स्पर्श हो गया हो या चमड़े से आच्छादित अथवा स्पर्शित हींग, धी, तेल एवं जल आदि का, अशोधित भोजन का, जिसमें त्रस जीवों का संदेह हो ऐसे भोजन का, बिना छना हुआ अथवा विधिपूर्वक दुहरे छन्ने (वन्न) से नहीं छाना गया धी, दूध, तेल एवं जल आदि का, सड़े धुने हुये अनाज आदि का, शोधनविधि से अनभिज्ञ साधर्मी या शोधन-विधि से अपरिचित विधर्मी के हाथ से तैयार हुए भोजन का, बासा भोजन का, रात्रिभोजन का, चलित रस पदार्थों का, बिना दो फाइ किये काजू, पुरानी मूँगफली, सेमफली एवं भिंडी आदि का और अमर्यादित दूध, दही तथा छांछ आदि पदार्थों का स्वयं सेवन किया हो, कराया हो या करते हुए की अनुमोदना की हो, तज्जन्य अन्य जो भी अतिचार-अनाचार दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

हे परमपिता परमात्मा ! मूलगुणों के अन्तर्गत मधुत्याग व्रत में औषधि के निमित्त मधु का, फूलों के रसों का एवं गुलकन्द आदि का स्वयं सेवन किया हो, कराया हो, करते हुए की अनुमोदना की हो, तज्जन्य अन्य भी अतिचार-अनाचार दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

हे नित्य निरंजन देव ! मूलगुणों के अन्तर्गत जीवदया व्रत पालन में प्रमाद किया हो, अज्ञान रखा हो, उपेक्षा की हो, बिना प्रयोजन जीवों को सताया हो तथा अंगोपांग छेदन किये हों, कराये हों या अनुमोदना की हो, तज्जन्य जो भी दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

(नौ बार ण्मोकार मन्त्र का जाप करें)

जुआ, मांस, मदिरा, शिकार, वेश्यागमन, चोरी और परस्तीरमण इन सप्तव्यसन सेवन में जो पाप लगे हो - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

देव-दर्शन, पूजन, साधु वैयावृत्ति, स्वाध्याय, संयमपालन, इच्छायें सीमित करना और अर्जित संपत्ति का सदुपयोग (दान देना) इन षडावश्यक पालनमें अतिचारपूर्वक जो दोष लगे हों तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

इष्टवियोग, अनिष्टसंयोग, पीड़ाचिन्तन और निदान ये चार आर्तध्यान; हिंसानन्द, मृषानन्द, चौर्यानन्द और परिग्रहानन्द ये चार रौद्रध्यान द्वारा जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

राजकथा, चोरकथा, स्त्रीकथा और भोजनकथा करने से जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

जीवों को सताने वाला दुष्ट मन, वचन, काय - ये तीन दण्ड, माया, मिथ्या, निदान ये तीन शल्य और शब्द-गारव, ऋद्धि-गारव और सात-गारव द्वारा जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

आहार, भय, मैथुन और परिग्रह - इन चार संज्ञाओं के द्वारा जो पाप बन्ध हुआ हो - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

इहलोकभय, परलोकभय, मरणभय, वेदनाभय, अगुप्ति-भय, अरक्षाभय (अत्राणभय) और अकस्मात् भय द्वारा जो पापबन्ध हुआ हो - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़।

(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)

स्थूल हिंसाविरति व्रत का पालन करते हुए जीवों को मारा हो, बांधा हो, अंगोपांग छेद हों, अधिक बोझ लादा हो, एवं अन्नपान का निरोध किया हो, इत्यादि अनेक दोष कृत-कारित-अनुमोदना से किया हो - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

स्थूल असत्यविरति व्रत का पालन करते हुए मिथ्योपदेश देने से, एकान्त में कही हुई बात को प्रगट कर देने से, झूठा लेख लिखने से तथा किसी भी इंगित चेष्टा से अभिप्राय समझ कर भेद प्रकट कर देने से जो दोष मन-वचन-काय एवं कृत-कारित-अनुमोदना से लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

स्थूल चौर्यविरति व्रत के पालन करने में चोर द्वारा चुराया हुआ द्रव्य ग्रहण किया हो, राज्य के विरुद्ध कार्य किया हो, धरोहर हरण करने के भाव किये हों, तौलने के बाँट कमती या बढ़ती रखे हों और अधिक कीमती वस्तु में अल्प कीमती वस्तु मिलाकर बेची हो एवं मन, वचन, काय, कृत-कारित-अनुमोदना से, चोरी का प्रयोग बतलाने से जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

स्थूल अब्रह्मविरति व्रत पालन करने में व्यभिचारिणी स्त्री के साथ आने-जाने का व्यवहार रखा हो, कुमारी, विधवा एवं सधवा आदि अपरिगृहीत स्त्रियों के साथ आने-जाने या लेन-देन का व्यवहार रखा हो, काम सेवन के अंगों को छोड़कर दूसरे अंगों से कुचेष्टाएँ की हों, काम के तीव्र वेग से बीभत्स विचार बने हों और मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना से अन्य के पुत्र-पुत्रियों का विवाह किया हो, इस प्रकार जो भी दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

स्थूल परिग्रह-परिमाण व्रत में मन, वचन, काय एवं कृत, कारित अनुमोदना से जमीन और मकान आदि के प्रमाण का उल्लंघन किया हो, गाय, बैल आदि धन, अनाज आदि धान्य, दासी-दास, चांदी-सोना, वस्त्र एवं बर्तन आदि के प्रमाण का उल्लंघन किया हो, तज्जन्य जो भी दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)

दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थदण्डविरति व्रत - ये तीन गुणव्रत और भोग-परिमाणव्रत, परिभोगपरिमाणव्रत, अतिथिसंविभागव्रत, समाधिमरणव्रत, ये चार शिक्षाव्रत रूप बारह व्रतों में जो दोष लगे हों तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

पाँच इन्द्रियों और मन को वश में न करने से जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

मोह के वशीभूत होकर अनेक प्रकार के उत्तमोत्तम वस्त्र एवं स्त्रियों को आकर्षित करने वाला शरीर का शृंगार किया हो, राग के उद्रेक से युक्त हँसी में अशिष्ट वचनों का प्रयोग किया हो और परस्पर प्रीति से रहने वालों के बीच में द्वेष किया हो, तज्जन्य जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

तप और स्वाध्याय से हीन असम्बद्ध प्रलाप करने में, अन्यथा पढ़ने-पढ़ाने से एवं अन्यथा ग्रहण (सुनने) करने से जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका की किसी भी प्रकार से निन्दा की हो, कराई हो, सुनी हो, सुनाई हो इससे जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

साधुओं वा साधर्मियों से कटु वचन बोला हो एवं आहार दान देने में प्रमाद करने से जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

देव-शास्त्र-गुरु की अविनय एवं आसादना से जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

पाश्चात्य वेशभूषा का उपयोग कर टी० वी० आदि देखकर एवं उपन्यास आदि पढ़कर शील में जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

उच्च कुलों को गहित कुल बनाने में कृत-कारित-अनुमोदना से सहयोग देने में जो पाप लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

चलने-फिरने, शरीर को हिलने-हिलाने, उठने-बैठने, छोंकने-खांसने, सोने, जम्हाई लेने और मार्ग चलते-चलाने में, देखे-अनदेखे तथा जाने-अनजाने में जो दोष लगे हों - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

किसी भी जीव को मैंने दबा दिया हो, कुचल दिया हो, घुमा दिया हो, भयभीत कर दिया हो, त्रास दिया हो, वेदना पहुँचाई हो, छेदन-भेदन कर दिया हो, अथवा किसी प्रकार से भी कष्ट पहुँचाया हो - तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

जाने-अनजाने में और भी जो दोष लगे हों तस्स मिच्छा मे दुक्कड़ ।

हा दुष्कर्यं हा दुष्कर्तियं, भासियं च हा दुष्टं ।

अंतो अंतो डञ्जमि पच्छत्तावेण वेयंतो ॥

हाय-हाय ! मैंने दुष्टकर्म किये, मैंने दुष्ट कर्मों का बार-बार चिन्तवन किया, मैंने दुष्ट मर्म-भेदक वचन कहे - इस प्रकार मन, वचन और काय की दुष्टता से मैंने अत्यन्त कुत्सित कर्म किये । उन कर्मों का अब मुझे अत्यन्त पश्चात्ताप है ।

हे प्रभु ! मेरा किसी के भी साथ राग नहीं है, द्वेष नहीं है, बैर नहीं है तथा क्रोध, मान, माया, लोभ नहीं है, अपितु सर्व जीवों के प्रति उत्तम क्षमा है ।

जब तक मोक्षपद की प्राप्ति न हो तब तक भव-भव में मुझे शास्त्रों का अभ्यास, जिनेन्द्र पूजा, निरन्तर श्रेष्ठ पुरुषों की संगति, सच्चरित्रसम्पन्न पुरुषों के गुणों की चर्चा, दूसरों के दोष कहने में मौन, सभी प्राणियों के प्रति प्रिय और हितकारी वचन एवं आत्मकल्याण की भावना (प्रतीति) ये सब वस्तुएँ प्राप्त होती रहें ।

हे जिनेन्द्र ! मुझे जब तक मोक्ष की प्राप्ति न हो, तब तक आपके चरण मेरे हृदय में और मेरा हृदय आपके चरणों में लीन रहे ।

हे भगवन् ! मेरे दुःखों का क्षय हो, कर्मों का नाश हो, रत्नत्रय की प्राप्ति हो, शुभगति हो, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो, समाधिमरण हो और श्री जिनेन्द्र के गुणों की प्राप्ति हो - ऐसी मेरी भावना है, ऐसी मेरी भावना है, ऐसी मेरी भावना है ।

पाप किये हैं मैंने क्षण, प्रतिक्षण जीवन में, हाँ क्षण.....।

पुण्य नहीं कर पाया, पल दो पल जीवन में, हाँ पल.....।

पल-पल का यह मेरा जीवन, भोगों में उलझा जाये-२ ।

निज आत्म को अति दुःख दिये, अब और बन्ध न करना-२ ।

हो अंत समाधि मरणा, हो अंत समाधि मरणा ।

आचार्य वंदना

लघु सिद्धभक्ति

नमोऽस्तु पौर्वाङ्गिक-(आपराङ्गिक) आचार्यवन्दनायां श्रीसिद्ध-
भक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(नौ बार नमोकार)

सम्मत्तणाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।

अगुरुलहुमव्वाबाहं, अद्विगुणा होंति सिद्धाणं ॥१॥

तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।

णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥२॥

इच्छामि भंते ! सिद्धभक्ति-काउस्सगो कओ तस्सालोचेउं
सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं अद्विह-कम्मविष्पमुक्काणं
अद्विगुण-संपण्णाणं उहुलोयमत्थयम्मि पयद्वियाणं तव-सिद्धाणं णय-
सिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्त-सिद्धाणं अदीदाणागद-वद्वमाण-कालत्तय-
सिद्धाणं सव्व-सिद्धाणं णिच्च-कालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि

दुक्खकर्क्खओ कम्मकर्क्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं
जिणगुणसंपत्ति होउ मज्जं ।

लघु श्रुतभक्ति

नमोऽस्तु पौर्वाल्लिक-(आपराल्लिक) आचार्यवन्दनायां

श्रीश्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(नौ बार णमोकार)

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस्त्रव्यधिकानि चैव ।

पञ्चाशदष्टौ च सहस्रसंख्यमेतच्छुतं पञ्चपदं नमामि ॥१॥

अरहंत-भासियत्थं, गणहरदेवेहिं गंथियं सम्पं ।

पणमामि भक्तिजुत्तो, सुदणाण-महोवहिं सिरसा ॥२॥

इच्छामि भंते ! सुदभक्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउ अंगोवंग-
पझण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चैव
सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि
णमस्सामि दुक्खकर्क्खओ कम्मकर्क्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं
जिणगुणसंपत्ति होउ मज्जं ।

लघु आचार्यभक्ति

नमोऽस्तु पौर्वाल्लिक-(आपराल्लिक) आचार्यवन्दनायां श्रीआचार्य-
भक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

आर्याछिन्दः

श्रुतजलधिपारगेभ्यः स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्यः ।

सुचरिततपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥१॥

छत्तीस-गुण-समग्गे, पंचविहायारकरण-संदरिसे ।

सिस्साणुगग्ह-कुसले, धम्माइरिये सया वंदे ॥२॥

गुरुभक्ति-संजमेण य, तरंति संसार-सायरं घोरं ।

छिण्णंति अद्वकम्म, जम्मणमरणं ण पावेंति ॥३॥

शार्दूलविक्रीडितच्छन्दः

ये नित्यं ब्रत-मन्त्रहोम-निरताः, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः,

षट्कर्माभि-रतास्तपोधनधनाः साधुक्रियाः साधवः ।

शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाशचन्द्रार्कतेजोऽधिकाः,

मोक्षद्वारकपाट-पाटनभटाः, प्रीणन्तु मां साधवः ॥४॥

अनुष्टुब्धन्दः

गुरवः पान्तु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः ।

चारित्रार्णवगम्भीराः मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥५॥

इच्छामि भंते ! आइरियभक्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउ
सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आयरियाणं
आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्ञायाणं तिरयण-गुणपालण-रयाणं
सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि पूज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खकर्क्खओ
कम्मकर्क्खओ, बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ
मज्जं ।

आरती

पंचपरमेष्ठी की आरती

इहविधि मंगल आरति कीजै, पंच परमपद भज सुख लीजै ॥ टेक ॥
 पहली आरति श्री जिनराजा, भवदधि पार उतार जिहाजा ॥ इह०
 दूसरि आरति सिद्धन केरी, सुमरन करत मिटै भव फेरी ॥ इह०
 तीजी आरति सूरि मुनिन्दा, जनम-मरन दुख दूर करिन्दा ॥ इह०
 चौथी आरति श्री उवझाया, दर्शन देखत पाप पलाया ॥ इह०
 पांचमि आरति साधु तिहारी, कुमति-विनाशन शिव अधिकारी ॥ इह०
 छट्ठी ग्यारह प्रतिमाधारी, श्रावक वंदों आनन्दकारी ॥ इह०
 सातमि आरति श्रीजिनवानी, 'द्यानत' सुरग-मुकति-सुखदानी ॥ इह०

आरती आदिनाथ भगवान की

जय जय श्री आदिजिन, तुम हो तारण तरन ॥
 भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥ टेक॥
 १. प्रभु तुम सर्वार्थसिद्धि से आये । माता मरुदेवी के सुत कहाये ॥
 नाभि नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥ इन्द्र॥
 २. कर्मयुग के प्रथम तुम विधाता । लोकहित मार्ग के आदि ज्ञाता ॥
 अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥ इन्द्र॥
 ३. देखे निलांजना के निधन को । राज छोड़ गये देव वन को ॥
 योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥ इन्द्र॥
 ४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
 सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥ इन्द्र॥
 ५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
 छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥ इन्द्र॥

आरती अजितनाथ भगवान की

जय जय श्री अजितजिन, तुम हो तारण तरन ॥
 भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥ टेक॥
 १. प्रभु तुम अनुत्तर विजयंत से आये । माता विजयासेना सुत कहाये ॥
 जितशत्रु नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥ इन्द्र॥
 २. कर्मयुग के द्वितीय तुम विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
 अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥ इन्द्र॥
 ३. देखा तुमने उल्का के पतन को । राज छोड़ गये देव वन को ॥
 योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥ इन्द्र॥
 ४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
 सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥ इन्द्र॥
 ५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
 छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥ इन्द्र॥

आरती संभवनाथ भगवान की

जय जय श्री संभवजिन, तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम अधो ग्रैवेयक से हो आये, माता सुषैणा के प्रिय सुत कहाये ॥

दृढ़राज नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के तृतीय तुम विधाता, लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने मेघों के विघटन को, राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम, शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे, आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती अभिनंदननाथ भगवान की

जय जय श्री अभिनंदनजिन, तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम अनुत्तर विजयंत से आये । माता सिद्धार्था के सुत कहाये ॥

स्वयंवर नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के तुम चौथे विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने गन्धर्व नगर को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती सुमतिनाथ भगवान की

जय जय श्री सुमतिजिन । तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम अनुत्तर जयन्त से आये । माता मंगला के प्रिय सुत कहाये ॥

मेघरथ नृप नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के पाँचवे तुम विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा जातिस्मरण में स्वयं को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती पद्मप्रभ भगवान की

जय जय श्री पद्मजिन, तुम हो तारण तरन ॥
भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम ऊरध ग्रैवेयक से हो आये । माता सुसीमा के प्रिय सुत कहाये ॥
धरण नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के छठवें तुम विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा जातिस्मरण में स्वयं को । राज छोड़ गये देव वन को ॥
योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती सुपाश्वर्णाथ भगवान की

जय जय श्री सुपाश्वर्जिन, तुम हो तारण तरन ॥
भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम मध्यम ग्रैवेयक से हो आये, माता पृथ्वीसेना सुत कहाये ॥
सुप्रति नृप नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के सातवें तुम विधाता, लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने पतझड़ के मौसम को, राज छोड़ गये देव वन को ॥
योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम, शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे, आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती चन्द्रप्रभ भगवान की

जय जय श्री चन्द्रजिन, तुम हो तारण तरन ॥
भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम अनुत्तर विजयंत से आये । माता लक्ष्मणा के प्रिय सुत कहाये ॥
महासेन नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के तुम आठवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा बिजली की क्षणभंगुरता को । राज छोड़ गये देव वन को ॥
योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती पुष्पदंत भगवान की

जय जय श्री सुविधिजिन । तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम अनुत्तर अपराजित से आये । माता जयरामा के सुत कहाये ॥

सुग्रीव नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के नववें तुम विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने उल्का के पतन को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती शीतलनाथ भगवान की

जय जय श्री शीतलजिन, तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम आरण स्वर्ग से आये । माता सुनन्दा के प्रिय सुत कहाये ॥

दृढ़रथ नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के दसवें तुम विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने हिम के पिघलन को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती श्रेयांसनाथ भगवान की

जय जय श्री श्रेयांसजिन, तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम पुष्पोत्तर से हो आये, माता सुनन्दा के प्रिय सुत कहाये ॥

विष्णु नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के ग्यारहवें तुम विधाता, लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने पतझड़ के मौसम को, राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम, शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे, आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती वासुपूज्य भगवान की

जय जय श्री वासुजिन, तुम हो तारण तरन ॥
भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम महाशुक्र स्वर्ग से आये । माता जयावती के प्रिय सुत कहाये ॥
वसुपूज्य नृप नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के तुम बारहवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा जातिस्मरण में स्वयं को । राज छोड़ गये देव वन को ॥
योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हरे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती विमलनाथ भगवान की

जय जय श्री विमलजिन । तुम हो तारण तरन ॥
भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम सहस्रार स्वर्ग से आये । माता जयश्यामा के सुत कहाये ॥
कृतवर्मा नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के तेरहवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने मेघों के विघटन को । राज छोड़ गये देव वन को ॥
योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हरे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती अनन्तनाथ भगवान की

जय जय श्री अनन्तजिन, तुम हो तारण तरन ॥
भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम पुष्पोत्तर स्वर्ग से आये । माता जयश्यामा के सुत कहाये ॥
सिंहसेन नृप नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के चौदहवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने उल्का के पतन को । राज छोड़ गये देव वन को ॥
योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हरे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती धर्मनाथ भगवान की

जय जय श्री धर्मजिन, तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम सर्वार्थसिद्धि से आये, माता सुप्रभा के प्रिय सुत कहाये ॥

भानु नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के पंद्रहवें विधाता, लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने उल्का के पतन को, राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम, शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे, आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती शांतिनाथ भगवान की

जय जय श्री शांतिजिन, तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम सर्वार्थसिद्धि से आये । माता ऐरा के प्रिय सुत कहाये ॥

विश्वसेन नृप नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के सोलहवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखे दरपन में निज के बिंबों को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ।

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती कुंथुनाथ भगवान की

जय जय श्री कुंथुजिन । तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम सर्वार्थसिद्धि से आये । माता श्रीकांता के सुत कहाये ॥

सूरसेन नृप नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के सत्रहवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा जातिस्मरण में स्वयं को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती अरनाथ भगवान की

जय जय श्री अरनाथजिन, तुम हो तारण तरन ॥
भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम सर्वार्थसिद्धि से आये । माता मित्रसेना के सुत कहाये ॥
सुदर्शन नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के अठारवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने मेघों के विघटन को । राज छोड़ गये देव वन को ॥
योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती मल्लिनाथ भगवान की

जय जय श्री मल्लिजिन, तुम हो तारण तरन ॥
भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम अनुत्तर अपराजित से आये, माता प्रजावती के प्रिय सुत कहाये ॥
कु भ नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के उत्तीर्णवें विधाता, लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा बिजली की क्षणभंगुरता को, राज छोड़ गये देव वन को ॥
योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम, शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे, आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती मुनिसुव्रतनाथ भगवान की

जय जय श्री सुव्रतजिन, तुम हो तारण तरन ॥
भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम प्राणत स्वर्ग से आये । माता सीमा के प्रिय सुत कहाये ॥
सुमित्र नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के बीसवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥
अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा जातिस्मरण में स्वयं को । राज छोड़ गये देव वन को ॥
योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥
सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥
छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती नमिनाथ भगवान की

जय जय श्री नमिजिन । तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम अनुत्तर अपराजित से आये । माता महादेवी के सुत कहाये ॥

विजय नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के इक्कीसवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा जातिस्मरण में स्वयं को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म झारे ॥इन्द्र॥

आरती नेमिनाथ भगवान की

जय जय श्री नेमिजिन, तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम अनुत्तर जयन्त से आये । माता शिवादेवी के प्रिय सुत कहाये ॥

समुद्रविजय नृप नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के बाईसवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा तुमने मेघों के विघटन को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म झारे ॥इन्द्र॥

आरती पाश्वर्नाथ भगवान की

जय जय श्री पाश्वजिन, तुम हो तारण तरन ।

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम प्राणत स्वर्ग से आये । माता वामा के प्रिय सुत कहाये ॥

अश्वसेन नृप नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के तेरेसवें विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखे जातिस्मरण में स्वयं को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म झारे ॥इन्द्र॥

आरती महावीर भगवान की

जय जय श्री वीरजिन, तुम हो तारण तरन ।

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम अच्युत स्वर्ग से आये । माता त्रिसला के प्रिय सुत कहाये ॥

सिद्धार्थ नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग के तुम अंतिम विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखा जातिस्मरण में स्वयं को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ।

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती भरत भगवान की

जय जय श्री भरतजिन, तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम सर्वार्थसिद्धि से आये । माता नंदा के प्रिय सुत कहाये ॥

आदि नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग में हुए तुम विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखे सिरकेश की शुक्लता को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती बाहुबली भगवान की

जय जय श्री बाहुजिन, तुम हो तारण तरन ॥

भविजन प्यारे, इन्द्र धरणेन्द्र स्तुति धर तुम्हारे ॥टेका॥

१. प्रभु तुम सर्वार्थसिद्धि से आये । माता सुनंदा के प्रिय सुत कहाये ॥

आदि नृप के नन्दन, तुमको शत शत वंदन, हों हमारे ॥इन्द्र॥

२. कर्मयुग में हुए तुम विधाता । लोकहित मार्ग के तुम ही ज्ञाता ॥

अंक, अक्षर, कला, तुमसे प्रकटे प्रभो!, शिल्प सारे ॥इन्द्र॥

३. देखे संबंधों की यथार्थता को । राज छोड़ गये देव वन को ॥

योग साधा कठिन, कर्म बंधन गहन, तोड़ डाले ॥इन्द्र॥

४. सिद्ध परमात्म पद पा गये तुम । शंभु ब्रह्मा जिनेश्वर हुए तुम ॥

सिर नवाते हुए, गुणगण गाते हुए, गणधर हारे ॥इन्द्र॥

५. नाथ अपनी चरण भक्ति दीजे । आत्मगुण सिन्धु में मग्न कीजै ॥

छीजे आवागमन, शिवपुर में हो गमन, कर्म ज्ञारे ॥इन्द्र॥

आरती अरहंत भगवान की

ॐ जय जय अविकारी, स्वामी जय जय अविकारी ।

हितकारी भयहारी, शाश्वत स्वविहारी ॥३५ जय ॥टेका॥

काम क्रोध मद लोभ न माया, समरससुखधारी ।

ध्यान तुम्हारा पावन, सकल क्लेशहारी ॥३६ जय०१

हे स्वभावमय जिन तुम चीना, भवसन्तति टारी ।

तुव भूलत भव भटकत, सहत विपत भारी ॥३७ जय०२

परसम्बन्ध बन्ध दुखकारण, करत अहित भारी ।

परमब्रह्म का दर्शन, चहुँगति दुखहारी ॥३८ जय०३

ज्ञानमूर्ति हे सत्य सनातन, मुनिमनसज्ज्वारी ।

निर्विकल्प शिवनायक, शुचिगुणभण्डारी ॥३९ जय०४

बसो-बसो हे सहजज्ञानधन, सहजशान्तिचारी ।

टलैं-टलैं सब पातक, परबलबलधारी ॥४० जय०५

श्री पार्श्वनाथजी की आरती

ॐ जय पारस देवा, प्रभु जय पारस देवा ।

सुर नर मुनि जन तव चरणन की, करते नित सेवा ॥ ॐ जय०

पौष वदी ग्यारसि काशी में, आनन्द अति भारी ।

अश्वसेन घर वामा के उर, लीनों अवतारी ॥ ॐ जय०

श्याम वरण नव हस्त काय पग, उरग लखन सोहे ।

सुरकृत अति अनुपम पट भूषण, सबका मन मोहे ॥ ॐ जय०

जलते देख नाग नागिन को, मंत्र नवकार दिया ।

हरा कमठ का मान ज्ञान का, भान प्रकाश किया ॥ ॐ जय०

मात पिता तुम स्वामी मेरे, आश करूँ किसकी ।

तुम बिन दूजा और न कोई, शरण गहूँ जिसकी ॥ ॐ जय०

तुम परमात्म, तुम अध्यात्म तुम अन्तर्यामी ।

स्वर्ग मोक्ष पदवी के दाता, त्रिभुवन के स्वामी ॥ ॐ जय०

दीनबन्धु दुखहरण जिनेश्वर, तुम ही हो मेरे ।

दो शिवपुर का वास दास यह, द्वार खड़ा तेरे ॥ ॐ जय०

विषय विकार मिटाओ मन का, अरज सुनो दाता ।

‘जियालाल’ कर जोड़ प्रभू के, चरणों चित लाता ॥ ॐ जय०

श्री महावीर स्वामी की आरती

ॐ जय महावीर प्रभो, स्वामी जय महावीर प्रभो ।

कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानन्द विभो ॥ ॐ जय०
सिद्धारथ घर जन्मे, वैभव था भारी, स्वामी वैभव था भारी ।

बाल ब्रह्मचारी व्रत पाल्यो, तपधारी ॥ ॐ जय०
आत्म ज्ञान विरागी, समदृष्टि धारी, स्वामी सम० ।

माया मोह विनाशक, ज्ञान ज्योति जारी ॥ ॐ जय०
जग में पाठ अहिंसा आप ही विस्तार्यो, स्वामी आप० ।

हिंसा पाप मिटाकर, सुधर्म परिचार्यो ॥ ॐ जय०

यह विधि चांदनपुर में, अतिशय दर्शायो, स्वामी अ० ।

ग्वाल मनोरथ पूर्यो, दूध गाय पायो ॥ ॐ जय०
प्राणदान मंत्री को, तुमने प्रभु दीना, स्वामी तुमने० ।

मन्दिर तीन शिखर का, निर्मित है कीना ॥ ॐ जय०
जयपुर नृप भी तेरे, अतिशय के सेवी, स्वामी अति० ।

एक ग्राम तिन दीनों, सेवा हित यह भी ॥ ॐ जय०
जो कोई तेरे दर पर, इच्छा कर आवे, स्वामी इच्छा० ।

होय मनोरथ पूर्यो, संकट मिट जावै ॥ ॐ जय०
निश दिन प्रभु मन्दिर में, जगमग ज्योति जरै, स्वामी ज० ।

‘हरिप्रसाद’ चरणों में, आनन्द मोद भरै ॥ ॐ जय०

श्री शान्तिसागर जी की आरती

शान्तिसागर की गुण आगर की, शुभ मंगल दीप सजाय के ।

मैं आज उतारूँ आरतिया.....॥टेका॥

भीमगौड़ अरु सत्यवती के, गर्भ-विष्णु मुनि आये ।

भोजग्राम में जन्म लिया है, सब जन मंगल गाये ॥

गुरु जी सब जन मंगल गाये.....

न रागी की, न द्वेषी की, शुभ मंगल दीप सजायके ।

मैं आज उतारूँ आरतिया.....॥१॥

सातगौड़ा था नाम तु हारा, सत की ज्योति जलाई ।

देवेन्द्रकीर्ति गुरु से तुमने, मुनि दीक्षा है पाई ॥

गुरु जी मुनि दीक्षा है पाई.....

गृह त्यागी की, वैरागी की, ले दीप सुमन का थाल रे ।

मैं आज उतारूँ आरतिया.....॥२॥

श्रमण संस्कृति गुरु ने बचाई, परिषह डिगा न पाये ।

दिग बरत्व बचाया तुमने, चारित्र चक्रवर्ती कहाये ॥

गुरु जी चारित्र चक्रवर्ती कहाये.....

ऐसे मुनिवर को, ऐसे ऋषिवर को, हो वन्दन बारम्बार रे ।

मैं आज उतारूँ आरतिया.....॥३॥

श्री विद्यासागरजी की आरती

विद्यासागर की, गुण आगर की, शुभ मंगल दीप सजायके ।

मैं आज उतारूँ आरतिया.....॥टेका॥

मल्लप्पा श्री, श्रीमती के गर्भ विष्णु गुरु आये ।

ग्राम सदलगा जन्म लिया है, सब जन मंगल गाये ।

गुरु जी सब जन मंगल गाये ।.....

न रागी की, न द्वेषी की, शुभ मंगल दीप सजायके ।

मैं आज उतारूँ आरतिया.....॥१॥

गुरुवर पाँच महाव्रत धारी, आत्म ब्रह्म विहारी ।

खड्गधार शिव पथ पर चलकर, शिथिलाचार निवारी ॥

गुरु जी शिथिलाचार निवारी ।.....

गृह त्यागी की, वैरागी की, ले दीप सुमन का थाल रे
मैं आज उतारूँ आरतिया.....॥२॥

गुरुवर आज नयन से लखकर, आलौकिक सुख पाया ।
भक्ति भाव से आरति करके, फूला नहीं समाया ॥

गुरु जी फूला नहीं समाया ।.....
ऐसे मुनिवर को, ऐसे ऋषिवर को, हो वन्दन बारम्बार हो ।

मैं आज उतारूँ आरतिया.....॥३॥

श्री सुधासागरजी की आरती

सुधासागर की, गुण आगर की शुभ मङ्गल दीप सजाय के ।
मैं आज उतारूँ आरतिया ॥

रूप श्री श्री शान्तिदेवी के, गर्भ विष्णु मुनि आये ।
ईसर ग्राम में जन्म लिया है, सब जन मङ्गल गाये ॥

मुनिवर सब जन मङ्गल गाये ॥

न रागी की, न द्वेषी की, ले आतम ज्योति जगाय हो ।
मैं आज उतारूँ आरतिया ॥

गुरु उपवास व्रतों के धारी, आतम ब्रह्म विहारी ।
खड्गधार शिव पथ पर चलकर शिथिलाचार निवारी ॥

मुनिवर शिथिलाचार निवारी ॥

गृह त्यागी की, वैरागी की, ले दीप सुमन का थाल हो ॥
मैं आज उतारूँ आरतिया ॥

गुरुवर आज नयन से लखकर, आलौकिक सुख पाया ।
भक्तिभाव से आरति करके, फूला नहीं समाया ॥

मुनिवर फूला नहीं समाया ॥

ऐसे ऋषिवर को, ऐसे मुनिवर को, कर वंदन बारम्बार हो ।
मैं आज उतारूँ आरतिया ॥

सुधासागर की, गुण आगर की, शुभ मंगलदीप सजाय के ।
मैं आज उतारूँ आरतिया ॥

बीस तीर्थकर पूजा

पं. द्यानतराय

दोहा—दीप अढाई मेरु पन अरु तीर्थकर बीस ।
तिन सबकी पूजा करूँ मन वच तन धरि शीस ॥

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थद्वाराः ! अत्र अवतरत अवतरत संवौष्ठ् ।

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थद्वाराः ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थद्वाराः ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

रोल

इन्द्र फणीन्द्र नरेन्द्र, वंद्य पद निर्मल धारी ।
शोभनीक संसार, सार गुण हैं अविकारी ॥

दोहा

क्षीरोदधि सम नीर सौं, पूजों तृष्णा निवार ।
सीमन्धर जिन आदि दे, बीस विदेह मङ्गार ॥

(श्री जिनराज हो भव तारण तरण जिहाज ॥)

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

तीन लोक के जीव पाप-आताप सताये ।
 तिनको साता दाता शीतल वचन सुहाये ॥
 बावन चन्दन सौं जजूँ भ्रमन तपन निरवार ॥ सीमं० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह संसार अपार महासागर जिन स्वामी ।
 तातैं तारे बड़ी भक्ति नौका जग नामी ॥
 तन्दुल अमल सुगंध सौं पूजों तुम गुणसार ॥ सीमं० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

भविक सरोज विकाश निंद्यतमहर रवि से हो ।
 जतिश्रावक आचार कथन को तुम ही बड़े हो ॥
 फूल सुवास अनेक सौं पूजों मदनप्रहार ॥ सीमं० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यः कामबाणविधंसनाय पुष्टं निर्वपामीति स्वाहा ।

काम नाग विषधाम नाश को गरुड़ कहे हो ।
 क्षुधा महादव ज्वाल तास को मेघ लहे हो ॥
 नेवज बहुघृत मिष्ठ सौं पूजों भूखविडार ॥ सीमं० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

उद्यम होन न देत सर्व जग माँहिं भर्यो है ।
 मोह महातम घोर नाश परकाश कर्यो है ॥
 पूजों दीप प्रकाश सौं ज्ञानज्योति करतार ॥ सीमं० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्म आठ सब काठ भार विस्तार निहारा ।
 ध्यान अगनि कर प्रगट सरब कीनो निरवारा ॥
 धूप अनूपम खेवतें दुःख जलै निरधार ॥ सीमं० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

मिथ्यावादी दुष्ट लोभंकार भरे हैं ।
 सबको छिन में जीत जैन के मेरु खड़े हैं ॥
 फल अति उत्तम सौं जजों वांछित फल दातार ॥ सीमं० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आठों दर्व अरघ कर प्रीति धरी है ।
 गणधर इन्द्रनिहूंतैं थुति पूरी न करी है ॥
 ‘द्यानत’ सेवक जानके जग-तैं लेहु निकार ॥ सीमं० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

सोरठा

ज्ञान सुधाकर चन्द, भविक-खेत हित मेघ हो ।
 भ्रम-तम-भान अमन्द तीर्थकर बीसों नमों ॥

चौपाई

सीमंधर सीमंधर स्वामी, जुगमन्धर जुगमन्धर नामी ।
 बाहु बाहु जिन जगजन तारे, करम सुबाहु बाहुबल दारे ॥१॥
 जात सुजातं केवलज्ञानं, स्वयंप्रभु प्रभु स्वयं प्रधानं ।
 ऋषभानन ऋषभानन दोषं, अनन्तवीरज वीरज कोषं ॥२॥

सौरीप्रभ सौरी गुणमालं, सुगुण विशाल विशाल दयालं ।
वज्रधार भवगिरि वज्जर हैं, चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥३॥

भद्रबाहु भद्रनि के करता, श्रीभुजंग भुजंगम हरता ।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं, नेमि प्रभु जस नेमि विराजैं ॥४॥

वीरसेन वीरं जग जानै, महाभद्र महाभद्र बखानै ।
नमों जसोधर जसधर कारी, नमों अजित वीरज बलधारी ॥५॥

धनुष पाँचसै काय विराजैं, आयु कोडि पूरब सब छाजैं ।
समवसरण शोभित जिनराजा, भवजल तारनतरन जिहाजा ॥६॥

सम्यक् रत्नत्रय निधि दानी, लोकालोक प्रकाशक ज्ञानी ।
शतइन्द्रनि कर वंदित सोहैं, सुर नर पशु सबके मन मोहैं ॥७॥

दोहा

तुमको पूजैं वंदना, करैं धन्य नर सोय ।
'द्यानत' सरधा मन धरै, सो भी धर्म होय ॥

इत्याशीर्वादः





Since 1973

Computer Re-Setting by :

Jeetendra Patni

M. 98290 71922

21.08.2020



W



जैन साहित्य एवं मंदिर उपकरण

हमारे यहाँ सभी प्रकार का दिगंबर जैन एवं भारत के सभी प्रमुख धार्मिक संस्थानों का सत साहित्य एवं मंदिर में उपयोग हेतु उपकरण और प्रभावना में बाटने योग्य सामग्री सीमित मूल्य पर उपलब्ध है

(पांडुशिला .सिंघासन, छत्र, चवर प्रातिहार्य, जाप माला .मंगल कलश, पूजा बर्तन .चंदोवा, तोरण .झारी ,
(शुद्ध चांदी के उपकरण आर्डर पर निर्मित किया जाता है)

नोट:-हमारे यहाँ घरो में उपयोग हेतु साधुओ के उपयोग हेतु.

**अनुष्ठानों में उपयोग हेतु शुद्ध धी भी आर्डर पर
उपलब्ध कराया जाता है**



SOURABH KUMAR JAIN

9993602663

77229 83010

SOURABHJN1 989@GMAIL.COM



जय जिनेंद्र

श्री



शुद्ध घी

देशी गाय का शुद्ध घी

शुद्धता पूर्वक बनाया गया देशी घी

साधु व्रती एवं धार्मिक अनुष्ठानों को ध्यान
में रखकर बनाया गया शुद्ध देशी घी
पहले इस्तेमाल करें फिर विश्वास करें

संपर्क सूत्र

CONTACT FOR ORDER
CALL AND WHATSAPP
9993602663
7722983010

Contact for
order

Call and
whatsapp

9993602663
7722983010

















9993602663





















area











णमोकार महामंत्र

णमो अरिहंताणं

णमो सिद्धाणं

णमो आवरिचाणं

णमो उवज्ञायणं

णमो लोए तवताहूण

एसो पंच णमोकारो, तव-पावर्पणासणो ॥

मंगलाणं च तवेति, पद्मं हृष्टं मंगलं ॥















जी महाराज











5feet



6.5

22/29

18/29



5.5



P. 11

Q. 2

A. 21







































































पीतल डिब्बा सेट





REDMI NOTE 5 PRO
MI DUAL CAMERA



WEIGHT

42040

Essae

DS-852















WEIGHT

57565







दिगंबर जैन ग्रंथों की पीडीएफ
के लिये हमारे whatapp नंबर
पर संपर्क करें

09993602663

सौरभ सागर (इंदौर)